मार्गदर्शक सूत्र-संहिता

(वैचारिक, संवैधानिक, राजनैतिक)

[भाग - 2]

बजरंग मुनि जी के 72 वर्षों तक अनवरत चलने वाले
शोध कार्यों का संक्षिप्त सूत्र-संकलन

मार्गदर्शक सामाजिक शोध संस्थान
42, मारूति लाइफ स्टाईल, कोटा रोड, रायपुर-492001

मार्गदर्शक सूत्र-संहिता

(न्यायिक और आपराधिक, सामाजिक, धार्मिक)

[भाग-2]

बजरंग मुनि

प्रकाशक :
मार्गदर्शक प्रकाशन
42, मारूति लाइफ स्टाईल, कोटा रोड,
रायपुर-492001
मो. : 7869250001
E-mail : support@margdarshak.info

संस्करण : पहला
अगस्त, 2024

प्रतियां : 500

मुद्रक : महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी-221010

सहयोग राशि : 101.00 (एक सौ एक)

भूमिका

विश्व व्यवस्था चार इकाइयों को मिलाकर बनती है—1. व्यक्ति, 2. परिवार, 3. राष्ट्र और 4. समाज। वर्तमान विश्व व्यवस्था की समीक्षा करें, तो हम पाते हैं कि दुनिया भौतिक विकास की ओर बहुत तेज गति से बढ़ रही है और उतनी ही तेज गति से नैतिक पतन की ओर। शिक्षा बहुत तेज गति से बढ़ रही है और उतनी ही तेजी से ज्ञान घट रहा है। दुनिया में निष्कर्ष निकालने में विचार-मंथन की भूमिका कम होती जा रही है और विचार-प्रचार की अधिक। दुनिया में धर्म और राज्य के नाम पर जितने अपराध और हत्याएं हो रही हैं, उतने अपराधियों के द्वारा नहीं। यदि हम भारत की आंतरिक व्यवस्था की समीक्षा करें, तो पाते हैं कि प्राचीन समय में भारत विचारों का निर्यात करता था, आज वैचारिक धरातल पर इतना कंगाल हो गया है कि वह हर मामले में विचारों का आयात कर रहा है। भारत के आम लोगों में समझदारी घटती जा रही है, जिसके कारण धूर्त लोग हर मामले में मजबूत होते जा रहे हैं और शरीफ लोग या तो असहाय हैं अथवा राज्य आश्रित। राज्य व्यवस्था के मामले में भी भारत विदेशों के घिसे-पिटे लोकतंत्र का अंधानुकरण कर लोक स्वराज्य की दिशा में कोई पहल नहीं कर पा रहा है। यदि हम परिवारों की समीक्षा करें, तो परिवार व्यवस्था लगातार टूट रही है।

पहले संयुक्त परिवार होते थे, अब माता-पिता, पति-पत्नी और बच्चे भी एक साथ नहीं रह पा रहे हैं। परिवारों में संपत्ति के झगड़े बढ़ रहे हैं। यदि हम व्यक्ति के स्वभाव का आकलन करें, तो दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति में हिंसा और स्वार्थ बढ़ता जा रहा है। इस हिंसा और स्वार्थ के कारण लगातार सभी क्षेत्रों में अराजकता का वातावरण बढ़ रहा है। इस तरह हम कुल मिलाकर समीक्षा करें, तो हमारी समाज व्यवस्था लगातार कमजोर होती जा रही है। इस कमजोर होती जा रही व्यवस्था को कलयुग कहकर भले ही हम खुद को संतुष्ट कर लें, किन्तु सच्चाई यह है कि हम इस मामले में बहुत पीछे गये हैं।

बजरंग मुनि जी ने बचपन से ही इन सब परिस्थितियों का अनुभव किया। उन्होंने इन परिस्थितियों के कारण भी खोजे और उनके समाधान पर भी चिंतन-मंथन किया। हमारी सामाजिक व्यवस्था धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक, व्यक्तिगत, वैश्विक सहित अनेक भागों में बंटी हुई है। इन सब भागों की समस्याएं भी अलग-अलग हैं और उनके समाधान भी अलग-अलग हैं। ये सभी समस्याएं अलग-अलग होते हुए भी समाधान के मामले में एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं। इसलिए मुनि जी ने जो भी चिन्तन किया, जो भी प्रयोग किये और जो भी निष्कर्ष निकाले, उन सबको अलग-अलग स्वरूप में रखने के बाद भी एकाकार रूप देने का प्रयास किया है। उनके प्रयास के परिणामस्वरूप ही 'मार्गदर्शक सूत्र संहिता' का यह पहला भाग आपके सामने है। पुस्तक में कुल 9 विषयों के 3 भाग हैं। ये सभी अलग-अलग अस्तित्व रखते हैं, फिर भी लक्ष्य एक ही है और वह है वर्तमान विश्व की गिरती हुई

सामाजिक व्यवस्था। उसके कारण और उसका समाधान ही इसका सार तत्व है। समाज को कलियुग से सतयुग की दिशा देने में यह पुस्तक गिलहरी की भी भूमिका अदा कर सके, तो हम अपने प्रयास को सफल मानेंगे।

❒

संपादन एवं संकलनकर्ता

- *पंकज अग्रवाल, पुत्र श्री कन्हैयालाल अग्रवाल, अंबिकापुर (छत्तीसगढ़)*
  मो. 94252 55551
- *ब्रिजेश राय, पुत्र श्री राजेंद्र राय, ऋषिकेश (उत्तराखंड)*
  मो. 96274 84171
- *तारकेश्वर सिंह, पुत्र स्व. वीरेन्द्र प्रताप सिंह, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)*
  मो. 9450243008
- *राजपाल मिश्र, पुत्र स्व. राजेन्द्र मिश्र, गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)*
  मो. 70076 67261
- *संजय तांती, पुत्र स्व. सत्यनारायन तांती, मुंगेर (बिहार)*
  मो. 83493 26292
- *मोहन गुप्ता पुत्र स्व. सरयू साव, रामानुजगंज (छत्तीसगढ़)*
  मो. 89594 99831
- *ज्ञानेन्द्र आर्य, पुत्र श्री केशवमुनि आर्य, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)*
  मो. 8318621282
- *राकेश शर्मा, पुत्र श्री सीताराम शर्मा, जहानाबाद (बिहार)*
  मो. 93256 83604
- *प्रमोद केसरी पुत्र स्व. राम लखन केशरी रामानुजगंज (छत्तीसगढ़)*
  मो. 93408 90792
- *नरेन्द्र सिंह, पुत्र श्री रघुनाथ सिंह, सिरोही, मेरठ (उत्तर प्रदेश)*
  मो. 90124 32074

अनुक्रमणिका

1.	न्यायिक और आपराधिक	7-90
2.	सामाजिक	91-236
3.	धार्मिक	237-336

❐

1

न्यायिक और आपराधिक

400 न्यायपालिका

4000. न्यायपालिका को यह विशेष अधिकार प्राप्त है कि यदि संविधान का कोई प्रावधान व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के विरुद्ध है, तो न्यायपालिका उस प्रावधान को रद्द कर सकती है। न्यायपालिका संविधान के किसी अन्य प्रावधान की समीक्षा नहीं कर सकती। यदि किसी व्यक्ति की असीम स्वतंत्रता पर कहीं से कोई खतरा हो, तो न्यायपालिका उसमें हस्तक्षेप कर सकती है। न्यायपालिका न न्याय को परिभाषित कर सकती है, न जनहित को। जनहित याचिकाओं में न्यायपालिका की सक्रियता असंवैधानिक है।

4001. न्यायपालिका का यह संवैधानिक दायित्व है कि वह मौलिक अधिकारों के विरुद्ध संविधान, संविधान के विरुद्ध कानून, कानून के विरुद्ध आदेश और आदेश के विरुद्ध क्रिया को अवैध घोषित कर दे।

4002. न्यायपालिका को सामान्य परिस्थितियों में कभी भी विधायी या कार्यपालिक आदेश नहीं देना चाहिए। वर्तमान समय में भारत की

न्यायपालिका न्यायिक कार्य छोड़कर कार्यपालिक या विधायी आदेश ही अधिक दे रही है। न्यायपालिका सिर्फ व्यक्ति को न्याय दे सकती है। न्यायपालिका किसी नागरिक या व्यक्ति समूह को न्याय नहीं दे सकती। नागरिक के मामले में जस्टिस एकार्डिंग टू लॉ न्यायपालिका की अंतिम सीमा है, जिसे न्यायपालिका को याद रखना चाहिए।

4003. न्यायपालिका किसी अवैध क्रिया को शून्य घोषित कर सकती है, किन्तु कोई संशोधन या परिवर्तन नहीं कर सकती। न्यायालयों को न्याय में अवरोध मानकर नये बन रहे कानूनों को न्यायालय की परिधि से बाहर रखने की परम्परा खतरनाक है। इसकी अपेक्षा न्यायालयों की कार्य-प्रणाली को ऐसा परिवर्तित करें कि न्यायालय अपराध नियंत्रण में सक्षम भूमिका प्रस्तुत करे।

4004. न्यायपालिका के तीन काम होते हैं- 1. व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा चाहे वह संविधान द्वारा ही खतरे में क्यों न आ जाये, 2. संविधान के विरुद्ध बनने वाले कानूनों से संविधान की सुरक्षा, 3. कानून के अनुसार न्याय की पहचान। न्यायपालिका किसी संविधान संशोधन को मूल ढांचे के विरुद्ध घोषित करके शून्य तो घोषित कर सकती है किन्तु उसकी जगह कोई व्यवस्था नहीं दे सकती।

4005. न्यायपालिका का आदेश किसी ऊपर की इकाई में नहीं ले जाया जा सकता। न तो विधायिका उसकी समीक्षा कर सकती है, न ही जनता। चूंकि जनता न्यायपालिका को प्रत्यक्ष नियुक्त नहीं करती, इसलिए जनता का कोई नियंत्रण भी उस पर नहीं है। यदि न्यायपालिका प्रशासनिक आदेश देने लगेगी और वह आदेश

गलत होगा, तो उसके संशोधन का न लोक के पास कोई मार्ग है और न ही तंत्र के पास। यह स्थिति लोकतंत्र के विरुद्ध है।

4006. सूचना और शिकायत में अंतर करने की आवश्यकता है। न्यायपालिका इन दोनों के बीच का फर्क और उसके कारण बढ़ रही अव्यवस्था के विषय में नहीं सोचती। हर सूचना को शिकायत मानकर कार्यवाही करना उचित नहीं है।

4007. न्यायपालिका के दायित्वों में सबसे मुख्य तो यह है कि वह व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की संरक्षक होती है। यदि कोई भी अन्य, चाहे वह सरकार ही क्यों न हो, वह संसद ही क्यों न हो और चाहे वह भारतीय संविधान का कोई अंश ही क्यों न हो, यदि किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों के विरुद्ध आचरण करता है तो न्यायपालिका का उक्त आचरण के विरुद्ध व्यक्ति को सुरक्षा देना दायित्व है। इस संबंध में उसे असीमित अधिकार प्राप्त हैं, किन्तु व्यक्ति के संवैधानिक अधिकारों की पूर्ति में न्यायपालिका संविधान या कानून के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य है। जहां तक व्यक्ति के सामाजिक अधिकारों का प्रश्न है, तो ऐसे अधिकारों की पूर्ति में हस्तक्षेप का न सरकार को अधिकार है और न ही न्यायालय को।

4008. न्यायपालिका में भी भ्रष्टाचार अन्य इकाईयों की तुलना में कुछ ही कम होगा, यह अलग बात है कि न्यायपालिका की तानाशाही शक्तियों के कारण उसका भ्रष्टाचार चर्चा में नहीं आता। यदि न्यायपालिका में कुछ लोग वास्तव में भ्रष्टाचार दूर करना चाहते हैं, तो उन्हें सबसे पहले अधिकारों का विकेन्द्रीकरण करने की पहल करनी चाहिए।

4009. यदि आम जनता का न्यायिक प्रक्रिया पर से विश्वास घट रहा है, तो उसका दोषी कौन है ? क्या आज तक न्यायपालिका ने कभी सीबीआई अथवा किसी अन्य न्यायिक एजेन्सी द्वारा जांच कराने की पहल की कि पिछले पाँच वर्षों में दुर्दान्त अपराधों में निर्दोष सिद्ध अपराधियों में से कितने प्रतिशत वास्तविक अपराधी थे और कितने प्रतिशत वास्तविक निर्दोष। यदि ऐसी जांच हो, तो न्यायालय की आँख खुल जायेगी और लोकतंत्र बच जायेगा। अन्यथा यदि देश में अव्यवस्था या तानाशाही का वातावरण बना, तो न्यायपालिका भी अवश्य कटघरे में खड़ी होगी।

4010. प्रस्तावित संविधान में मैंने यह संशोधन किया है कि न्यायालय का कोई भी व्यय भार राज्य वहन नहीं करे और न्यायालय अपने खर्च की व्यवस्था अपनी दण्ड व्यवस्था के आधार पर ही करे। किन्तु न्यायाधीशों के वेतन-भत्ते वे स्वयं तय न कर सकें।

4011. पंचायत दोनों पक्षों की सहमति से ही कोई निर्णय करेगी किन्तु न्यायालय में कोई एक पक्ष भी जा सकता है। पंचायत के निर्णय सिर्फ सुझाव तक सीमित होते हैं और न्यायपालिका के निर्णय बाध्यकारी होते हैं।

4012. आज भारत के आम नागरिक के चरित्र में गिरावट आयी है। न्यायाधीश भी इसी समाज से आता है, अतः उसमें भी चरित्र का अभाव स्वाभाविक है। न्यायालय को उत्तर देना चाहिए कि उसके दागी न्यायाधीशों पर कार्यवाही की त्वरित प्रक्रिया और समय-सीमा निर्धारित करने का काम कौन करेगा ?

4013. समाज न्यायालय को सम्मान देता, है इसका यह अर्थ नहीं कि न्यायाधीश अपने को 'न्यायाधीश' मानने लगें। वे तो एक फैसला करने वाले अधिकारी मात्र हैं।

401 न्याय और व्यवस्था

4014. प्रजातंत्र में न्याय और व्यवस्था एक-दूसरे के पूरक भी होते हैं और नियंत्रक भी। न तो न्यायपालिका को न्याय करने का एक-छत्र अधिकार है और न ही विधायिका को विधान बनाने का। दोनों पर एक-दूसरे का अप्रत्यक्ष सामंजस्य भी है और नियंत्रण भी।

4015. न्यायपालिका का कर्तव्य था कि वह न्याय को मजबूत करने के लिए व्यवस्था में उचित संशोधन की सलाह देती। यदि व्यवस्था अपनी खामियों को दूर करने के लिए उक्त संशोधन नहीं करती, तो व्यवस्था को उक्त संशोधन करने के लिए उचित व्यवस्था का मार्ग प्रशस्त करती। न्याय का दायित्व न्यायपालिका को व्यवस्था से दूर हटकर अपने हाथ में ही नहीं लेना चाहिए। न्यायपालिका न्याय प्रदान करने के लिए इतनी आतुर है, कि उसे न व्यवस्था की परवाह है और न वह प्रतीक्षा करती है। इसके परिणामस्वरूप व्यवस्था कमजोर होती जा रही है। 'न्यायालय सर्वोच्च' की प्रतिस्पर्धा का भाव मन से बिल्कुल निकालना होगा तभी भारत में लोकतंत्र सुरक्षित रह सकता है। इस देश की जनता आतुरता से प्रतीक्षा कर रही है कि न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका एक-दूसरे के प्रतिस्पर्धी न होकर एक-दूसरे के पूरक बनकर कार्य करें।

4016. लोकतंत्र में राज्य से ऊपर कोई व्यक्ति या व्यक्ति समूह निर्णायक आदेश दाता नहीं होता, इसलिए संविधान के अन्तर्गत बनने वाली व्यवस्था का स्वरूप ऐसा होता है कि न्याय तथा व्यवस्था का संतुलन बना रहे। इसी संतुलन के अंतर्गत विधायिका न्याय को परिभाषित करती है, न्यायपालिका उस परिभाषा के अनुसार न्याय

घोषित करती है तथा कार्यपालिका न्यायालय द्वारा घोषित न्याय को कार्यान्वित करती है।

4017. न्यायपालिका को किसी विचारधारा से प्रतिबद्ध नहीं होना चाहिए, किन्तु स्वतंत्रता के बाद न्यायपालिका वामपंथी विचारों की तरफ झुक गयी और बाद में तो पूरी तरह जे एन यू संस्कृति से जुड़ गयी। अभी भी न्यायपालिका जे एन यू संस्कृति से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पायी है किन्तु मुक्त हो रही है। न्यायपालिका को न्याय और व्यवस्था के बीच संतुलन बनाना चाहिए।

4018. व्यक्ति को उसकी असीम स्वतंत्रता का निर्बाध मिलना न्याय है, और उस स्वतंत्रता में आने वाली बाधाओं का दूर होना व्यवस्था। न्याय के लिए न्यायपालिका होती है और व्यवस्था के लिए कार्यपालिका। न्यायपालिका व्यक्ति के व्यक्तिगत न्याय की व्यवस्था स्वयं तथा व्यक्ति के न्याय में आने वाली बाधाओं को दूर करने में व्यवस्था की सहायक है। न्यायपालिका न्याय नहीं दे सकती। विधायिका न्याय को परिभाषित करती है, न्यायपालिका न्याय-अन्याय का परीक्षण करके, उसे अलग-अलग करती है और कार्यपालिका को निर्देशित करती है। न्याय देना कार्यपालिका का काम है।

4019. गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी, उत्पादकों या महिलाओं को न्याय मांगने या न्याय के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा देना, असामाजिक कार्य माना जाना चाहिए, क्योंकि इससे वर्ग-विद्वेष बढ़ता है।

4020. मेरे विचार में न्याय और व्यवस्था एक-दूसरे के पूरक होते हैं। कुछ विद्वानों की राय में व्यवस्था न्याय की पूरक होती है, अर्थात न्याय समाज की आवश्यकता है और व्यवस्था आवश्यकता की

पूर्ति। लेकिन मैं विद्वानों की राय से सहमत नहीं हूँ, क्योंकि अगर व्यवस्था पर न्याय एक बोझ बन जाये, तो स्वाभाविक है कि व्यवस्था कमजोर होगी और परिणाम होगा 'अन्याय'। दुर्भाग्य से न्यायपालिका अपने को न्याय प्रदाता मानने लगी है, जबकि न्याय पूरा तंत्र मिलकर देता है।

4021. न्याय बदला लेने की भावना को मजबूत करता है, जबकि व्यवस्था भूतकाल को भूलकर वर्तमान की ठीक-ठीक चिंता करने की सलाह देती है। व्यवस्था का टूटना, न्याय को भी कमजोर करता है, क्योंकि भूख बहुत लग जाये और पूर्ति न हो, तो भूख का कोई समाधान नहीं है।

4022. न्यायपालिका इतना भी नहीं समझती, कि न्याय और व्यवस्था एक-दूसरे के पूरक हैं तथा अपराधी का निर्दोष छूटना समाज के साथ अन्याय है, भले ही उसमें गलती न्यायालय की हो या व्यवस्था की। इसलिए अब न्याय पर आम आदमी को विश्वास ही नहीं रहा।

4023. बात बात में न्यायालय की अवमानना की धमकी देना भी लोकतांत्रिक आतंकवाद माना जा सकता है।

4024. भारत की न्याय व्यवस्था में भी परिवार और समाज का प्रत्यक्ष हस्तक्षेप होना चाहिए।

4025. अपराधी के निर्दोष छूटने का दायित्व पुलिस पर डालने वाले जज को यदि कुछ दिनों के लिए थानेदार बना दिया जाये तो उसके मुकदमे पहले वाले थानेदार की अपेक्षा अधिक असफल होंगे। न्यायालय तथा पुलिस न्याय की रक्षा नहीं करते, बल्कि कानून की रक्षा करते हैं, क्योंकि वह कानून के अनुसार न्याय (Justice

According to Law) से बंधे हैं। न्याय की रक्षा करना विधायिका का दायित्व है, क्योंकि वह (Law According to Justice) न्याय के अनुसार कानून से प्रतिबद्ध है। भारत में न्याय और सुरक्षा का सारा दोष पुलिस और न्यायालय पर डालने की परम्परा चल पड़ी है, जबकि वास्तविक दोष इनका न होकर विधायिका का है। (1) न्याय और व्यवस्था एक-दूसरे के पूरक हैं। (2) न्याय और व्यवस्था के बीच समन्वय, सहयोग और सामंजस्य होना चाहिए। यदि न्याय या आदर्श अधिक होगा और व्यवस्था कम, तो अव्यवस्था उत्पन्न होगी और अन्ततः इसका परिणाम अन्याय होगा। यदि व्यवस्था मजबूत होगी और न्याय कमजोर होगा, तो तानाशाही होगी और इसका परिणाम भी अन्याय होगा।

4026. सिद्धान्त और आदर्श न्याय प्राप्ति की इच्छा पैदा करते हैं, जिसकी पूर्ति व्यवस्था से होती है। पिछले पचास वर्षों में व्यवस्था की क्षमता का आकलन किए बिना अति उच्च और महत्वाकांक्षी आदर्श स्थापित किया गया। इससे व्यवस्था कमजोर होती गयी। इस अव्यवस्था को दूर करने हेतु व्यवस्था की वर्तमान क्षमता का ठीक आकलन करके तदनुसार आदर्श और सिद्धान्तों को संशोधित करना चाहिए। अपराधों की नई परिभाषा इस हेतु उचित प्रयास हो सकता है।

4027. लोकतंत्र का अर्थ होता है ‘लोकनियंत्रित तंत्र’। लोकतंत्र में कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका पूरी तरह समकक्ष होती हैं। सन् 1950 में तानाशाह नेहरू ने न्यायपालिका के अधिकारों में कमी करके, संसदीय लोकतंत्र के नाम पर संसद को सर्वोच्च घोषित कर दिया। सन् 1973 में केशवानन्द भारती

प्रकरण के माध्यम से न्यायपालिका ने, सरकार के उस निर्णय को बदलकर विधायिका पर अपनी वरीयता प्राप्त कर ली। सन् 1975 में आपातकाल लगाकर इन्दिरा गांधी ने घोषित किया, कि जो प्रधानमंत्री कहेगा वही लोकतंत्र होगा। कुछ वर्ष बाद पी.एन भगवती ने जनहित याचिकाओं के माध्यम से कहा, कि न्यायपालिका सर्वोच्च है और न्यायपालिका जो कहे वही लोकतंत्र है। उसके बाद धीरे-धीरे न्यायिक सक्रियता बढ़ती गयी, और मनमोहन सिंह के कार्यकाल में न्यायिक तानाशाही में बदल गई। नरेन्द्र मोदी के बाद अब सरकार और न्यायपालिका के बीच बराबरी का टकराव शुरू हुआ है। फिर भी अभी न्यायपालिका ही मजबूत है, भविष्य में क्या होगा पता नहीं। कहीं ऐसा न हो जाए कि जो मोदी जो कहें वही लोकतंत्र की स्थिति बन जाए। अभी लोकतंत्र का भविष्य अस्पष्ट है। न्यायालय की कार्य-प्रणाली के परिवर्तन में प्रजातंत्र की गलत परिभाषा बाधक है। प्रजातंत्र की सही परिभाषा तो अपराध नियंत्रण में सहायक होती है।

4028. न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका को एक-दूसरे का नियंत्रक भी होना चाहिए और परस्पर पूरक भी। अपराध नियंत्रण में दोनों की भूमिका सहायक की होनी चाहिए। न्यायपालिका के लोग न्यायालय में कार्यपालिका के लोगों के साथ जैसा दुर्व्यवहार और अपमानित करते रहते हैं, वह उचित नहीं है।

4029. न्याय के साथ तीन बातें जुड़ी होती हैंः- (1) अपराधी में भय (2) पीड़ित को संतोष (3) दण्ड का समाज पर प्रभाव। न्यायपालिका को न्याय और व्यवस्था का अन्तर समझना चाहिए।

4030. लोकतंत्र में न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका एक-

दूसरे के सहायक भी होते हैं तथा नियंत्रक भी। यदि न्यायपालिका मजबूत होगी, तो अव्यवस्था बढ़ेगी और विधायिका मजबूत होगी तो तानाशाही का खतरा बढ़ेगा।

4031. पूरे भारत में व्यक्ति को न्यायपालिका के माध्यम से न्याय दिलाने के प्रयास का एक फैशन-सा चल पड़ा है। इस फैशन के कारण अव्यवस्था पैदा हो रही है।

403 न्यायपालिका और कानून

4032. सामान्यतया न्यायपालिका कानून के अनुसार न्याय करती है। यदि न्याय और कानून आपस में विरोधी हो जायें, तो न्यायपालिका संविधान के अनुसार उक्त कानून की समीक्षा करती है। किन्तु यदि कभी संविधान और न्याय भी आपस में टकरा जायें तब न्यायपालिका प्राकृतिक न्याय अर्थात मौलिक अधिकार सुरक्षा के पक्ष में संविधान की भी समीक्षा कर सकती है। यदि फिर भी टकराव बना रहे, तब अंतिम निर्णय जनमत संग्रह से ही हो सकता है, जो सबके लिए बाध्यकारी होगा।

4033. न्यायपालिका न्याय और सुरक्षा के लिए है। उसे तब तक कानून की सुरक्षा करनी चाहिए, जब तक वह कानून न्याय और सुरक्षा के लिए बाधक नहीं है। यदि कोई कानून बाधक है, तो न्यायपालिका का कर्तव्य है कि वह विधायिका से ऐसे कानूनों में संशोधन का प्रस्ताव करे।

4034. न्यायपालिका कानून की सुरक्षा के लिए बाध्य तो है, किन्तु न्याय और सुरक्षा की कीमत पर नहीं। यदि न्यायपालिका भी कानून की सुरक्षा करते हुए अपराधी को निर्दोष घोषित करती है, तो उसका यह कार्य समाज के लिए अपराध माना जाना चाहिए, भले ही वह

कितना ही कानून सम्मत क्यों न हो। न्यायपालिका भी कानून की रक्षा में इतना अधिक बढ़-चढ़ कर कार्य कर रही है कि उसे न्याय और सुरक्षा की परवाह ही नहीं। गैरकानूनी और अपराध का भेद मिटा दिया गया है। आम लोगों का कानून पर से विश्वास उठता जा रहा है और हिंसा पर विश्वास बढ़ रहा है।

4035. न्यायपालिका विधायिका द्वारा संविधान के विपरीत बनाये गये कानूनों की समीक्षा करके, उन्हें गलत या सही घोषित कर सकती है, किन्तु न्यायालय को किसी कानून में स्वतः संशोधन का अधिकार नहीं है। न्यायालय जब चाहे, जिस सीमा तक चाहे, उस सीमा तक कानून बनाने और लागू कराने तक की भूमिका निभा रहा है।

4036. यदि हम पूरे देश की बात करें, तो न्यायपालिका तथा पुलिस की स्थिति साफ दिखती है। जो बाहुबली हैं वे कानून से ऊपर हैं। उन्हें न न्यायालय दण्ड दे पाता है, न ही पुलिस कुछ कर पाती है। इसलिए ऐसी विशेष परिस्थिति में न्यायपालिका और कार्यपालिका को मिलकर गुप्तचर न्यायिक प्रणाली का प्रयोग करना चाहिए।

4037. पिछले 70 वर्षों में न्यायपालिका ने समाधान कम किये और समस्याएं अधिक पैदा की। न्यायपालिका को समझना चाहिए था कि वह कानून के अनुसार न्याय घोषित करने तक सीमित हैं। 'न्याय को परिभाषित' विधायिका करती है और क्रियान्वित कार्यपालिका। न्यायालय न्याय को परिभाषित करने पर भी सक्रिय हो गया और क्रियान्वित करवाने में भी।

4038. जाहिरा शेख, जेसिका लाल जैसे मामलों में न्यायपालिका ने सीधे न्याय देने की एक गलत परम्परा स्थापित की है, जो भविष्य में

न्याय और कानून के सम्बन्धों के लचीलेपन पर बुरा प्रभाव डाल सकती है। न्यायपालिका भी विधायिका की तरह लोकप्रियता की लाइन पकड़ ले तो यह लोकतंत्र के लिए घातक होगा।

4039. सफल न्याय को चार कसौटियों पर खरा उतरना चाहिए (1) समय-सीमा, (2) निष्पक्षता, (3) पारदर्शिता, (4) परिणाम मूलक। कम से कम न्यायपालिका को अपनी प्राथमिकता तो समझनी ही चाहिए कि उसकी सर्वोच्च प्राथमिकता न्याय की रक्षा करना है, और यदि कानून न्याय में बाधक है, तो उसे चाहिए कि वह विधायिका को ऐसे कानूनों को ठीक करने की सलाह दे।

4040. न्यायपालिका को न्याय और कानून के बीच बढ़ती दूरी का समाधान सोचना चाहिए, न कि कानून का अंध समर्थन करना चाहिए। किसी अपराधी का न्यायालय से निर्दोष सिद्ध होना, कानून के समक्ष न्याय की पराजय है, जो ऐसी फर्जी मुठभेडों की आवश्यकता के पक्ष में जाती है, चाहे पंजाब हो, उत्तर प्रदेश हो या नक्सलवाद या कोई और। ऐसी घटनाओं के अतीत में अपराधियों के न्यायालय से निर्दोष छूटने का इतिहास अवश्य मिलेगा।

4041. अपराधी को दण्ड देना न्याय है और न्याय के लिए किसी प्रक्रिया का पालन कानून है। यदि कानून न्याय देने में पर्याप्त भूमिका न अपना सके, तो कानून की समीक्षा और संशोधन तो हो सकता है, किन्तु न्याय की काट-छांट या संशोधन संभव नहीं। न्याय और व्यवस्था के लिए कानून बनते हैं। यदि न्याय और कानून दो विपरीत धाराओं पर चलने लगें तो न्याय का स्थान कानून से ऊपर होता है, क्योंकि न्याय के लिए कानून बनते हैं, कानून के लिए न्याय नहीं। वर्तमान समय में न्याय और सुरक्षा से कानून लगातार

दूर से अधिक दूर होते जा रहा है। विघायिका कानूनों को न्याय और सुरक्षा की दिशा में संशोधित न करके न्याय और सुरक्षा को ही कमजोर करती जा रही है।

4042. न्यायपालिका कानून के साथ खड़ी होने के लिए बाध्य है, किन्तु न्यायालय न्याय और कानून के बीच कानून के पक्ष में विशेष रुचि लेने के लिए बाध्य नहीं है। न्यायालय न्याय और व्यवस्था में से, किसी एक के पक्ष में यदि किसी तरफ भी ज्यादा झुक जाया जाये तो परिणाम खराब होते हैं, क्योंकि न्याय और व्यवस्था का संतुलन ही उचित होता है।

4043. लोकतांत्रिक मान्यता में न्यायालयों की कानून के अनुसार ही न्याय देने की सीमा नियत है। वर्तमान दूषित लोकतंत्र में न्यायालय मनमानी कर रहा है। विधायिका की उच्छृंखलता पर नियंत्रण के लिए तो ऐसी मनमानी स्वागत योग्य है। किन्तु यदि वह मनमानी किसी सीमा से आगे निकल जाये, तो समस्या हो जाती है।

4044. कार्यपालिका से कानून का पालन कराना विधायिका और न्यायपालिका का संयुक्त काम है, न्यायपालिका को इसे प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं बनाना चाहिए।

405 न्यायपालिका और अपराध नियंत्रण

4050. न्यायपालिका अपराध नियंत्रण करने में अपनी भूमिका को भूल गई है। वह पुलिस के द्वारा व्यक्ति के अधिकार हनन में व्यक्ति (विशेषकर पुलिस की दृष्टि में अपराधी) के अधिकारों की प्रहरी की भूमिका में आ गई है। मैं स्पष्ट कर दूँ कि भारत की न्यायपालिका स्वयं को अपराधों और सरकार के बीच तटस्थ रूप में स्थापित करने का पूरा प्रयास करती है। इसका अर्थ होता है

कि न्यायपालिका गंभीर अपराध में अपराधियों के लिए ढाल बन जाती है।

4051. अन्य विभागों की अपेक्षा न्यायपालिका में अच्छे विद्वान और ईमानदार लोगों का प्रतिशत बहुत अधिक है, परन्तु अपराध नियंत्रण में उसकी असफल भूमिका का कारण न्यायपालिका की संवैधानिक कार्यप्रणाली में है न कि व्यक्ति में। न्यायालयों की कार्य-प्रणाली में सीमा से अधिक लचीलापन अपराधियों का कवच है।

4052. भारत की न्याय-प्रणाली दुनिया में सबसे कमजोर है। यहां अपराधों की तुलना में सजाएं एक प्रतिशत मिलती हैं। नब्बे प्रतिशत अपराध तो थाने तक भी नहीं पहुँच पाते। दस प्रतिशत में एक को सजा होती है।

4053. न्यायपालिका नक्सलवाद को गंभीर खतरा नहीं समझ रही अथवा वह इसे इतना गंभीर मानती है कि वह हाथ डालना ही नहीं चाहती। न्यायपालिका इस समस्या के समाधान में सहयोग करे, तो भारतीय संवैधानिक व्यवस्था पर आये एक खतरे से मुक्ति मिल जायेगी। न्यायपालिका को यह अधिकार नहीं कि वह लोकतंत्र की अन्य दो इकाईयों को सलाह दे कि वे नक्सलवाद से कैसे निपटें। नक्सलवाद की पहचान के कारण और समाधान की नीति बनाना विधायिका का काम है, नीति का कार्यान्वयन कार्यपालिका का और उस नीति से संविधान का उल्लंघन न हो, यह समीक्षा करना न्यायपालिका का।

4054. सर्वोच्च न्यायालय का वर्तमान निर्णय भी उचित है, जिसके अनुसार जेल में बन्द व्यक्ति के चुनाव लड़ने तथा संसद या विधान

मंडल का प्रतिनिधित्व करने के प्रयत्न पर रोक लगाई गई है। साथ ही दो वर्ष तक के दण्ड योग्य अपराध सिद्ध जन प्रतिनिधि का प्रतिनिधित्व समाप्त मानने का भी आदेश लागू हो गया है। सर्वोच्च न्यायालय का यह निर्णय अपराधी नेता गठजोड़ पर एक भारी कुठाराघात है।

4055. जो व्यक्ति न्यायालय में सच बताकर अपराध स्वीकार करे, उसकी अपेक्षा झूठ बोलकर दण्ड से बचने का प्रयास करने वाले को कम से कम दो गुना अधिक दण्ड देना चाहिए।

4056. यदि समाज व्यक्ति के चार मौलिक अधिकारों के साथ कोई छेड़छाड़ करे, तभी न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है अन्यथा नहीं। समाज के सामाजिक मामलों में न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता। समाज न्यायालय से ऊपर होता है न कि नीचे।

4057. तंत्र से जुड़े तीनों भाग अपराधियों के प्रति लोकतांत्रिक बने रहने का शत-प्रतिशत प्रयत्न करते है, किन्तु अपराध पीड़ित व्यक्ति को न्याय के लिए समाज पर छोड़ देते है।

4058. वर्तमान समय में कुल मिलाकर जितने न्यायाधीश हैं, वे यदि वास्तविक अपराधों के निपटारों तक स्वयं को सीमित कर ले तो संभव है कि छः महीने में निपटारा कर देने का लक्ष्य आसानी से प्राप्त हो सकता है।

4059. न्यायालय आज तक यह नहीं समझ सका कि किसी अपराधी का निर्दोष छूट जाना भी पीड़ित के साथ अन्याय है। न्यायालय को चाहिए था कि वह पुलिस को न्याय सहायक माने और पुलिस न्यायालय की संयुक्त भूमिका को अपराध नियंत्रण का आधार किन्तु न्यायालय अपने को अपराधी और पुलिस के बीच में

न्यायकर्ता के रूप में स्थापित करने लगा, जिसका परिणाम हुआ कि अपराधियों का बहुमत निर्दोष सिद्ध होकर छूटने लगा। यह सिद्धांत पूरी तरह गलत है कि जब तक कोई व्यक्ति अन्तिम रूप से न्यायालय द्वारा दोषी सिद्ध न हो जाय, तब तक निरपराध है। वास्तव में उसे संदिग्ध अपराधी माना जाना चाहिए।

4060. सामाजिक नियम परिपालन में किये गये अपराधों की अपेक्षा बुरी नीयत से किये गये अपराधों का दण्ड बहुत ज्यादा होना चाहिए, किन्तु दिखता है कि न्यायालय सामाजिक बुराइयों के कारण बिना नीयत का आकलन किये दोनों अपराधों में भेद नहीं करता।

4061. तंत्र, न्यायिक सिद्धांत में ऐसा संशोधन करे कि न कोई अपराधी बच सके, न कोई निरपराध दंडित हो।

4062. न्यायालय अन्य काम छोड़कर यदि दस प्रतिशत वास्तविक अपराधों को चिन्हित करके उन्हें प्राथमिकता के आधार पर देखना शुरू कर दे, तो वास्तविक अपराधों की रोकथाम हो सकती है।

4063. मेरे विचार से स्वतंत्रता के बाद सुरक्षा और न्याय में भारी गिरावट आयी है। प्रत्येक व्यक्ति के चरित्र में भी गिरावट आयी है, साथ ही साथ प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत या पारिवारिक सामाजिक मामलों में भी उचित-अनुचित का निर्णय करने की शक्ति में भी गिरावट आयी है।

4064. सरकार अपराधियों को दण्ड देने में या तो बहुत बिलम्ब कर रही है या दण्ड मिल नहीं रहा है और इस आधार पर समाज के प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं कानून हाथ में लेकर तत्काल दंड देने के प्रति विश्वास बढ़ रहा है।

4065. कानून भी ऐसे बनाये जाते हैं कि आपराधिक मामलों में दोष सिद्धि

का भार अपराधी पर न डालकर पुलिस पर डाल दिया जाता है, तो दहेज कानून, छुआछुत कानून जैसे बेमतलब के कानूनों के उल्लंघन में दोष सिद्धि का भार अपराधी के जिम्मे होता है। सरकार जो बजट बनाती है, उसमें भी पुलिस और कोर्ट को मिलाकर सिर्फ एक प्रतिशत ही खर्च का प्रावधान होता है।

4066. न्यायपालिका ने आज तक यह कभी नहीं माना कि किसी अपराधी का निर्दोष छूटना अन्याय है तथा इस अन्याय में उसकी भी कोई भूमिका है। न्यायपालिका यह कहकर पल्ला झाड़ लेती है कि पुलिस अपराध सिद्ध ही नहीं कर सकी, तो हम दण्ड कैसे दें।

407 न्यायपालिका, विधायिका

4070. न्यायपालिका न्यायिक मामलों में आदेश देने का पूरा अधिकार रखती है, किन्तु न्यायालय को प्रशासनिक या विधायी मामलों में बहुत सतर्कता पूर्वक अति विशेष परिस्थिति में ही कोई आदेश देना चाहिए। न्यायपालिका को मेरी सलाह है कि विधायिका के कार्यों में अनावश्यक हस्तक्षेप न करके बहुत सोच-समझकर ही हस्तक्षेप करे, तो विधायिका को न्यायपालिका के खिलाफ वातावरण बनाने का अवसर नहीं मिलेगा।

4071. न्यायपालिका, विधायिका के मामलों में लगातार हस्तक्षेप कर रही है, बल्कि मेरा तो यह मानना है कि वह सारी सीमाएं तोड़कर हस्तक्षेप कर रही है। फिर भी विधायिका ने जन विश्वास खो दिया है। विधायिका द्वारा लोकतंत्र के मूलस्वरूप को लगातार अपने पक्ष में झुकाने की कोशिश की गई। यह कोशिश संविधान बनाते समय ही शुरू हो गई थी।

4072. मनमोहन सिंह का कार्यकाल भारत का सर्वश्रेष्ठ लोकतांत्रिक कार्यकाल कहा जा सकता है। श्री सिंह ने न्यायपालिका तथा कार्यपालिका को अधिकतम स्वतंत्रता दी। उन्होंने हमेशा कोशिश भी की, कि विधायिका किसी भी स्थिति में न्यायपालिका की सीमा न तोड़े। न्यायपालिका ने कई बार प्रधानमंत्री तथा राष्ट्रपति के अधिकारों का अतिक्रमण भी किया, तो मनमोहन सिंह अन्दर-अन्दर दुखी होते हुए भी चुप रहे। ऐसे बढ़े मनोबल में हिम्मत करके सर्वोच्च न्यायालय ने एक और ऐतिहासिक फैसला दे दिया कि न्यायपालिका को यह अधिकार है कि वह संसद द्वारा अनुसूची नौ में डाले गये कानूनों की इस आधार पर समीक्षा कर सकती है कि उक्त कानून या संविधान संशोधन कहीं संविधान के मौलिक ढांचे के विपरीत न हो। इस तरह किया गया न्यायिक निर्णय अन्तिम होगा। विदित हो कि तब तक के कानून के अनुसार अनुसुची नौ में डाले गये कानूनों में न्यायालय विचार नहीं कर सकती थी । इस प्रकार न्यायपालिका ने संसद सर्वोच्च की धारणा को समाप्त कर दिया। न्यायालय का यह निर्णय तो ठीक है, लेकिन अन्य अनेक मामलों में न्यायालय सीमाएं तोड़ रहा है। जब से न्यायपालिका ने विधायिका की बदनामी का लाभ उठाकर कुछ ऐसे निर्णय लेने शुरु किये, जो विधायिका की उच्छृंखलता पर लगाम लगा सकें, तभी से न्यायपालिका का मनोबल बढ़ने लगा तथा उसका स्वाभिमान जगता गया।

4073. जो व्यक्ति पुलिस की दृष्टि में आरोपी है, किन्तु न्यायालय द्वारा निर्दोष सिद्ध नहीं है, तब तक न दोषी है, न निर्दोष बल्कि वह संदिग्ध अपराधी है। तात्कालिक रूप से न्यायपालिका को यह

सिद्धांत मानकर चलना चाहिए कि गम्भीर आपराधिक घटनाओं में पुलिस द्वारा घोषित संदिग्ध अपराधी दोष सिद्धि तक निर्दोष न होकर संदिग्ध है।

4074. सुरक्षा और न्याय न्यायपालिका तथा पुलिस का संयुक्त दायित्व है, किसी एक का नहीं। अपराधी को दण्ड मिलना प्राकृतिक न्याय है और न्यायपालिका तथा पुलिस उक्त दण्ड की लोकतांत्रिक प्रक्रिया। यदि अपराधी दण्डित नहीं हुआ, तो यह न्यायालय तथा पुलिस दोनों की संयुक्त असफलता है।

4075. न्यायपालिका ने कार्यपालिका तथा विशेषकर पुलिस वालों के साथ बहुत ही अनुचित व्यवहार शुरु किया। न्यायपालिका ने पुलिस और कार्यपालिका को न्याय सहायक न मानकर, एक पक्षकार माना, जो गलत था। स्पष्ट दिखता है कि न्यायपालिका जजों की कमी से उतनी ओवर लोडेड नहीं है, जितनी उसके द्वारा अपना काम छोड़कर विधायिका या कार्यपालिका के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप से।

4076. विधायिका की भूमिका ब्राह्मण के समान होनी चाहिए, किन्तु विधायिका ने राजा के समान अपनी भूमिका बना ली, जो गलत है।

4077. राजनैतिक दल एक समय इतने बदनाम हो चुके थे कि यदि कोई असंवैधानिक तरीके से भी इनकी स्वेच्छाचारिता में कटौती करता, तो वह जनता को भगवान से कम नहीं दिखता था। ऐसे ही समय का लाभ उठाकर चुनाव आयोग तथा न्यायपालिका ने कुछ असंवैधानिक कदम उठाये, जिनका जनता ने भरपूर स्वागत किया।

4078. न्यायपालिका, विधायिका की बदनामी का लाभ उठाकर स्वयं सर्वोच्च बनने का प्रयत्न कर रही है। विधायिका यह प्रश्न नहीं

उठा सकती, किन्तु न्यायपालिका को इसके लिए स्वतः संज्ञान लेना चाहिए। विधायिका और अपराधियों का गठजोड़ केवल इसलिए हुआ कि विधायिका ने सारी शक्ति अपने पास समेट ली। यदि न्यायपालिका ने भी वैसा ही किया, तो क्या न्यायपालिका अपराधी गठजोड़ नहीं होगा?

4079. विधायिका तो समाज के प्रति सीधे भी उत्तरदायी है। न्यायपालिका किसके प्रति उत्तरदायी होगी? यदि सर्वोच्च न्यायालय का कोई सर्वोच्च न्यायाधीश भ्रष्टाचार या मनमानी करने लगा, तो क्या होगा? इन प्रश्नों का उत्तर स्वयं न्यायपालिका को ही सोचना चाहिए। लोकतंत्र में यदि संसद सर्वोच्च का विचार घातक है, तो न्यायालय सर्वोच्च भी कम घातक नहीं।

4080. विधायिका और न्यायपालिका के बीच अधिकारों की एक स्पष्ट विभाजन रेखा है कि न्यायपालिका Justice According to Law की सीमाओं में इस प्रकार बंधी है कि वह सिर्फ कानून की व्याख्या करने तक सीमित है, न्याय की व्याख्या करने का उसे कोई अधिकार नहीं। विधायिका Law According to Justice के आधार पर न्याय की व्याख्या तो कर सकती है किन्तु कानून का नहीं।

4081. न्यायपालिका को 'न्यायपालिका सर्वोच्च' के लोक लुभावन नारे से बचना चाहिए। न्यायपालिका सर्वोच्च है, ऐसा न तो सच है न ही न्यायपालिका को इस प्रतिस्पर्धा में पड़ना चाहिए।

4082. विधायिका गलत है, तभी तो न्यायापालिका के असंवैधानिक कदमों को भी पूरा-पूरा जन समर्थन मिला। इस जन समर्थन को न्यायपालिका ने अपना समर्थन मान लिया, जो गलत था। जन

समर्थन विधायिका के विरुद्ध था, न कि न्यायालय का समर्थन।

4083. यदि विधायिका अपना काम ठीक से नहीं करती, तो उसकी समीक्षा का अधिकार जनता का है, न कि न्यायालय का। भ्रष्टाचार रोकना न्यायालय का काम नहीं है। न्यायपालिका कानून के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य है।

4084. विधायिका में बैठा व्यक्ति तानाशाह भी हो सकता है, जबकि न्यायपालिका में बैठा व्यक्ति तानाशाह नहीं हो सकता। क्योंकि सर्वोच्च पदाधिकारी न्यायपालिका में अल्पकाल के लिए ही हो सकता है, जबकि विधायिका में तो अपने मरने के बाद की अपनी पीढ़ियों के लिए स्थान सुरक्षित कर जाते हैं।

4085. जब न्याय और कानून आपस में टकराते हैं, तब ऐसी टकराहट को विधायिका ही दूर कर सकती है, न्यायपालिका नहीं। न्यायिक सिद्धांत बनाना न्यायपालिका का कार्य नहीं है, बल्कि विधायिका का कार्य है, किन्तु अनेक मामलों में न्यायिक हस्तक्षेप करके न्यायपालिका न्यायिक सिद्धांत बना रही है।

4086. विधायिका जनता के प्रति भी उत्तरदायी है और न्यायपालिका के प्रति भी। परन्तु न्यायपालिका किसके प्रति उत्तरदायी है? (1) विधायिका, (2) कार्यपालिका, (3) जनता। यदि हम कहें कि न्यायपालिका संविधान के प्रति उत्तरदायी है, तो विधायिका और कार्यपालिका भी तो न्यायपालिका के समान ही है।

4087. विधायिका ने सन 1973 तक हमेशा ही अपनी सीमाओं का अतिक्रमण किया। न्यायपालिका ने विधायिका पर अंकुश न लगाया होता, तो पता नहीं विधायिका क्या करती। सन 1985 के बाद न्यायपालिका ने भी उसी तरह अपनी सीमाओं का

अतिक्रमण किया, जो अब तक जारी है। न्यायपालिका ने तो स्वयं को संविधान सभा तक मानना शुरू कर दिया।

409 न्यायाधीश

4090. किसी न्यायाधीश की व्यक्तिगत धारणा भी भिन्न हो सकती है और सोच भी, किन्तु न्यायाधीश को ऐसी धारणाएं कुर्सी पर बैठ कर व्यक्त करने का अधिकार नहीं है।

4091. किसी भी संवैधानिक पद पर बैठा हुआ कोई व्यक्ति संवैधानिक दायित्व पूरा करने में दया नहीं कर सकता, क्योंकि दया कोई व्यक्ति अपने व्यक्तिगत स्तर पर कर सकता है, संवैधानिक स्तर पर नहीं। वैसे भी न्यायाधीश को न्याय करने का अधिकार नहीं है, न्यायाधीश तो कानून के अनुसार ही न्याय कर सकता है, कानून से हटकर नहीं।

4092. अधिकांश लोग अपने आचरण पर पर्दा डाले रखने के लिए बहुचर्चित मामलों को ज्यादा उछालते हैं, भले ही उनका स्वयं का आचरण उसी प्रकार का हो। उन्हें डर होता है कि सच बात बोल देने से वे स्वयं भी संदेह के घेरे में आ जाएंगे या बहस में पड़ जाएंगे। इसलिए वे ऐसी हवा में बहना अपने लिए लाभदायक समझते हैं। यही कारण है कि सब प्रकार के नेता, सामाजिक कार्यकर्ता या उच्चपदाधिकारी भी मीडिया द्वारा उछाले गए किसी प्रकरण विशेष के साथ जुड़कर बहती गंगा में हाथ धो लेना चाहते हैं। न्यायाधीश भी ऐसे मामलों में स्वयं को झंझट में नहीं डालना चाहते और उसी बहाव में बहकर व्यवस्था के लिए संकट खड़ा कर देते हैं।

4093. मैंने अनुभव किया कि अधिकांश न्यायाधीशों, जिनमें उच्चस्तरीय न्यायाधीश भी शामिल हैं, उनको यह तक जानकारी नहीं कि

अपराध, गैरकानूनी तथा अनैतिक में क्या फर्क होता है। प्राकृतिक न्याय सिद्धान्त है कि जानबूझकर की गई हत्या, लापरवाही से होने वाली मृत्यु तथा बिना गलती के होने वाली दुर्घटना के बीच फर्क होता है। किसी पुलिस वाले ने बिना किसी स्वार्थ के किसी व्यक्ति की हत्या कर दी, तो स्वार्थ से की गयी हत्या और इस हत्या में अंतर समझना चाहिए, जो न्यायपालिका नहीं समझ पाती।

4094. कोई न कोई एक नई प्रणाली विकसित की जानी चाहिए, जो न्यायाधीशों की नियुक्ति कर सके। न वर्तमान कॉलेजियम सिस्टम उचित है, न ही वह पुरानी प्रणाली, जिसमें सिर्फ कार्यपालिका ही न्यायाधीशों की नियुक्ति करती रही है।

4095. सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों को भी गंभीरता पूर्वक सोचना चाहिए कि कहीं उनकी सोच परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था को कमजोर करने में राजनेताओं की सहायक तो नहीं बन रही है।

410 व्यवस्था

4100. यदि किसी परिवार के पेट से ही योग्य व्यक्ति का जन्म होना शाश्वत नियम है, तो ऐसे नियम को अस्वीकार करना ही होगा, भले ही वह नियम भगवान का ही बनाया हुआ क्यों न हो।

4101. जो लोग स्वतः चरित्रवान होते हैं, उनके लिए किसी व्यवस्था का निर्माण नहीं होता। व्यवस्था तो सिर्फ उन्हीं के लिए बनती है, जो स्वतः ठीक से आचरण नहीं करते हैं।

4102. बुद्ध ने व्यक्तिगत आचरण के विषय में जो कुछ कहा, वह अनुकरण योग्य है। पारिवारिक व्यवस्था के संबंध में उन्होने कुछ कहा ही नहीं और सामाजिक व्यवस्था के संबंध में उनका कथन अनुपयुक्त है। हो सकता है कि बुद्ध के कथन उस समय की देशकाल परिस्थिति

के अनुसार उपयुक्त ही हों, किन्तु वर्तमान देशकाल परिस्थिति के अनुसार उनमें व्यापक संशोधन की आवश्यकता है।

4103. मैं न समाजवाद का पक्षधर हूँ, न साम्यवाद का। मैं तो समाज व्यवस्था का पक्षधर हूँ, जिसका अर्थ है लोक नियंत्रित तंत्र।

4104. वैसे तो सम्पूर्ण विश्व की ही राजनैतिक व्यवस्था समाज को धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग आदि आधारों पर बांटकर स्वयं को बिल्लियों के बीच बन्दर की भूमिका में स्थापित रखती है, किन्तु भारत में तो सम्पूर्ण व्यवस्था इस बांटो और राज करो की नीति को ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानती है।

4105. प्रश्न उठता है कि हमारी कानूनी न्याय व्यवस्था किसी अपराधी को बार-बार निर्दोष घोषित कर दे और हमारी पुलिस गैर कानूनी तरीके से किसी अपराधी को फर्जी मुठभेड़ में मारकर समुचित दण्ड दे दे, तो विचारणीय प्रश्न यह है कि हम कानूनी न्याय व्यवस्था का समर्थन करें या गैर-कानूनी न्याय व्यवस्था का। जब कानून ही न्याय और सुरक्षा में बाधक बनने लगे, तो जनता और प्रशासन ने मिलकर कानून की जगह न्याय और सुरक्षा को अधिक महत्व दिया। विचारणीय प्रश्न यह है कि कानून यदि सुरक्षा देने में विफल हो जाये, विधायिका ऐसे बाधक कानूनों में फेर-बदल को तैयार न हो और न्यायपालिका भी कानूनों से पूरी तरह चिपक जाये तो समाज क्या करे?

4106. कानून से समाज बदलने की राजनेताओं की भूख बढ़ती ही जा रही है। इसका विरोध होना ही चाहिए।

4107. वर्तमान दुनिया में चार प्रकार की व्यवस्थाएँ हैं:- (क) व्यक्ति प्रधान, (ख) धर्म प्रधान, (ग) राज्य प्रधान, (घ) समाज प्रधान।

लोकतांत्रिक देशों की व्यवस्था में व्यक्ति महत्वपूर्ण है। इस्लामी देशों में धर्म महत्वपूर्ण है। साम्यवादी देशों में राज्य शक्तिशाली है। भारत में सबका घालमेल है। समाज किसी व्यवस्था में प्रमुख नहीं। भारत के राजनैतिक, संवैधानिक स्वरूप में समाज प्रमुख होना चाहिए, धर्म, राज्य, और व्यक्ति सहायक।

4108. समाज विरोधी तत्वों पर समाज के नियंत्रण तथा समाज के सुचारू रूप से संचालन हेतु बनाई गयी प्रक्रिया को व्यवस्था कहते हैं। व्यवस्था चार प्रकार की होती है- (1) सुव्यवस्था, (2) कुव्यवस्था, (3) अव्यवस्था, (4) स्वव्यवस्था। तानाशाही में या तो सुव्यवस्था होती है या कुव्यवस्था। न अव्यवस्था सम्भव है न स्वव्यवस्था। लोकतंत्र में या तो अव्यवस्था होती है या स्वव्यवस्था। इसमें न सुव्यवस्था सम्भव है, न कुव्यवस्था। लोक स्वराज्य में न कुव्यस्था होती है, न अव्यवस्था सिर्फ सुव्यवस्था या स्व व्यवस्था ही सम्भव है।

4109. लोकतंत्र की दो स्थितियां होती हैंः- (1) लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति, (2) लोकतांत्रिक शासन-पद्धति। पश्चिम के देशों में जीवन-पद्धति से लोकतंत्र आया, किन्तु भारत, पाकिस्तान, इराक, अफगानिस्तान, बांग्लादेश आदि में शासन-पद्धति में। जीवन-पद्धति का लोकतंत्र व्यवस्था को मजबूत करता है और शासन-पद्धति का लोकतंत्र कमजोर। ऐसी लोकतांत्रिक शासन-पद्धति में अव्यवस्था ही होती है। न सुव्यवस्था न कुव्यवस्था। लम्बे समय की अव्यवस्था तानाशाही का आधार बनती है। पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, अफगानिस्तान, इराक, नेपाल आदि देशों का यही हाल है। भारत भी ऐसे खतरे की ओर लगातार बढ़ रहा है।

आदर्श स्थिति में अव्यवस्था, कुव्यवस्था से कम खराब होती है और स्वव्यवस्था, सुव्यवस्था से अच्छी। व्यावहारिक धरातल पर अव्यवस्था, कुव्यवस्था से अधिक खराब होती है और सुव्यवस्था, स्वव्यवस्था से अच्छी।

4110. भारत में मनमोहन सिंह के समय लोकतांत्रिक शासन-पद्धति रही है, जिसके लक्षण अव्यवस्था के रूप में स्पष्ट हैं और परिणाम है तानाशाही का खतरा। ऐसे खतरे का समाधान लोकतंत्र को शासन-पद्धति के स्थान पर जीवन-पद्धति की ओर ले जाना है, जिसका मार्ग सुशासन के स्थान पर स्वशासन अर्थात् लोकस्वराज्य है। इसे ही सहभागी लोकतंत्र या स्वशासन भी कहा जाता है।

4111. तानाशाही में विकास की गति अन्य प्रकार की व्यवस्थाओं की तुलना में बहुत तेज होती है। तानाशाही में शासक, मालिक और जनता गुलाम होती है। तानाशाही में व्यक्ति को राष्ट्रीय सम्पत्ति माना जाता है, तो राष्ट्र को अपनी सम्पत्ति। लोकतंत्र और लोकस्वराज्य में व्यक्ति समाज का अंग माना जाता है। चीन, उत्तर कोरिया में व्यक्ति को राष्ट्रीय सम्पत्ति माना जाता है, मुस्लिम देशों में धार्मिक सम्पत्ति। चीन, उत्तरकोरिया, वियतनाम तथा मुस्लिम देशों में व्यक्ति के मौलिक अधिकार नहीं होते, भारत सहित लोकतांत्रिक देशों में होते हैं।

4112. तानाशाही अच्छा समाधान होते हुए भी अच्छी व्यवस्था नहीं मानी जाती। तानाशाही बीमारी की दवा तो है, किन्तु टानिक नहीं। लोकतंत्र असफल होते हुए भी तानाशाही से अच्छा माना जाता है। तानाशाही और लोकतंत्र का क्रम चलता रहता है। भारत में बढ़ती अव्यवस्था के कारण जनता ने तानाशाही को पसंद किया। भारत

धीरे-धीरे सुव्यवस्था की दिशा में बढ़ रहा है। लोकतंत्र स्वराज्य व्यवस्थाओं का कोई स्थाई समाधान नहीं होता है, क्योंकि लोकतंत्र का परिणाम अव्यवस्था और समाधान तानाशाही है। इन सभी समस्याओं का स्थाई समाधान 'लोक स्वराज्य' है। वर्तमान विश्व में यह नारा प्रचलित होना चाहिए:- "हमें सुराज नहीं, स्वराज चाहिए"।

411 न्यायपालिका की सर्वोच्चता

4113. न्यायपालिका ने केशवानंद भारती केस में सिर्फ एक के बहुमत से संसद सर्वोच्च के नारे पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया। न्यायपालिका ने बहुत अच्छा कार्य किया, लेकिन बाद में न्यायिक सर्वोच्च्ता के प्रयत्न ने सब गुड़ गोबर कर दिया।

4114. न्यायपालिका ने किसी पुलिस वाले पर टिप्पणी की वह एक स्वाभाविक प्रक्रिया थी किन्तु कुछ न्यायाधीश पुलिस विभाग पर ही टिप्पणियां करने लगें और यह करते करते वे विधायिका को भी लपेटने लग जाये तो यह उसका अतिक्रमण है। न्यायपालिका ऐसा संदेश देने की कोशिश कर रही है कि विधायिका द्वारा अपना काम ठीक से न करने के कारण न्यायिक सक्रियता आवश्यक है। प्रश्न उठता है कि यदि न्यायालय अपना काम ठीक से न कर सके अथवा उनकी नीयत खराब हो जाये, तब उसकी समीक्षा कौन करेगा? कैसे करेगा?

4115. सुप्रीम कोर्ट को अपराध पीड़ित और अपराधी के बीच अपराधी को संदिग्ध मानना चाहिए किन्तु वह निरपराध मानता है। पुलिस और अपराधी के बीच न्यायालय को तटस्थ रहना चाहिए। किन्तु न्यायालय तटस्थ न होकर भी पुलिस को अविश्वसनीय मानता है।

4116. उच्चतम न्यायालय सिर्फ न्यायपालिका में उच्चतम है, न कि सम्पूर्ण शासन व्यवस्था में। न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका लगभग समकक्ष हैं, किन्तु उच्चतम शब्द ने न्यायपालिका में उच्चतम होने का भ्रम पैदा कर दिया है।

4117. प्रश्न यह नहीं है कि समस्याओं का समाधान क्या है? प्रश्न यह है कि समाधान करने वाले की नीयत क्या है? यदि समाधान करने वाले की नीयत ही ठीक न हो, तो समाधान हो ही नहीं सकता। वर्तमान भारत में समाधान करने वालों की नीयत खराब दिखती है।

4118. भारत ने समाजवादी देशों की नकल करके तो सामाजिक जीवन में अधिकाधिक हस्तक्षेप के कानून बना दिये और पूंजीवादी देशों की नकल करके जटिल न्यायिक प्रक्रिया निर्धारित कर दी। इसके कारण बहुत भ्रम और अव्यवस्था हो रही है।

4119. मेरे विचार से न्यायिक सक्रियता में न्यायपालिका से न्यायिक तानाशाही का खतरा है, व्यक्ति की उच्छृंखलता का नहीं। जबकि, विधायिका में विधायी तानाशाही का खतरा नहीं है, व्यक्ति की तानाशाही का है। इसलिए दोनों इकाइयों में संतुलन के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है।

4120. अपराध में अपराधी की नीयत अवश्य परिभाषित होनी चाहिए, किन्तु हम देखते हैं कि जो न्यायालय बीस-तीस हत्याएं करने के बाद भी अपराधी को दंडित नहीं कर पाता या निर्दोष घोषित कर देता है, उस अपराधी को कोई पुलिस वाला अवैध तरीके से मार दे, तब न्यायिक सक्रियता देखते ही बनती है।

4121. जब से भारत में न्यायिक सक्रियता बढ़नी शुरू हुई है, तब से न्यायपालिका में भ्रष्टाचार भी बढ़ना शुरू हुआ। यह स्वाभाविक

है कि भ्रष्ट दुकानदार किसी भी संभावित बदनामी से नहीं डरता। न्यायपालिका भी ऐसे ही दुकानदार के समान सारी बदनामी झेलते हुए भी ढीठ बनी हुई है। न्यायपालिका के भ्रष्टाचार की समीक्षा कैसे होगी। न्यायपालिका ने तो स्वयं को लौह कवच से सुरक्षित कर रखा है।

412 लोकतंत्र और न्यायपालिका

4122. लोकतंत्र की यह विशेषता होती है कि वहां लोक पर तंत्र का अनुशासन होता है, शासन नहीं। आश्चर्य है कि भारत में शासन और अनुशासन का अन्तर ही लोग नहीं समझते। लोकतंत्र की दूसरी विशेषता यह होती है कि वहां न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका का Check and balance System हो। भारत में इन तीनों के बीच में छीना-झपटी का वातावरण है। विधायिका तो शुरू से ही संसद सर्वोच्च का नारा देती रही। संसद सर्वोच्च पर संवैधानिक अंकुश लगाने में विफल न्यायपालिका ने न्यायालय सर्वोच्च का ऐसा नारा दिया कि भारत की संपूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था ही चौपट हो गई।

4123. जनहित में भी न्यायालय यदि सीधा कदम उठाता है, तो व्यवस्था कमजोर होगी और कहीं न कहीं लोकतंत्र की विश्वसनीयता घटेगी। परिणाम हुआ कि भारत में लोकतंत्र का नाम मजबूत होता चला गया और लोकतंत्र लगातार कमजोर होता रहा। आज तो भारत की स्थिति यह है कि यदि कोई तानाशाह पूरी सत्ता अपने हाथ में लेकर उसे लोकतंत्र कह दे, तो या तो भारतीय उसे ही लोकंतत्र कह देंगे या पश्चिम की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करेंगे।

4124. केशवानन्द भारती प्रकरण में तेरह में से सात जजों ने यह माना कि संसद को मूल अधिकारों में संशोधन के असीम अधिकार प्राप्त नहीं हैं। उस समय सिर्फ एक जज इधर से उधर हो जाता, तो भारत के संसदीय लोकतंत्र का सम्पूर्ण ढांचा इधर से उधर हो गया होता। इसलिए मेरे विचार में न्यायिक तानाशाही कोई अच्छी स्थिति नहीं मानी जा सकती, जैसा अभी भारत में है।

4125. क्या भारत का लोकतंत्र इतने कमजोर धागे से लटका है कि एक व्यक्ति के इधर-उधर होते ही पूरे लोकतंत्र का भविष्य बदल सकता है? क्या भारत का लोकतंत्र 140 करोंड़ व्यक्तियों पर निर्भर न होकर कुछ मुट्ठी भर नेताओं या न्यायाधीशों की सूझबूझ या दया पर टिका है?

413 न्याय

4130. दो इकाइयों के बीच विवाद की स्थिति में उचित-अनुचित का निर्णय ही न्याय होता है। वर्तमान न्याय प्रणाली सिर्फ पारदर्शिता तक सीमित है। वह न तो समयबद्ध है, न ही निष्पक्ष और न ही व्यवस्था की पूरक। न्याय का अर्थ सामाजिक न्याय नहीं होता। सामाजिक न्याय तो समाज ही दे सकता है। सामाजिक न्याय देना सरकार का स्वैच्छिक कर्तव्य है, किन्तु किसी रूप में दायित्व नहीं।

4131. न्याय होना ही पर्याप्त नहीं, न्याय दिखना भी चाहिए। यदि लोकतंत्र को खूंटी पर टांग कर न्यायपालिका ने जल्दबाजी की, तो न्याय तो शीघ्र मिलेगा, किन्तु व्यवस्था पूरी तरह चौपट हो जायगी। यदि व्यवस्था चौपट हुई, तो न्याय कैसे होगा? दूसरी ओर न्याय दिखने के नाम पर यदि समय पर न्याय मिले ही नहीं, तो बिलंबित न्याय

भी अप्रत्यक्ष रूप से अन्याय ही माना जाएगा, जैसा वर्तमान में हो रहा है।

4132. न्याय प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तिगत अधिकार होता है, सामूहिक अधिकार नहीं। तंत्र प्रत्येक व्यक्ति के प्राकृतिक न्याय की सुरक्षा की गारण्टी देता है। इसलिए व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार की सुरक्षा तंत्र का दायित्व होता है।

4133. मूल अधिकारों को छोड़कर अन्य किसी भी मामले में न्यायालय को न्याय करने की स्वतंत्रता नहीं है।

4134. न्याय बहुत विलम्ब से हो रहा है। इस विलम्ब के लिए विधायिका ही सर्वप्रथम दोषी है। उसने अनावश्यक कानूनों की संख्या बढ़ा-बढ़ाकर पुलिस और न्यायालय को ओवर लोडेड किया। आदर्श स्थिति तो यह होगी कि व्यवस्था की क्षमता को देखकर न्याय की भूख पैदा की जाय।

4135. प्रत्येक व्यक्ति को एक-दूसरे के साथ अपनी क्षमता और योग्यतानुसार प्रतिस्पर्धा करने की स्वतंत्रता ही न्याय माना जाता है। न्याय तीन प्रकार के होते हैं- (1) प्राकृतिक, (2) सामाजिक, (3) संवैधानिक। प्राकृतिक न्याय की पूर्ति न्यायपलिका, सामाजिक न्याय की पूर्ति समाज और संवैधानिक न्याय की पूर्ति राज्य करता है। न्याय की पूर्ति करने वाली न्यायिक सामाजिक और संवैधानिक प्रक्रिया को व्यवस्था कहते हैं।

4136. देश में कानून इतना जटिल और दुरूह है कि सामान्य व्यक्ति को न्याय नहीं मिलता है। यदि कानून और न्याय अलग-अलग दिशाओं में जा रहे हों, तो न्यायालय कानून का पक्ष लेगा और हम अर्थात् समाज के लोग न्याय का पक्ष लेंगे।

4137. न्याय और सुरक्षा देना राज्य का लक्ष्य होता है और कानून उसका मार्ग। यदि कानून का पालन कराना लक्ष्य मान लिया गया, तो अव्यवस्था निश्चित है। यदि न्याय और कानून के बीच दूरी बढ़ जाती है, तब कानून की समीक्षा की जाती है, न्याय की नहीं।

414 सुरक्षा और न्याय

4140. जब राज्य अपनी शक्ति का आकलन किये बिना स्वैच्छिक कर्तव्यों को दायित्व स्वीकारने लगता है, तब अपराध नियंत्रण की पकड़ कमजोर होने लगती है। भारतीय व्यवस्था का सबसे काला दिन वह माना जाना चाहिए, जिस दिन हमने जनकल्याणकारी राज्य की अवधारणा घोषित की। राज्य का दायित्व तो सुरक्षा और न्याय होता है।

4141. हमारी राज्य व्यवस्था गारंटी देती है कि हम किसी अन्य को उसके विरुद्ध हिंसा नहीं करने देंगे। लेकिन राजनैतिक शक्ति, संपत्ति और अपराध एक-दूसरे के पूरक हो गये हैं।

4142. राज्य का दायित्व था कि वह प्रत्येक इकाई को अपने इकाईगत निर्णय की स्वतंत्रता की सुरक्षा की गांरटी दे। उक्त गारंटी की व्यवस्था के लिए राज्य को जिस धन की आवश्यकता होती थी, वह नागरिकों से लेने के तरीके को ही कर (टैक्स) कहा जाता है।

4143. व्यक्ति के मूल अधिकारों की सुरक्षा का दायित्व राज्य पर इस सीमा तक दे दिया जाना चाहिए कि असफल होने पर वह व्यक्ति को उचित मुआवजा देने को बाध्य हो।

4144. न्याय की मांग का सीमा से अधिक बढ़ना अव्यवस्था का आमंत्रण है तथा अव्यवस्था का अंतिम समाधान तानाशाही से ही होता है, जो कोई नहीं चाहता और आ जाती है। यदि न्याय की तरफ

पलड़ा झुकता है, तो व्यवस्था कमजोर होती है। दूसरी ओर यदि पलड़ा व्यवस्था की तरफ झुक जाता है, तो आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक असमानता बढ़ने लगती है, आवश्यक है कि न्याय की मांग और व्यवस्था की मात्रा का संतुलन बनाकर रखा जाए। जब तक ग्राम सभाओं को आर्थिक और राजनैतिक अधिकार प्राप्त नहीं हो जाते तब तक वर्तमान शासन प्रणाली से न्याय की मांग करने में बहुत सोचना समझना पडेगा।

4145. नेहरू और अंबेडकर तानाशाही की दिशा में झुके हुए थे। इन्हें लोकतंत्र के पश्चिमी मॉडल तक ही आंशिक रूप से आस्था थी। लोक स्वराज्य या ग्राम स्वराज्य जैसे विंचारों पर उन्हें आस्था थी ही नहीं।

4146. न्याय और व्यवस्था एक-दूसरे के पूरक होते हैं। दोनों का अस्तित्व भी एक-दूसरे पर निर्भर होता है। न्याय की पूर्ति के नाम पर व्यवस्था अधिक से अधिक शक्तिशाली होती जा रही है। और व्यवस्था का अधिक शक्तिशाली होना शायद आर्थिक विषमता दूर करने में सहायक हो जाए, किन्तु राजनैतिक या अधिकारों की विषमता तो बढ़ाएगा ही।

4147. समाज यदि गलती करे, तो उसे सलाह देना चाहिए क्योंकि उसकी नीतियां गलत हो सकती हैं, नीयत नहीं। राज्य यदि गलत करे, तो उसकी आलोचना होनी चाहिए, क्योंकि उसकी नीतियॉ भी गलत हैं और नीयत भी।

4148. राज्य की गुलामी की जगह व्यावसायिक समाजवाद को समाज ने कम बुरा माना, क्योंकि राज्य केन्द्रित समाजवाद सर्वांगीण गुलामी है और व्यावसायिक समाजवाद प्रत्यक्ष बुराई है।

4149. भारतीय राज्य या राजनैतिक व्यवस्था पूंजीवाद तथा साम्यवाद से प्रभावित होकर वास्तविक समाज व्यवस्था से दूर जा रही है वह खतरनाक भी है और चिन्ताजनक भी।

4150. राज्य का काम रोजगार का अवसर पैदा करना होता है, न कि नौकरी के माध्यम से रोजगार देना। यह तो गुलामी काल की परिभाषा थी, जिसे अब तक बढ़ाया जा रहा है।

4151. जब न्याय और व्यवस्था का संतुलन संवैधानिक व्यवस्था के पास केन्द्रित न होकर, पारिवारिक सामाजिक व्यवस्था के बाद अल्पमात्रा में ही राज्य के पास एकत्रित होगा, तब अपने आप विकेन्द्रित व्यवस्था मजबूत हो जायेगी।

4152. यदि समाज में गलत करने वालों का प्रतिशत एक से अधिक हो जाये, तो उसे विशेष परिस्थिति मान लेना चाहिए और यदि यह प्रतिशत दो से अधिक हो जाये, तो यह मान लेना चाहिए कि दोष व्यक्ति में न होकर व्यवस्था या नीतियों में है।

4153. एक तरफ तो हम गलत बात का तात्कालिक प्रतिरोध करने की भावना का औचित्य सिद्ध करते हैं, तो दूसरी ओर इसके ठीक विपरीत ऐसे कानून हाथ में लेने वाले कार्य में स्वाभाविक बाधा पहुंचाने वाले पुलिस वाले का मनोबल तोड़ने में जरा भी पीछे नहीं रहते।

416 सर्वोच्च न्यायालय

4160. सुप्रीम कोर्ट को अपराध पीड़ित और अपराधी के बीच अपराधी को संदिग्ध मानना चाहिए, किन्तु वह निरपराध मानता है। पुलिस और अपराधी के बीच न्यायालय को तटस्थ रहना चाहिए। किन्तु न्यायालय तटस्थ न होकर भी पुलिस को अविश्वसनीय मानता है।

420 कानूनी अधिकार

4200. भारतीय संसद 543 निर्वाचित सांसदो से बनती है तथा उसमें प्रत्येक सांसद को स्वतंत्रतापूर्वक बोलने का विशेषाधिकार प्राप्त है। संसद में सांसद का चुनाव संवैधानिक प्रक्रिया है, जबकि दलीय अनुशासन संवैधानिक प्रक्रिया का भाग नहीं है। दल का अनुशासन संवैधानिक स्वतंत्रता के ऊपर नहीं हो सकता। आज तक किसी सांसद ने इस विषय को संसद की अवमानना नहीं माना।

4201. संसद की अवमानना पर न्यायालय विचार करे और न्यायालय की अवमानना पर संसद। यह उचित नहीं कि संसद ही अपने विशेषाधिकार भी तय कर ले और वही अवमानना भी मान ले और वही दण्डित भी करे।

4202. सम्पत्ति का अधिकार पहले संविधान के मूल अधिकार में शामिल था, जिसे अब निकाल दिया गया है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा जीने का अधिकार संविधान के मूल अधिकारों में शामिल हैं। मूल अधिकारों का सबसे महत्वपूर्ण भाग "स्वनिर्णय" मूल अधिकारों की सूची में शामिल नहीं है। सम्पत्ति को मूल अधिकार में शामिल करने से जो क्षति होगी, निकालने से और अधिक क्षति होगी। सम्पत्ति को मूल अधिकार से हटाने पर राज्य को सम्पत्ति के साथ छेड़छाड़ करने के असीम अधिकार मिल गए जो उचित नहीं है। दुनिया के साम्यवादी, समाजवादी तानाशाह देशों में सम्पत्ति को मूल अधिकार नहीं माना गया है, किन्तु अधिकांश लोकतांत्रिक देशों में सम्पत्ति व्यक्ति का मूल अधिकार है।

421 अनावश्यक कानून

4210. यदि किसी देश में बन चुके कानूनों की संख्या दो प्रतिशत से

अधिक आबादी को प्रभावित करती है, तो उक्त कानून को लागू करना कठिन होता है। ऐसे कानून समाज में भ्रष्टाचार और चरित्र पतन के कारण बनते हैं। कानूनों की मात्रा जितनी अधिक होती है चरित्र पतन भी उतना ही अधिक होता है। कानून का पालन करने वाले भी कानून तोड़ने के लिए मजबूर हो जाते है और कानून के रक्षक भ्रष्ट। वर्तमान समय में भारत में 99% लोग कानूनों से प्रभावित हैं। प्रत्येक व्यक्ति सैकड़ो कानूनों से प्रभावित होता है। भारत में चरित्र-पतन और भ्रष्टाचार का मुख्य कारण कानूनों की बेशुमार संख्या है। बहुत थोड़े से कानून रखकर अन्य सारे कानून हटा लेने चाहिए।

4211. अब शासन व्यवस्था समाज को हिंसा से तो मुक्ति दिला नहीं पा रही है, किन्तु छुआछूत निवारण की सफलता के लिए अपनी पीठ खूब थपथपा रही है।

4212. निकम्मे कानून अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए और कानून बनाते हैं। ये कानून समाज को और अधिक गुलाम बनाने में तो सफल होते हैं, किन्तु समाज में व्यवस्था बनाने में सफल कभी न हुए हैं, न होंगे, क्योंकि कानून कभी समाज व्यवस्था के विकल्प नहीं हो सकते। व्यक्ति के व्यक्तिगत, परिवार के पारिवारिक और समाज के सामाजिक मामलों में कानून का हस्तक्षेप या तो नहीं होना चाहिए या विशेष परिस्थितियों में ही होना चाहिए।

4213. हरिजन, आदिवासी कानून उल्लंघन, ब्लैक, तस्करी, दहेज, सती प्रथा विरोध, ई.सी. एक्ट उल्लंघन, हेरोइन गांजा का उपयोग या व्यवसाय आदि जैसे कार्य अनैतिक हो सकते हैं, गैर-कानूनी हो सकते हैं, किन्तु ऐसे कार्यों को अपराध कहना भी एक अपराध

है। इन समस्याओं का समाधान सिर्फ कानून से नहीं हो सकता, क्योंकि कानून की अपनी सीमाएं होती हैं।

4214. यदि कानून इसी तरह महिलाओं के पक्ष में एकतरफा बनते रहे, तो आपको 10-20 करोड़ लोगों के लिए जेलें बनानी पड़ सकती हैं। यदि आदिवासी, हरिजन कानून भी मिला लें, तो यह संख्या बहुत अधिक बढ़ सकती है।

4215. परिवार के पारिवारिक तथा समाज के सामाजिक मामलों में कानून को कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। तीन तलाक या हलाला भी मुसलमानों का आंतरिक मामला है।

4216. राजीव गांधी द्वारा लाया गया दल-बदल विरोधी संशोधन पूरी तरह असंवैधानिक तो है ही, साथ में संविधान विरोधी भी है। क्योंकि यह कानून संसद के प्रत्येक सदस्य को संसद में अपना स्वतंत्र विचार रखने की आजादी पर अंकुश लगाता है। दल बनाना या उस तरह का संगठन बनाना जन प्रतिनिधित्व कानून का भाग है, संविधान का नहीं।

4217. जन्म लेते ही व्यक्ति का एक स्वतंत्र अस्तित्व हो जाता है और उसके स्व-निर्णय में बाधक कोई कानुन किसी भी परिस्थिति में नहीं बनाया जा सकता। आत्महत्या प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है। राज्य सहित किसी भी अन्य को इस संबंध में कोई कानून नहीं बनाना चाहिए।

4218. किसी को किसी भी परिस्थिति में किसी भी समझौते के अंतर्गत एक साथ रहने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। विवाह, तलाक, छुआछूत निवारण जैसे अनावश्यक कानून क्यों बनाये जा रहे हैं। मेरे विचार से तो ये कानून न सिर्फ गलत हैं, बल्कि इसके

लिए कानून बनाने वाले अपराधी भी है। यदि दो व्यक्तियों के बीच कोई ऐसा समझौता होता है, जो एक की स्वतंत्रता का उल्लंघन करे, तब व्यवस्था ऐसे समझौते की समीक्षा कर सकती है और किसी पक्ष को दंडित कर सकती है, किन्तु किसी भी परिस्थिति में उसकी इच्छा के विरुद्ध किसी के साथ रहने या साथ रखने के लिए मजबूर नहीं कर सकती।

4219. किसी की स्वतंत्रता में कानून तब तक हस्तक्षेप न करे, जब तक उसने कोई अपराध न किया हो।

4220. पशुओं को किस प्रकार का कष्ट दिया जाये, इसके भी नियम बनाये गये हैं। कोई व्यक्ति अमानवीय तरीके से अपने पशु को नहीं पीट सकता और न ही अमानवीय तरीके से काट सकता है। मुर्गे को काटा जा सकता है, रेत-रेत कर जिबह किया जा सकता है, किन्तु ठूस-ठूस कर गाड़ी में नहीं भरा जा सकता, क्योंकि कानून इसकी इजाजत नहीं देता। भारत के वर्तमान कानूनों में दया का भाव अधिक होने के कारण अपराध भी बढ़ रहे हैं तथा आवारा पशुओं की संख्या भी अव्यवस्था फैला रही है। जब मनुष्य को छोड़कर किसी भी अन्य जीव को मौलिक अधिकार प्राप्त नहीं है, तब सरकार ऐसे मामले में कानून कैसे बना सकती है? फिर भी सरकारे कानूनों का दखल बढ़ा रही हैं।

422 समान कानून

4221. कानूनों से धर्म, जाति, भाषा, लिंग, क्षेत्र, उम्र, अमीर, किसान, उपभोक्ताओं आदि के सभी भेद समाप्त करके एक समान कानून करना बहुत लाभदायक और सुविधाजनक है। इससे वर्ग-विद्वेष घटेगा और पुलिस तथा न्यायालय पर भी बोझ कम हो जायेगा।

4222. मेरे विचार में किसी प्रकार की असमानता को दूर करने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि समानता के लिए किये जाने वाले सारे प्रयत्न बंद कर दिये जायें, क्योंकि ये कानूनी प्रयत्न ही असमानता के प्रमुख कारण हैं। परिणामस्वरूप अपने आप सबकी स्वतंत्रता समान हो जायेगी और किसी को कोई प्रयत्न नहीं करना होगा।

4223. भारत में सिर्फ विदेशी कानूनों की ही नकल नहीं की गई, बल्कि संविधान की भी नकल की गई, जो कानून की अपेक्षा कई गुना ज्यादा खतरनाक है। विदेशी संविधानों की नकल करके भारतीय संविधान में कुछ मौलिक अधिकार जोड़े गये, जबकि विदेशी संविधान निर्माता मौलिक अधिकार की न परिभाषा जानते थे, न ही उपयोग। भारतीय संविधान से परिवार और गांव व्यवस्था को भी बाहर निकालना नकल का ही परिणाम था। वर्ग समन्वय की जगह वर्ग-विद्वेष पैदा करने वाले धर्म, जाति, उम्र, लिंग सरीखे प्रावधानों को संविधान में जोड़ना भी नकल ही मानना चाहिए। इसमें कई प्रावधान पश्चिम की नकल से लिए गये हैं, तो अनेक साम्यवादी देशों की भी नकल हैं।

4224. भारत के मुस्लिम बहुमत ने कभी कानून का सम्मान करने की पहल नहीं की है।

4225. मेरे विचार में यदि कोई स्थान सार्वजनिक है, तो उसके सार्वजनिक उपयोग से किसी भी व्यक्ति को वंचित नहीं किया जा सकता। किन्तु यदि कोई स्थान किसी समूह के स्वामित्व का है, तब उस स्थान के लिए नियम-कानून बनाने का अंतिम अधिकार उस समूह का है। सबरीमाला मंदिर हिन्दुओं का है और मंदिर के आसपास

के हिन्दू इस संबंध में जो भी नियम बनाते हैं, उस नियम को अंतिम माना जाना चाहिए।

423 कानून

4230. भारत में किसी भी प्रकार के धर्म परिवर्तन की प्रतिस्पर्धा को कानून द्वारा रोकना चाहिए। धर्म परिवर्तन कराने के प्रयत्न को कानून के अन्तर्गत अपराध घोषित कर देना चाहिए। इससे धार्मिक आधार पर छीना-झपटी रूक जायेगी।

4231. व्यक्तिगत मामलों में निर्णय का अंतिम अधिकार व्यक्ति को और पारिवारिक मामलों में परिवार को होना चाहिए। जो लोग ऐसे अधिकारों का अतिक्रमण करते हैं, वे अपराध करते हैं, भले ही उनका अतिक्रमण कानून सम्मत ही क्यों न हो।

4232. कानूनों का एक मजबूत सुरक्षा कवच बना हुआ है, जो कानून तोड़ने वालों के लिए बहुत सुविधाजनक है, किन्तु कानून मानने वालों के लिए मकड़ी का जाल है, जिसमें मनुष्य सिर्फ फंस सकता है, किन्तु बच नहीं सकता। कानून के अनुसार आचरण करने वाले लोग तो अपवाद स्वरूप ही मिलेंगे। अन्यथा कानूनों को तोड़ना या बच निकलना या तो हमारा स्वभाव है या मजबूरी।

4233. कानून से चरित्र न कभी बना है, न बनेगा। यह सच्चाई राजनेताओं को भी समझनी चाहिए। भारत की जनता को शांति और न्याय चाहिए तो सरकार उसे देती है कानून, जो उसे और अधिक गुलाम बनाते जाते हैं।

4234. कानून बनाने में दिमाग लगाना चाहिए, दिल नहीं। यदि कानून बनाने में दिल का प्रयोग हुआ, तो विसंगति होनी ही है। कानून

तो बीमारी की दवा मात्र होते हैं, जो बीमारी की हालत में योग्य चिकित्सक की देखरेख में विशेष स्थिति में उपयोग की जाती है।

4235. हमारे कानून चालाकी को सवर्ण से हटाकर आदिवासी की ओर स्थानान्तरित तो कर रहे हैं, किन्तु शराफत को मजबूत नहीं कर रहे बल्कि कमजोर ही कर रहे हैं।

4236. समाज व्यक्ति को अनुशासित करने के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाता है और संविधान व्यक्ति को नियंत्रित करने के लिए कानूनी व्यवस्था बनाता है। सामाजिक व्यवस्था को कानून द्वारा कमजोर किया जा रहा है और कानूनी व्यवस्था बहुत अधिक कानून होने के कारण स्वयं कमजोर हो रही है।

4237. मैं अब भी मानता हूं कि बड़ी संख्या में मुसलमानों को तर्क के माध्यम से समझाना संभव है और जो नहीं मानेंगे अथवा जो स्पष्ट तौर पर आपराधिक घटनाओं में लिप्त रहेंगे, उन्हें कानून अपने तरीके से दुरूस्त कर देगा।

4238. कमजोर वर्गों के हित में कोई कानून बनाते समय भ्रष्टाचार और वर्ग-विद्वेष की संभावनाओं से बचना आवश्यक है।

4239. जिस व्यक्ति ने किसी देश की नागरिकता स्वीकार की है, उस देश के सारे कानूनों में उस व्यक्ति की सहमति मान ली जाती है। इस तरह कानून के अनुसार व्यक्ति को दंडित करना, उसकी अप्रत्यक्ष सहमति मानी जाती है।

4240. अपराधियों के मन से कानून का घटता भय तथा समाज के मन से कानून का उठता विश्वास, प्रजातंत्र के लिए खतरे के संकेत हैं।

424 गैर कानूनी

4241. रिश्वत देना एक गैरकानूनी कार्य तो है, किन्तु अपराध नहीं, क्योंकि

देने वाले के पास कोई पद या अधिकार नहीं होता, जिसका वह दुरूपयोग करे।

424 समानता

4242. संविधान में समानता का अर्थ व्यक्तियों के आपसी संव्यवहार में समानता नहीं हो सकता, बल्कि व्यक्तियों के आपसी संव्यवहार में राज्य की भूमिका की समानता से लिया जाना चाहिए।

425 जनहित

4250. जनहित क्या है, यह सिर्फ लोक अथवा लोक द्वारा एतदर्थ बनाई गई इकाई ही कर सकती है, तंत्र नहीं कर सकता। तंत्र का एकमात्र दायित्व होता है सुरक्षा और न्याय। वर्तमान विश्व में तंत्र ही सुरक्षा और न्याय के साथ-साथ जनहित के कार्य भी अपना दायित्व मानने लगा है।

4251. जनहित के मामले में भारत की स्थिति अधिक खराब है। भारत का तंत्र सुरक्षा और न्याय की तुलना में जनहित के अन्य कार्यों को अधिक प्राथमिकता देता है। लोकतंत्र में विधायिका जनहित को परिभाषित करती है, न्यायपालिका उस परिभाषा के आधार पर परीक्षण करती है और कार्यपालिका क्रियान्वित करती है। वर्तमान में यह क्रम गड़बड़ा गया है।

4252. न्यायाधीशों को लोकप्रियता की तुलना में न्याय को अधिक महत्व देना चाहिए। वर्तमान समय में न्यायाधीश लोकप्रियता और मीडिया से अधिक प्रभावित हो रहे हैं। जनहित याचिकाओं ने न्यायपालिका को पूरी तरह पटरी से उतार दिया है। जनहित याचिकाओं के कारण — (1) न्याय में विलम्ब हो रहा है। (2)

वकीलों से लेकर जजों तक के गुट बन रहे हैं। (3) न्यायाधीशों में लोकप्रियता की भूख बढ़ रही है। (4) समाज में परजीवियों का एक गुट मजबूत हो रहा है। (5) न्यायपालिका की सर्वोच्चता की भूख बढ़ रही है।

4253. यदि जनहित की परिभाषा तय करने का अधिकार तंत्र के पास रहेगा, तो हमारी लड़ाई का परिणाम कभी भी धोखा दे सकता है, किन्तु यदि संविधान संशोधन का अधिकार तंत्र के पास से संशोधित हो जाए, तब वे जनहित की परिभाषा अकेले तय नहीं कर पाययेंगे। इसलिए ही हमने संविधान सभा के मुद्दे को हाथ में लिया है।

4254. स्थिति यहां तक खराब हो गई है कि अब तो जनहित की परिभाषा भी तंत्र ही तय करने लगा है। हमारे क्या अधिकार हों, यह तंत्र ही तय करेगा और तंत्र के क्या अधिकार हों, वह स्वयं तय कर लेगा। भारत में व्यावहारिक रूप से भले ही न्यायिक तानाशाही हो किन्तु घोषित रूप से तो लोकतंत्र ही है। जनहित किसी व्यक्ति का मौलिक अधिकार नहीं होता, बल्कि संवैधानिक अधिकार होता है।

4255. जनहित क्या है, उसकी व्याख्या सिर्फ विधायिका ही कर सकती है, न्यायालय नहीं। न्यायपालिका ने जनहित याचिका तथा मूल ढांचा के नाम पर विधायिका की तानाशाही में अप्रत्यक्ष घुसपैठ की। मैं कह सकता हूँ कि न्यायपालिका ने इन दो असंवैधानिक निर्णयों के द्वारा भारत के लोकतंत्र को बचा लिया अन्यथा भारत में लोकतंत्र का क्या हाल होता, यह कल्पना ही की जा सकती है। लेकिन वर्तमान में न्यायपालिका अपनी सीमाएँ तोड़कर सक्रिय हो

गयी है। न्यायपालिका को विधायिका और कार्यपालिका के विरुद्ध प्रहरी की भूमिका तक सीमित रहना चाहिए। वर्तमान समय में विधायिका पर न्यायपालिका का एकपक्षीय हस्तक्षेप बहुत अच्छा महसूस हो रहा है। किन्तु न्यायपालिका को जनहित याचिकाओं में जो आनंद आ रहा है, वह खतरनाक है।

4256. जनहित याचिकाओं के नाम पर सुप्रीम कोर्ट सभी विभागों में हस्तक्षेप करने की जिस बुराई का शिकार हो रहा है, वह बुराई ही सुप्रीम कोर्ट में न्याय के विलंब का मुख्य कारण बन रही है। अपनी गलती को देखने की अपेक्षा दूसरों को गलत सिद्ध करने की बुराई से सुप्रीम कोर्ट को बचना चाहिए।

4257. न्यायपालिका को जनहित की विवेचना करने का अधिकार कहां से मिला? जनहित की विवेचना करने का अन्तिम अधिकार तो समाज का है। समाज के बाद वह विधायिका का है। यदि विधायिका गलती करेगी, तो विधायिका को समाज पांच वर्ष में बदल सकता है, किन्तु यदि न्यायपालिका गलती करेगी, तो उनकी समीक्षा कौन करेगा? व्यक्तिगत गलती के लिए तो महाभियोग होगा किन्तु नीतिगत भूलों की समीक्षा कौन करेगा?

4258. न्यायालय में प्रस्तुत होने वाली जनहित याचिकाएं हों या केशवानंद भारती केस में एक न्यायाधीश के बहुमत से दिया गया फैसला हो अथवा 9वीं अनुसूची की समीक्षा के अधिकार हों। सबकी वैधानिकता संदिग्ध होते हुए भी आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता। न्यायपालिका अनेक मामलों में विधायिका के कार्यों में अनावश्यक हस्तक्षेप कर रही है और ऐसे हस्तक्षेप भविष्य में घातक भी हो सकते हैं।

4259. न्यायालयों में विलम्ब का कारण न्यायाधीशों की कमी है, यह कहना पूरी तरह गलत है। यदि हम न्यायालय में और जज बढ़ा भी दे और न्यायालय और अधिक जनहित याचिकाएं सुनता रहे, तो इससे कोई लाभ नहीं होगा। जजों की कमी एक बहाना मात्र है।

430 धर्म, समाज और राज्य

4300. समाज सर्वोच्च होता है, धर्म उसका सहायक और राज्य उसका रक्षक। तीनों का अपना-अपना स्वतंत्र अस्तित्व होता है, तीनों एक-दूसरे के पूरक भी होते हैं, किन्तु समाज हमेशा धर्म और राज्य से ऊपर रहा है। लोकतंत्र में व्यक्ति सर्वोच्च होता है तथा धर्म, राज्य व समाज पूरक। साम्यवाद में राज्य सर्वोच्च होता है तथा धर्म, व्यक्ति, समाज पूरक। इस्लाम में धर्म सर्वोच्च होता है तथा राज्य, व्यक्ति, समाज पूरक। भारतीय संस्कृति में समाज सर्वोच्च होता था तथा राज्य, धर्म, व्यक्ति पूरक। दुर्भाग्य से भारतीय संविधान बनाने वालों ने भारतीय व्यवस्था में राज्य, धर्म और व्यक्ति को तो महत्व दिया, किन्तु समाज को संविधान से बाहर कर दिया।

4301. वर्तमान राजनैतिक स्वार्थ के उद्देश्य से जो लोग सिख उग्रवाद का प्रत्यक्ष या परोक्ष समर्थन करते हैं, वे समाज के लिए तो घातक हैं ही, स्वयं सिखों के लिए भी घातक माने जाने चाहिए। सिखों को चाहिए कि वे मुस्लिम सांप्रदायिकता की बढ़ती अविश्वसनीयता से सबक लें और वैसी स्थिति न आने दें, जैसी दुनिया में मुसलमानों के साथ हो रही हैं।

4302. समाज में दो वर्ग है – (1) उत्पादक, (2) उपभोक्ता। कुल मिलाकर भारत में कृषि उत्पाद से जुड़े लोगों की संख्या एक-दो प्रतिशत

से अधिक नहीं है। इस कार्य में लगे मजदूर कृषक की श्रेणी में न आकर उपभोक्ता ही माने जायेंगे।

4303. भारतीय राजनीति में न्याय और तर्क का कोई स्थान नहीं है, यदि आप कमजोर होंगे तो आपके अपने लोग भी आप पर चील कौओं के समान टूट पड़ने में हिचकेंगे नहीं।

431 शस्त्र

4310. किसी भी व्यक्ति को व्यक्तिगत आधार पर शस्त्र रखने की अनुमति गलत है। पश्चिम के देश हथियारों का व्यापार करने के लिए ऐसी छूट देते हैं और भारत उसकी नकल करता है। जब प्रत्येक व्यक्ति की सुरक्षा की गारंटी तंत्र के पास है, तो तंत्र सुरक्षा की ज़िम्मेदारी व्यक्ति पर डालकर खुद को नहीं बचा सकता।

432 पुलिस

4320. पुलिस और न्यायालय पर अधिक बोझ के कारण उनकी कार्य क्षमता घटती है। पुलिस अपराध नियंत्रण में बिल्कुल अक्षम होती जा रही है। क्योंकि आवश्यकता के अनुरूप पुलिस बल में वृद्धि ही नहीं की गई। पिछले चालीस वर्षों में जिस अनुपात में आबादी तथा अपराध बढ़े हैं, उस अनुपात में पुलिस बल की संख्या नहीं बढ़ी है। स्वतंत्रता के पूर्व पुलिस बल की कार्य क्षमता का आकलन करके ही उन्हें कार्य दिया जाता था। अब तो सारा कार्य बिना आकलन के ही पुलिस पर थोप दिया जाता है।

4321. पुलिस द्वारा अनेक आतंकवादियों या बड़े अपराधियों को मीसा में बंद करने या गोली मार देने तक की घटनाएं आम बात होती जा रही हैं, जो प्रजातंत्र के विरुद्ध होते हुए भी मजबूरी माना जाने

लगा है। पुलिस द्वारा अपराध नियंत्रण के लिए अवैध रूप से कानून अपने हाथ में लेने का समर्थन भी लोग इसीलिए करने लगे हैं कि न्यायालय अपराध नियंत्रण में विफल रहा। न्यायालय द्वारा अपराधी के निर्दोष छूटने की अपेक्षा पुलिस द्वारा अपराधी को फर्जी मुठभेड़ में मार डालना अधिक अच्छा समझा जा रहा है। यदि ऐसी घटनाएं बार-बार हों, तो चिन्ता का विषय है। पुलिस की अपेक्षा न्यायपालिका को अधिक आत्ममंथन करना चाहिए, क्योंकि कानून की अपेक्षा न्याय अधिक महत्वपूर्ण होता है। न्याय के हित में कानूनों में संशोधन करना चाहिए।

4322. पुलिस हमारी रक्षक है। एक घण्टा भर पुलिस को व्यवस्था से हटाकर हम यह अनुभव कर सकते हैं। राजनैतिक हस्तक्षेप तथा समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार पुलिस में भी व्याप्त है। कानून की असफलता भी पुलिस को गैरकानूनी अत्याचार हेतु प्रेरित करती है। समाज विरोधी तथा भावना-प्रधान लोग पुलिस के विरुद्ध अनवरत प्रचार करके उसका मनोबल गिराते हैं, जबकि वास्तविक दोष न्यायपालिका या विधायिका में है।

4323. यदि किसी अपराधी को पुलिस पकड़कर अवैधानिक तरीके से हत्या कर दे या अपराध अनुसार दण्ड दे दे, तो पुलिस का कार्य गैरकानूनी मानना चाहिए, अपराध नहीं। अपराध के लिए अपराधी की नीयत भी देखी जाती है। भारत की न्यायपालिका ऐसे गैरकानूनी कार्यों को अपराध मानकर भूल करती है। यदि कोई पुलिस वाला जनहित में कोई गैरकानूनी कार्य करता है, तो पुलिस वाले का समाज को विरोध नहीं करना चाहिए। या तो हम समर्थन करें या चुप रहें।

4324. जिस अनुपात में पुलिस के दायित्व घटेंगे उसी अनुपात में उसकी शक्ति बढ़ेगी। जिस अनुपात में पुलिस की शक्ति बढ़ेगी उसी अनुपात में उसके दुरूपयोग के खतरे भी बढ़ेगे। परन्तु इससे एक लाभ यह भी होगा कि महत्वपूर्ण दायित्व पूरा करने के लिए पुलिस की कार्य कुशलता भी बढ़ेगी। अनेक समस्याओं का सुलझना आसान हो जायेगा। इसलिए पुलिस के दायित्व और हस्तक्षेप कम करने की आवश्यकता है। पुलिस हस्तक्षेप योग्य कानूनों की समीक्षा करके कानूनों की मात्रा इतना कम कर देना चाहिए कि समाज में पुलिस का हस्तक्षेप भी घटे और उसकी कार्य क्षमता भी बढ़ जाये।

4325. पुलिस को राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त करना बहुत आवश्यक है।

433 पुलिस और न्यायालय

4330. अपराध वह है, जिसमें कोई इकाई किसी अन्य इकाई की इकाईगत स्वतंत्रता में बाधा उत्पन्न करती है। इसका अर्थ यह हुआ कि (1) ऐसी बाधा सर्वदा दूसरों पर अत्याचार के रूप में हुआ करती हैं, अपनों पर नहीं, (2) ऐसी बाधा सदा स्वार्थवश खड़ी की जाती हैं, अच्छी नीयत से नहीं, (3) ऐसी बाधा सदा दूसरे पक्ष की सहमति के बिना की जाती हैं, सहमति से नहीं।

4331. असत्य अथवा भ्रम के कार्यों में निःस्वार्थ भाव से किये गये ऐसे अनैतिक कार्य शामिल हैं, जो प्रत्यक्षरूप से कर्ता को स्वयं तथा आंशिक रूप से समाज पर प्रभाव डालते हैं। ऐसे कार्यों की सूची बहुत लंबी है। बाल विवाह, दहेज, स्वेच्छा से सती होना, जुआ, शराब, गांजा, छुआछूत, हरिजन, आदिवासी, महिला के विशेषाधिकार हनन के कार्य, वैश्यावृत्ति, बाल श्रम आदि कुछ कार्य इनमें शामिल हैं। अपराधों के अतिरिक्त जब पुलिस पर

ब्लैक, तस्करी, अवैध परिवहन आदि का दायित्व सौंपा जाता है, तब पुलिस और न्यायालय इन्हीं कार्यों के बोझ से दब जाते हैं। उनके पास वास्तविक अपराध रोकने की शक्ति बचती ही नहीं। ऐसे मामलों में पुलिस, न्यायालय तथा कानून को कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कोई अपराध नहीं होता है। ऐसे मामलों को समाज हृदय परिवर्तन अथवा बहिष्कार के माध्यम से अनुशासित कर सकता है।

4332. सामाजिक कार्यकर्ता, नेता और पत्रकार लगातार असत्य अथवा भ्रममूलक अपराधों की रोकथाम में बहुत सक्रिय और सहयोगी की भूमिका दिखाते हैं, जबकि वास्तविक अपराधों के विरुद्ध वे गवाही तक देने को तैयार नहीं होते।

4333. जो पुलिस क्षेत्र में डकैती, आतंक, हिंसा और मिलावट से आम नागरिकों को किसी प्रकार की सुरक्षा नहीं दे पा रही है, जो पुलिस बूथ लुटेरों को नहीं रोक सकी तथा क्षेत्र के आम मतदाताओं को अपना वोट स्वतंत्रता पूर्वक देने की व्यवस्था नहीं करा सकी, उससे हम बाल विवाह, शराब और तंबाखू रोकने में लगने की अपील कर रहे हैं। कुल बजट का जो एक प्रतिशत मात्र पुलिस और न्यायालय पर खर्च होता था उस एक प्रतिशत का भी नब्बे प्रतिशत गैर कानूनी कार्यों की ही रोकथाम पर खर्च होता रहा। इस तरह कुल बजट का सिर्फ दस पैसा प्रति सैकड़ा ही वास्तविक अपराध नियंत्रण पर खर्च हो रहा है।

434 सुरक्षा

4340. राष्ट्र की सीमाओं की सुरक्षा का दायित्व सेना पर तथा व्यक्तिगत

स्वतंत्रता की सीमा रेखा की सुरक्षा का दायित्व पुलिस और न्यायालय पर है। राष्ट्र की सीमाएं सुरक्षित हैं और व्यक्ति की स्वतंत्रता असुरक्षित। हमारे राजनेता तथा सामाजिक संस्थाओं के लोग भी चन्दा, हड़ताल, कानून आदि के द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता पर आक्रमण करते रहते हैं, दूसरी ओर राष्ट्र की सीमाओं की सुरक्षा का राग अलापते हैं, जबकि हमारी सेनाओं ने ऐसा कोई आह्वान नहीं किया है।

4341. भारत के राष्ट्रीय, प्रान्तीय तथा स्थानीय बजट का कुल एक प्रतिशत ही आन्तरिक सुरक्षा पर खर्च होता है, शेष निन्यानबे प्रतिशत अन्य विकास कार्यों पर खर्च होता है। भारत में डकैती और हत्या में मुआवजे का प्रावधान नहीं है, जबकि एक्सीडेंट या आग लगने में है। सुरक्षा शासन का दायित्व नहीं माना जाता।

4342. भारतीय जनता पार्टी की पहचान दो आधारों पर केन्द्रित रही है :- (1) शराफत, (2) हिन्दुत्व या राष्ट्रवाद। अब भारतीय जनता पार्टी द्वारा भी कट्टर हिन्दुत्व या राष्ट्रवाद की ओर झुक जाने से शराफत पूरी तरह अनाथ होती जा रही है।

4343. किसी भी राजनैतिक दल के चुनावी घोषणा पत्र में कानून का पालन करने वालों का मनोबल ऊँचा करने का कोई उल्लेख नहीं है। किसी भी राजनैतिक दल के पास अपराध नियंत्रण की भी कोई प्रभावकारी योजना नहीं है। पिछले चालीस वर्षों में जनकल्याणकारी कार्यों में तो हम आगे बढ़े हैं, परन्तु अपराध नियंत्रण में हम पीछे हुए हैं। फिर भी कोई राजनेता या सामाजिक कार्यकर्ता अपराध नियंत्रण की चर्चा करने से भी कतराता है।

440 अपराध

4400. दुनिया में किसी अन्य की स्वतंत्रता का उल्लंघन ही एकमात्र अपराध होता है। अन्य कोई कार्य अपराध नहीं होता। अपराध सिर्फ व्यक्ति के विरुद्ध होता है, नागरिक के विरुद्ध नहीं। अपराध दो प्रकार से होता है :- (1) बल प्रयोग, (2) धोखा। अपराधों को पांच भाग में बांट सकते हैं :- (1) चोरी, डकैती, लूट आदि, (2) बलात्कार, (3) मिलावट कमतौल, (4) जालसाजी, धोखाधड़ी, (5) हिंसा, बल प्रयोग, आतंकवाद। लोभ-लालच से सहमति प्राप्त करना अनैतिक हो सकता है, किन्तु अपराध नहीं। ऐसी सहमति मौलिक अधिकारों के लिए भी हो सकती है। मौलिक अधिकारों की सहमति कार्य के क्रियान्वयन के पूर्व तक तोड़ी जा सकती है।

4401. अपराध, गैरकानूनी और अनैतिक अलग-अलग होते हैं। किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों का उल्लंघन अपराध, संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन गैरकानूनी और सामाजिक अधिकारों का उल्लंघन अनैतिक होता है। परिभाषाओं के अभाव और अज्ञान के कारण तीनों को एक मान लेने से अपराधों की मात्रा बढ़ जाती है तथा पहचान भी खत्म हो जाती है। हर अपराध गैरकानूनी भी होता है तथा अनैतिक भी, किन्तु हर अनैतिक कार्य न गैरकानूनी होता है न अपराध, किन्तु हर गैरकानूनी कार्य न अपराध होता है, न अनैतिक। संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन गैरकानूनी होता है, अपराध नहीं। किसी अपराध की तैयारी गैरकानूनी कार्य है। सरकारी सुविधाओं में बाधा गैरकानूनी कार्य है। सरकार गैरकानूनी कार्यों के लिए भी दण्ड दे सकती है। सामाजिक नियमों का उल्लंघन अनैतिक होता है। जुआ, शराब, वैश्यावृत्ति, ब्लैक, ब्लैकमेल,

गांजा, भांग, छुआछूत, किसी प्रकार का शोषण, आत्महत्या जैसे अनेक असामाजिक कार्य सिर्फ अनैतिक होते हैं। इन सबको न अपराध मानना चाहिए, न गैरकानूनी। सरकार इन असामाजिक कार्यों के सम्बन्ध में कानून बनाकर गलत करती है। अपराध नियन्त्रण को सफल बनाने के लिए अपराध और गैरकानूनी कार्य को अलग करना होगा तथा एक सशक्त और अधिक अधिकार सम्पन्न सरकार बनानी होगी।

4402. समाज में दो प्रतिशत के आसपास अपराधी होते हैं। सरकार ने अनावश्यक कानून बना-बनाकर इस संख्या को निन्यानबे प्रतिशत तक कर दिया है। वर्तमान समय में ऐसा कोई आदमी दिखाई नहीं देता, जो अक्षरशः कानून का पालन करता हो। भारत में विगत 70 वर्षों में चाहे जिस राजनीतिक संगठन की सरकार रही हो, पर समाज विरोधी तत्वों का मनोबल लगातार बढ़ा है और समाज का मनोबल लगातार कम हुआ है। कानून का उल्लंघन करने वाले हर क्षेत्र में सफल रहे हैं और कानून का पालन करने वाले असफल।

4403. अपराध के तीन कारण बताए जाते हैं :- (1) मजबूरी, (2) अशिक्षा, (3) अव्यवस्था। इस समय आर्थिक स्थिति भी सुधरी है और शिक्षा में भी विस्तार हुआ है, फिर भी अपराध नहीं घटे हैं। क्योंकि अपराधों के बढ़ने का एकमात्र कारण समाज और कानून का घटता भय है। हमारा दुर्भाग्य है कि सरकार आर्थिक स्थिति में अपराधों का समाधान खोज रही है, तो सामाजिक संस्थाएं शिक्षा और शराब बंदी में। गुप्त मुकदमा प्रणाली पुलिस और न्यायालय की असफलताओं का अच्छा समाधान है। इससे कानून शक्तिशाली होगा, जो न्याय की सुरक्षा करेगा।

4404. गुण्डों का न कोई धर्म होता है और न कोई जाति। धर्म, राजनीति, व्यवसाय सभी क्षेत्रों में गुण्डों और आतंकवादियों की घुसपैठ हो गई है। कोई गुण्डा यदि दस कत्ल भी कर दे, तो उसकी सरलता पूर्वक जमानत हो जाती है तथा वह बेगुनाह सिद्ध होकर छूट जाता है, परन्तु किसी शरीफ आदमी द्वारा यदि किसी गुण्डे का वध कर दिया जाए, तो वह बेचारा जीवन भर जेल में निरूद्ध रहता है।

4405. भारत की शासन व्यवस्था में समाज विरोधी तत्वों का महत्वपूर्ण हस्तक्षेप है। ऐसे तत्वों को मानवाधिकार के नाम पर अपनी दुकानदारी करने वालों का भी समर्थन मिलता है। वे अपनी सुविधा के अनुसार :- (1) कानून बनवाते हैं, (2) प्राथमिकताएं तय करते हैं, (3) बुद्धिजीवियों से प्रचार कराते हैं, (4) संचार माध्यमों का उपयोग करते हैं, (5) जन-मानस को अपने अनुसार ढाल लेते हैं। समाज विरोधी तत्व बहुत मायावी होते हैं। भावना प्रधान लोगों के समक्ष दीन भाव प्रकट करके, स्वार्थी तत्वों से समझौता करके तथा कमजोरों को डरा-धमकाकर ये अपनी सहायता में खड़ा कर लेते हैं। गुण्डे इतने चालाक होते हैं कि विवाह, पूजा, खेल, चुनाव या अन्य सामाजिक कार्यों में ही अपनी सक्रिय भूमिका बनाकर प्रशंसा प्राप्त करते रहते हैं। कई लोग समाज के साथ रहते हैं, परन्तु स्वार्थवश अथवा अज्ञानवश वे हमेशा समाज विरोधी तत्वों का हित-चिन्तन करते रहते हैं। समाज विरोधी तत्वों पर नियंत्रण हेतु की जाने वाली किसी भी योजना में उन्हें प्रजातंत्र हनन की गंध आती है। किसी संदिग्ध अपराधी के पक्ष में तीन प्रकार के लोग ही खड़े हो सकते हैं :- (1) यदि आपकी व्यक्तिगत जानकारी के अनुसार व्यक्ति निरपराध है, (2) यदि व्यक्ति आपके साथ व्यक्तिगत रूप

से जुड़ा हुआ है, (3) यदि आप व्यक्ति के घोषित वकील हैं, यदि कोई अन्य व्यक्ति संदिग्ध अपराधी का पक्ष लेता है, तो वह गलत है। पुलिस आमतौर पर फर्जी मुठभेड़ में अपराधियों को मार गिराती है। ऐसी फर्जी मुठभेड़ों पर प्रश्न उठाना हमारा कार्य नहीं होता है।

4406. वर्तमान समय में भारत में अपराध लगातार बढ़ रहे हैं। उसके निम्न कारण हैं :- (1) अपराध, गैरकानूनी और अनैतिक कार्य की अलग-अलग परिभाषाओं और पहचान का अभाव, (2) न्याय की अनुपयुक्त परिभाषा, (3) न्यायपालिका तथा विधायिका द्वारा कार्यपालिका को कमजोर करना, (4) कानूनों का जाल और उनकी अधिकता।

4407. शरीफ लोगों को कभी इकट्ठा होने ही नहीं दिया जाता। जब भी ये लोग इकट्ठा होने लगते हैं, तो पेशेवर राजनीतिज्ञ धर्म, जाति, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति, उत्पादक-उपभोक्ता, भाषा और राष्ट्रीयता के नाम पर इन्हें आपस में ही विभाजित कर देते हैं। पहले समाज विरोधी तत्वों की अनेक राजनीतिक नेताओं से सांठ-गांठ रहती थी, परन्तु अब ऐसे तत्व स्वयं ही राजनीति में आने का प्रयास कर रहे हैं।

4408. भारत की जनता शांति व्यवस्था की मांग करती है, तो उसे शांति व्यवस्था के स्थान पर कानून मिलते हैं, जिनका कोई उपयोग नहीं। अपराधियों के मन से कानून का भय तथा समाज का कानून पर से विश्वास लगातार घट रहा है। परिणामस्वरूप अपराधी कानून का खुला उल्लंघन करता है और आम आदमी कानून अपने हाथ में लेकर न्याय प्राप्ति पर विश्वास करने लगा है। भारत के 99 प्रतिशत लोग अपराध भाव से ग्रसित हैं। कानूनों की अनावश्यक

अधिकता तथा कानून के उल्लंघन को ही अपराध मानने से यह स्थिति विकट बन गई है। पुलिस और न्यायालय की क्षमता का आकलन करके ही कानून बनाना चाहिए। यदि कानून अधिक होंगे और व्यवस्था कम, तो अव्यवस्था बढ़ती जायेगी। वर्तमान समय में भारत की पुलिस और न्यायालय कुल आबादी के डेढ़ प्रतिशत भाग पर ही अपराध नियंत्रण की क्षमता रखते हैं। दूसरी ओर कानूनों की अधिकता 99 प्रतिशत तक लोगों को अपराधी घोषित करती है। पुलिस और न्यायालय की क्षमता बढ़ाकर तथा कानूनों की संख्या घटाकर ही यह असंतुलन दूर करना संभव है। कानूनों की संख्या तत्काल कम करके उन्हें 99 प्रतिशत के स्थान पर डेढ़ प्रतिशत तक कर देना चाहिए। जब पुलिस और न्यायालय की क्षमता बढ़ेगी, तब और कानून बनाए जा सकते हैं। 98 प्रतिशत समस्याएं शासकीय हस्तक्षेप अथवा अनावश्यक कानूनों का (By Product) उत्पादन है। कार्य प्रणाली परिवर्तन तथा प्राथमिकताओं के पुनः निर्धारण से ये समस्याएं स्वयं दूर हो सकती हैं।

4409. यदि कोई शासन अपराध नियंत्रण में अक्षम है, तो समाज को उसे (1) उचित मार्गदर्शन तथा उसकी मदद करनी चाहिए, (2) उसे बदलकर नया शासन बना देना चाहिए, (3) आपातकाल घोषित करके सारी शक्ति स्वयं में तब तक केन्द्रित कर लेनी चाहिए जब तक कोई उचित व्यवस्था की परिस्थितियां पैदा न हो जायें।

441 जालसाजी, धोखाधड़ी

4410. किसी व्यक्ति से कुछ प्राप्त करने के उद्देश्य से उसे धोखा देकर प्राप्त करने का जो प्रयास किया जाता है, उसे जालसाजी कहते

हैं। जालसाजी, धोखाधड़ी, ठगी, विश्वासघात आदि लगभग समानार्थी शब्द होते हैं । बहुत प्राचीन समय से धोखाधड़ी का उपयोग होता रहा है। जालसाजी, धोखाधड़ी पूरी तरह अनैतिक कृत्य भी माना जाता है और आपराधिक कृत्य भी। दोनों के बीच की सीमा रेखा तय करना बहुत कठिन कार्य है। वैसे मिलावट और कम तौलना जैसे अपराध भी जालसाजी के साथ ही जुड़े हुए होते हैं।

4411. संतो का चोला पहनकर तथा आध्यात्म की भाषा बोलकर धूर्त लोग आसानी से धर्म प्रधान लोगों को ठग लिया करते है। धार्मिक अथवा सामाजिक कार्यों के नाम पर ठगी का प्रयास आमतौर पर पूरे भारत में प्रचलित है। वर्तमान समय में भी राजनीति में धोखाधड़ी का खुला उपयोग होता है। यहां तक कि राजनीति में तो इस कार्य को कूटनीति का नाम देकर सफलता का मापदंड बता दिया जाता है।

4412. हर बुद्धि प्रधान व्यक्ति भावना प्रधान व्यक्ति को बेवकूफ बनाकर ठग लेना अपनी खास विशेषता मानता है। अधिक बुद्धि प्रधान कम बुद्धि प्रधान को ठग लेना अपनी सफलता मानता है।

4413. अपने व्यक्तिगत हित में जालसाजी, धोखाधड़ी, ठगी या विश्वासघात हमेशा अनैतिक और अपराध ही माने जाते हैं, चाहे वह कोई भी क्यों न करे। किन्तु जनहित में यदि ब्राह्मण को छोड़कर शेष लोग इनका उपयोग करते हैं, तो इस उपयोग को अनैतिक या अपराध नहीं माना जाता। स्पष्ट है कि इस प्रकार के किसी भी अनैतिक कार्य में कर्ता की नीयत देखी जाती है। यदि उसकी नीयत खराब है, तो किसी भी प्रकार की जालसाजी, धोखाधड़ी,

अनैतिक और आपराधिक कार्य माना जाना चाहिए। किन्तु यदि नीयत ठीक है, तब ऐसा कार्य अनैतिक नहीं भी मान सकते है।

4414. मिलावट, जालसाजी, धोखा से कोई व्यवस्था हमें सुरक्षित रहने की गारंटी नहीं दे पा रही है, तब तक हमें तो स्वयं ही सतर्क रहने का प्रयास करना होगा।

442 अपराध और अपराध नियंत्रण

4420. भारत में न्याय प्रक्रिया महंगी, विलम्बित और अविश्वसनीय है। पुलिस और न्यायालय पर अतिरिक्त कार्य-भार है, क्योंकि दोनों ही अपना काम कम और अनावश्यक काम अधिक करते हैं। इस समस्या के समाधान के लिए :- (1) अनावश्यक कानून हटा दें, (2) स्थानीय पंचायत प्रणाली को महत्व दें, (3) न्याय के समय परिवार और ग्रामसभा को भी जूरी मानने की प्रणाली बने, आपसी समझौतों को महत्व दें, (4) गुप्त मुकदमा प्रणाली लागू करें, जिसके अनुसार किसी जिले के कलेक्टर, एसपी और जिला न्यायाधीश आवश्यक समझें कि अपराधियों का भय बढ़ गया है, तो आपातकाल लागू कर सकते हैं। ऐसे आपातकाल में गुप्तचर पुलिस न्यायालय में गुप्त मुकदमा प्रस्तुत कर सकती है और गुप्तचर न्यायालय गुप्त ट्रायल द्वारा दंडित कर सकता है। ऐसे घोषित दण्ड की अपील भी गुप्तचर न्यायालय में ही हो सकती है।

4421. अपराध नियंत्रण के लिए न्यूनतम शक्ति प्रयोग नहीं, संतुलित शक्ति का प्रयोग होना चाहिए। यदि शक्ति प्रयोग आवश्यकता से कम होगा, तो अपराधियों की सहन शक्ति उसी तरह बढ़ जाती है, जिस तरह कम दवा के प्रयोग का कीटाणुओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता

है। वर्तमान समय में शक्ति प्रयोग असंतुलित तथा आवश्यकता से कम है। परिणामस्वरूप अपराध नियंत्रण में उनका प्रभाव लगातार घटता जा रहा है।

4422. अपराधों में सजा का आकलन समाज पर पड़ने वाले उसके प्रभाव के आधार पर होना चाहिए, न कि किसी अन्य सिद्धान्त के आधार पर। क्योंकि सजा का उद्देश्य पीड़ित को संतोष और अपराधी को दण्ड के साथ-साथ समाज में भय उत्पन्न करना भी होता है। यदि समाज में 'भय' दण्ड से कम हो जाये तो सजा की मात्रा और अमानवीयता को उस सीमा तक बढ़ाना चाहिए, जो समाज में अपराध के प्रति भय उत्पन्न कर सके। वर्तमान परिस्थितियों में अल्पकाल के लिए सार्वजनिक चौक पर फाँसी भी प्रारंभ की जा सकती है।

4423. फांसी स्वयं में एक अमानवीय कार्य है। फांसी को इस तरह संशोधित करना चाहिए कि वह सजा प्राप्त व्यक्ति को मृत्यु का एक विकल्प भी दे सके और समाज पर लम्बे समय तक भय उत्पादक प्रभाव भी छोड़ सके। फांसी की सजा प्राप्त अपराधी यदि अपनी दोनों आंखें जीवित अवस्था में दान देकर अन्धत्व स्थिति में तथा जमानत पर कुछ समय के लिए जीवित रहने की इच्छा व्यक्त करे, तो हमें उसे आवश्यक शर्तों के साथ जमानत पर छोड़ देने का न्यायालयों को अधिकार देना चाहिए।

4424. जेल अपराधी को दण्ड के भय से सुधरने का अवसर देने का माध्यम है। जेलों को बहुत अधिक सुविधाजनक बनाना ठीक नहीं। जेलों को सुधार गृह बनाना गलत है। जेलों में साधु-संतों का प्रवचन करना भी बेकार की कसरत है। जो साधु-संत बाहर

के लोगों को नहीं समझा पा रहे हैं, वे जेल में अपराधियों को क्या समझा लेगें? वर्तमान समय में जेल से सुधरने वालों की संख्या कम है और बिगड़ने वालों की अधिक।

443 अनैतिक और अपराध

4430. प्राचीन काल में अपराध तथा अनैतिकता अलग-अलग रूप से परिभाषित थे। अपराध के लिए सिर्फ कानून ही दण्ड दे सकता था, समाज नहीं। अनैतिक के लिए समाज सिर्फ बहिष्कृत कर सकता था, दण्डित नहीं। गुलामी काल में जब मुसलमान भारत आये, तो उन्होंने सामाजिक दण्ड की कुप्रथा विकसित कर दी और जब अंग्रेज आये, तो उन्होंने सामाजिक दण्ड के साथ-साथ सामाजिक बहिष्कार भी गैर कानूनी बना दिया। आज अनेक नासमझ सामाजिक बहिष्कार का भी विरोध करते देखे जाते हैं। सामाजिक बहिष्कार करना हमारा मौलिक अधिकार है। सामाजिक बहिष्कार को अवैध कहना गलत है। गलती कानून की है, समाज की नहीं। सामाजिक बहिष्कार और संवैधानिक दण्ड को अलग-अलग समझा जाना चाहिए।

443 भ्रष्टाचार

4431. किसी कार्य के परिणाम से प्रभावित व्यक्ति और कर्ता के बीच दूरी जितनी अधिक होती है, उतनी ही अधिक परिणाम की गुणवत्ता घटती जाती है। यह दूरी ही भ्रष्टाचार के घटने व बढ़ने का आधार बनती है। भ्रष्टाचार अपराध नहीं होता, गैर कानूनी या अनैतिक हो सकता है।

4432. किसी भी व्यवस्था के पास अपराध रोकने की शक्ति सिर्फ दो

प्रतिशत होती है। यदि अपराध दो प्रतिशत से अधिक बढ़े तो अपराध रुक नहीं सकते। भारत में भ्रष्टाचार 95 प्रतिशत से भी ज्यादा है। अतः भ्रष्टाचार रोकने के लिए पहले कानूनों की मात्रा दो प्रतिशत से कम करनी होगी। राज्य भ्रष्टाचार रोकना ही नहीं चाहता, क्योंकि वह भ्रष्टाचार का प्रतिशत जानते हुए भी उसी भ्रष्ट व्यवस्था को नए-नए अधिकार देता रहता है।

4433. किसी मामले में घूस लेना गैरकानूनी और अनैतिक है और देना मजबूरी। घूस देना अपराध नहीं होता। कुछ नासमझ लोग घूस देने को भी अपराध मानते हैं, जो गलत है।

4434. भारत में भ्रष्टाचार ऊपर से नीचे तक फैल चुका है। राजनेताओं में शत-प्रतिशत, व्यापारियों में 98 प्रतिशत, न्यायपालिका में 95 प्रतिशत, शिक्षा में 90 प्रतिशत के करीब है। पिछले समय में जनता 100 रूपये टैक्स देती थी, तो शासन को 15 रूपये पहुँचता था। अब भी स्थिति में मामूली बदलाव ही है।

4435. कानून और भ्रष्टाचार एक-दूसरे के पूरक हैं। कानून भ्रष्टाचार को बढ़ाते हैं और भ्रष्टाचार कानूनों में वृद्धि करता है। व्यक्ति के अधिकार (Right) जब किसी अन्य को हस्तांतरित होते हैं, तो वे शक्ति (Power) बन जाते हैं। यही कानून बनता है। यहीं से भ्रष्टाचार के अवसरों का जन्म होता है। व्यवस्था में Power (कानूनों) की मात्रा ही भ्रष्टाचार की मात्रा होती है।

4436. भारत की वर्तमान अर्थनीति भ्रष्टाचार को कम से कम करती जायेगी। अधिकतम निजीकरण हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए। आदर्श स्थिति में सत्ता के विकेन्द्रीकरण का प्रयास ही भ्रष्टाचार कम करने में सहायक होगा। अपराध नियंत्रण के दायित्व के अतिरिक्त

अन्य कार्यों की समीक्षा करके परिस्थिति के अनुसार शासन ऐसे कर्तव्यों से मुक्त हो जाये। शिक्षा, चिकित्सा, आवागमन, वस्तु क्रय-विक्रय आदि अधिकांश कार्य शासकीय हस्तक्षेप के बिना स्थानीय स्तर पर होना भी सम्भव है। इससे नब्बे प्रतिशत तक विभागों की समाप्ति सम्भव है। इसी हिसाब से भ्रष्टाचार भी समाप्त होता जायेगा।

4437. पारदर्शिता, विकेन्द्रीकरण तथा कानूनों को कम करना भ्रष्टाचार दूर करने का सरल उपाय है। राष्ट्रीयकरण भी कम से कम कर देना चाहिए।

4438. दुनिया के अनेक देश भारत के नागरिकों को स्वभाव से ही भ्रष्ट मानते हैं। उनका मानना है कि भारत के आम लोग टैक्स चोरी करने के कारण भ्रष्ट हैं। मैं यह आरोप गलत मानता हूँ। भारत के लोग कुल मिलाकर जितना टैक्स चोरी करते हैं उससे कई गुना अधिक मंदिरों, धर्मगुरूओं या अन्य धार्मिक सामाजिक कार्यों में स्वेच्छा से दान कर देते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि भारत के लोग अब तक भी अपनी सरकार को इतना विश्वास योग्य नहीं मानते कि उसके साथ आत्मीय भाव पैदा हो।

444 मिलावट

4440. किसी भी प्रकार की मिलावट अपराध होता है। मिश्रण और मिलावट बिल्कुल अलग-अलग है। भारत के कानून बनाने वाले भी दोनों का अंतर नहीं समझने के कारण भूल कर देते हैं। किसी को धोखा देने के उद्देश्य से यदि किसी चीज में कोई वस्तु मिलायी जाती है, तो वह मिलावट होती है। यदि उद्देश्य धोखा देना नहीं है, तो वह मिलावट नहीं मिश्रण कही जाती है।

445 अपराध, उग्रवाद, आतंकवाद

4450. अपराध, उग्रवाद और आतंकवाद में अंतर होता है। अपराध आमतौर पर व्यक्तिगत स्वार्थ के उद्देश्य तक सीमित होते हैं। उग्रवाद किसी विचारधारा से प्रभावित होता है। आतंकवाद उग्रवाद का अतिवादी स्वरूप होता है।

4451. उग्रवाद तथा आतंकवाद बिल्कुल अलग-अलग होते हैं। आतंकवाद के तीन आवश्यक लक्षण होते हैं :- (1) कोई योजनाबद्ध संगठित आपराधिक क्रिया हो, (2) स्थापित व्यवस्था को चुनौती हो, (3) क्रिया के परिणाम से बड़े क्षेत्र में भय व्याप्त हो। यदि ये तीनों बातें एक साथ न हों तो उसे उग्रवाद कह सकते हैं, आतंकवाद नहीं। उग्रवाद आमतौर पर विचारों तक सीमित होता है, क्रिया में नहीं। उग्रवादी तत्व स्वयं कभी हिंसा नहीं करते, किन्तु दूसरों को हिंसा के लिए प्रोत्साहित तथा उत्तेजित करते हैं।

4452. उग्रवाद ही आतंकवाद की जड़ है। उग्रवादी संगठन में लम्बे समय बाद आतंकवादी संगठन बनना निश्चित होता है। इस्लाम, साम्यवाद और सावरकरवादी परिवार की विचारधारा उग्रवादी है, किन्तु कालान्तर में इन्हीं में कुछ लोग निकलकर आतंक की दिशा में बढ़ गये। नक्सलवाद, इस्लामिक आतंकवाद अथवा अतिवादी हिन्दू समूह ऐसे ही लोगों का संगठन है।

4453. कट्टरपंथी इस्लाम ने सारी दुनिया में युद्ध के अलग-अलग फ्रंट खोल रखे हैं। कश्मीर उनमें से मात्र एक है। ऐसी बात नहीं है कि कश्मीर छोड़ देने से इस्लामिक कट्टरवाद से भारत को मुक्ति मिल जायेगी। बल्कि उससे ठीक आगे बढ़कर एक नया टकराव का क्षेत्र खुल जायेगा और हम कमजोर हो जायेंगे।

446 दण्ड

4460. दण्ड की मात्रा किसी सिद्धांत के आधार पर तय न होकर, उस समय के वातावरण के आधार पर तय होती है। यदि दण्ड आवश्यकता से कम होगा, तो अपराधों में वृद्धि होगी और दण्ड आवश्यकता से अधिक होगा, तो तानाशाही का खतरा बढ़ेगा। वर्तमान समय में दण्ड की मात्रा कम होने से अपराधियों के मन से भय कम हो गया है।

4461. भारत में अपराधों की तुलना में दण्ड का प्रतिशत एक से भी कम है। भारत सरकार का कुल बजट पुलिस और न्यायालय को मिलाकर एक प्रतिशत से भी कम है तथा अन्य विकास कार्यों पर 80 प्रतिशत से अधिक। पुलिस और न्यायालय की 90 प्रतिशत शक्ति अन्य कार्यों पर खर्च कराई जाती है, तो सिर्फ 10 प्रतिशत अपराध नियंत्रण पर। इस तरह भारत के कुल बजट का 10 पैसा अपराध नियंत्रण तथा 99 रूपया 90 पैसा अन्य स्थानों पर खर्च होता है।

4462. भारत में अवैध बन्दूक-पिस्तौल की तुलना में अवैध गांजे को अधिक गम्भीर अपराध माना जाता है। भारत में पेशेवर हत्यारों की तुलना में साधारण बलात्कार हत्या को अधिक गम्भीर अपराध माना जाता है। भारत में आतंकवाद की तुलना में शराब बन्दी को अधिक महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है।

4463. पश्चिम में न्याय का सिद्धान्त है कि भले ही सौ अपराधी छूट जाये, पर एक भी निरपराध दण्डित न हो, क्योंकि पश्चिम में अपराध कम है। भारत में अपराध अधिक होने से पश्चिम का न्याय सिद्धान्त

गलत है। उचित होगा कि न्याय के सिद्धान्त में यह संशोधन हो कि न कोई अपराधी छूटे, न निरपराध दण्डित हो।

4464. भारत में बलात्कार, आतंकवाद, डकैती, हत्या आदि के लिए दोष सिद्धि का दायित्व पुलिस पर है, तो दहेज, छुआछूत, आदिवासी, हरिजन कानून उल्लंघन में निर्दोष सिद्ध होने का दायित्व आरोपी पर है, जबकि यह उलटा होना चाहिए।

4465. भारत में यदि कोई डकैत किसी की हत्या कर दे, तो सिर्फ पुलिस की चिन्ता तक सीमित है, किन्तु कोई भूख से मर जाये, तो सुप्रीम कोर्ट से लेकर केन्द्र सरकार तक सक्रिय हो जाती है। आपराधिक हत्या की तुलना में भूख से मरने वाले के परिवार को अधिक मुआवजा मिलता है।

4466. भारत में गांव-गांव तक अपराधियों से शरीफ लोग डरते हैं। वस्तुतः ऐसी परिस्थितियों में कई बार पुलिस को सूचना ही नहीं दी जाती अथवा अनेक बार मुकदमा दर्ज होने पर भी गवाही के अभाव में अपराधी छूट जाते हैं। भारत में साधारण व्यक्ति भी पाकिस्तान या अमेरिका के राष्ट्रपति की आलोचना करने या पुतला जलाने में भले ही सक्रिय दिखे, किन्तु स्थानीय गुण्डे या अपराधी के विरुद्ध बोलने से डरता है।

4467. भारत आज भी दण्ड संहिता और न्याय प्रक्रिया में अंग्रेजी काल के कानूनों की नकल करता है। यहां भी पुलिस द्वारा प्रमाणित अपराधी को तब तक निर्दोष माना जाता है, जब तक उस पर न्यायालय द्वारा अपराध सिद्ध न हो। न्यायालय, पुलिस को एक पक्षकार मानता है, न्याय सहायक नहीं। यह गलत है। न्यायालय को पुलिस द्वारा प्रमाणित आरोपी को संदिग्ध अपराधी और पुलिस

को न्याय सहायक मानना चाहिए। मुकदमा शुरू होते ही आरोपी का विस्तृत परीक्षण होना चाहिए।

4468. भारत में किसी निरपराध का दण्डित होना अन्याय माना जाता है, किसी अपराधी का निर्दोष छूटना अन्याय नहीं मानते। यह गलत है।

4469. प्राकृतिक दुर्घटना के लिए उसे गंभीर दण्ड देना अन्याय भी है और अव्यावहारिक भी। दुर्घटना होती है तो लापरवाही होती ही है और लापरवाही का दण्ड कभी आपराधिक नहीं होता क्योंकि लापरवाही का परिणाम गम्भीर हो सकता है किन्तु उसकी तुलना अपराध से नहीं की जा सकती।

4470. बहुत कम व्यक्ति उचित-अनुचित का निर्णय कर पाते हैं अन्यथा अधिकांश व्यक्ति या तो ईश्वर के भय से उचित आचरण करते या सामाजिक बहिष्कार के डर से। और यदि दोनों का भय न हो या असफल हो जाये, तब दण्ड का भय ही उन्हें रोक सकता है। स्पष्ट है कि समाज या तो समझा सकता है या सिर्फ बहिष्कार कर सकता है, दण्डित नहीं कर सकता। दण्ड तो राज्य ही दे सकता है। राज्य द्वारा दण्ड और हिंसा की मात्रा भय की आवश्यकता के अनुसार तय करनी चाहिए, किसी सिद्धान्त के आधार पर नहीं।

4471. दण्ड के तीन उद्देश्य होते हैं - (1) अपराधियों में सुधार, (2) पीड़ित को संतोष, (3) समाज में अपराध के प्रति भय का संदेश।

4472. वैसे तो किसी व्यक्ति को दण्ड देना भी विश्व व्यवस्था के कानूनों के अंतर्गत ही होना चाहिए। इसी व्यवस्था के अन्तर्गत दुनिया के साथ-साथ भारत में भी न्यायपालिका का यह दायित्व है कि वह किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के विरुद्ध किये गये किसी

संविधान संशोधन को रद्द कर दे। मुस्लिम और साम्यवादी देशों को छोड़कर दुनिया भर के न्यायालय इस दायित्व से बंधे हैं।

4473. यदि किसी व्यक्ति ने किसी सामाजिक नियम को तोड़ा, तो उसका बहिष्कार तक ही किया जा सकता है, दंड नहीं दिया जा सकता। क्योंकि सामाजिक नियम तोड़ना कोई अपराध नहीं होता, सिर्फ अनैतिक होता है। दण्ड देने का काम शासन का है, समाज का नहीं।

4474. दण्ड के चार प्रमुख उद्देश्य होते हैं :- (1) अपराधी के मन में भय, (2) समाज में अपराध के प्रति आकर्षण में कमी, (3) सामान्य समाज में कानून के प्रति विश्वास वृद्धि, (4) पीड़ित के प्रति न्याय। दण्ड का उद्देश्य कभी हृदय परिवर्तन नहीं होता, न ही दण्ड से मानवीयता का कोई सम्बन्ध होता है। हृदय परिवर्तन अथवा मानवता का प्रयोग दण्ड प्रक्रिया के पूर्व के सामाजिक प्रयोग होते हैं। इनका दण्ड प्रक्रिया में कोई महत्व नहीं है।

4475. भावनात्मक उद्वेग में किये गये अपराध और सोच समझकर किये गये अपराध के दण्ड में बहुत फर्क होता है। भावनात्मक अपराध में सामाजिक अपमान तथा दण्ड मिलकर सुधरने के अवसर पैदा करते हैं, दूसरी ओर सोच समझकर किये गये अपराधों में कठोरतम दण्ड भी अपर्याप्त ही होते हैं।

4476. दण्ड की मात्रा उस सीमा तक होनी चाहिए, जहां तक दण्ड अपराधियों के मन में भय पैदा करने में सफल हो सके, भले ही वह दण्ड कितना भी अमानवीय क्यों न हो। इस आधार पर आकलन करें, तो दण्ड की इस्लामिक तथा साम्यवादी प्रणाली आदर्श मानी जाती हैं। इन दोनों में अपराध नगण्य होते हैं। किन्तु इन दोनों प्रणालियों में एक बहुत बड़ी कमी भी है कि इनमें आरोपी तथा

पीड़ित के बीच तटस्थ समीक्षा के न्यायिक अवसर बहुत कम होते हैं।

4477. अपराधियों को दण्डित होना चाहिए, यह एक मौलिक आवश्यकता है। उसे पुलिस दण्ड दे या न्यायालय अथवा कोई अन्य यह संवैधानिक प्रक्रिया है, मौलिक आवश्यकता नहीं। न्याय मौलिक आवश्यकता है और कानून वैधानिक प्रक्रिया। यदि न्याय और कानून के बीच दूरी बढ़ती है, तो कानूनों में सुधार या संशोधन पर तो विचार सम्भव है, किन्तु न्याय की परिभाषा नहीं बदल सकती। पिछले कुछ वर्षों से जब से न्यायपालिका ने न्याय की अपेक्षा कानूनों की मजबूती में सक्रियता दिखानी शुरू की, तब से समाज में और ज्यादा प्रत्यक्ष दण्ड के प्रति लोगों का विश्वास बढ़ा।

448 मानवीय मृत्युदण्ड

4480. फांसी स्वयं में एक अमानवीय कार्य है। फांसी को इस तरह संशोधित करना चाहिए कि वह सजा प्राप्त को मृत्यु तक का एक विकल्प भी दे सके और समाज पर लम्बे समय तक भय उत्पादक प्रभाव भी छोड़ सके। फांसी की सजा प्राप्त व्यक्ति अपनी दोनों आंख निकलवाकर अर्थात् अन्धा बनकर जीने के लिए न्यायालय से निवेदन करे, तो न्यायालय आवश्यक जमानत पर तथा आवश्यक शर्तों के साथ उस व्यक्ति को तब तक स्वतंत्र जीने की छूट दे सकता है, जब तक अपराधी, न्यायालय तथा जमानतदार सहमत हों।

4481. फांसी की सजा वर्तमान समय में अल्प प्रभावी हो चुकी है और इसे अधिक प्रभावी बनाने के लिए कुछ न कुछ तो हमें करना ही होगा। भारत के वर्तमान वातावरण में दण्ड का तरीका और

ज्यादा अमानवीय बनाने की जरूरत है और यदि जरूरत पड़े, तो खुलेआम चौक पर फांसी की प्रथा को भी अल्पकाल के लिए जीवित किया जा सकता है। चौक पर फांसी देना या सिर काटकर घुमाना मजबूरी में अन्तिम विकल्प है, आदर्श स्थिति नहीं। अन्धा बनाकर उसे जमानत पर छोड़ देना एक नया प्रयोग हो सकता है।

4482. मानवीय फांसी का मतलब यह है कि अपराधी को यह विकल्प दिया जाये कि वह फांसी के दिन से अंधा होकर जमानत पर तब तक जीवित रहने का न्यायालय से या राष्ट्रपति से निवेदन कर सके, जब तक वह जीवित रहना चाहे।

4483. भारतीय दण्ड प्रक्रिया का उद्देश्य सिर्फ 'दण्ड के भय' के माध्यम से ही व्यक्ति में सुधार लाने का प्रयास होता है, हृदय परिर्वतन के माध्यम से नहीं। जबकि हमारी सामाजिक व्यवस्था में समाज अनुशासन द्वारा, धर्म हृदय परिर्वतन द्वारा तथा राज्य दण्ड व्यवस्था द्वारा अलग-अलग अपराध नियंत्रण का काम करते है।

449 भारतीय दण्ड संहिता

4490. दण्ड प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि उस दण्ड का समाज पर ऐसा प्रभाव पड़े, कि अन्य लोग अपराध करने से डरें। पश्चिम के देशों ने यह सिद्धान्त बनाया है कि चाहे सौ अपराधी छूट जाये पर एक भी निरपराध दण्डित न होने पाये। साम्यवादी देशों ने ठीक इसके विपरीत धारणा रखी कि चाहे सौ निरपराध भले ही सजा पा जाये, किन्तु एक भी अपराधी न बच पाये। दोनों ही गलत है। हमारी नीति यह होनी चाहिए कि न कोई अपराधी निर्दोष छूटे, न ही निर्दोष दण्डित हो।

4491. अपराधिक प्रवृत्ति के मामले में आम तौर पर यह सिद्धांत भी काम करता है कि किसी बीमारी के कीटाणुओं पर एक निश्चित मात्रा से कम दवा का उपयोग करने से उक्त कीटाणुओं की सहन शक्ति में वृद्धि हो जाती है।

4492. भारतीय दण्ड प्रक्रिया का उद्देश्य सिर्फ दण्ड के भय के माध्यम से ही व्यक्ति में सुधार लाने का प्रयास होता है, हृदय परिर्वतन के माध्यम से नहीं।

4493. समाजशास्त्र के विषयों में अनाड़ी राजनीतिज्ञ जब टांग फंसाते हैं, तब वातावरण बिगड़ने से सिर्फ कानून नहीं रोक सकता। चरित्रहीन लोग जब चरित्रवान दिखने का प्रयत्न करने के क्रम में चरित्र की व्याख्या करने लगें, तो परिणाम तो भयंकर होना ही है।

450 व्यभिचार और बलात्कार

4500. स्त्री-पुरुष के बीच शारीरिक सम्बन्ध और आकर्षण प्राकृतिक भूख है। इसमें द्विपक्षीय संतुष्टि निहित है, एकपक्षीय नहीं। इस द्विपक्षीय क्रिया में ही सृजन का भी संदेश निहित है। यदि दूरी घटेगी, तो खतरा बढ़ेगा और बढ़ेगी तो सृजन रूकेगा। यह दूरी संतुलित होनी चाहिए। इस संतुलन का नाम विवाह और परिवार है। आज तक हमारी सरकार तय नहीं कर सकी कि वह दूरी घटाने की पक्षधर है या बढ़ाने की। महिला समानता, महिला सशक्तिकरण सह शिक्षा के नाम पर दूरी घटाने की बात होती है, तो बलात्कार के अतिरंजित कानून, वैश्यालय नियंत्रण, महिला सुरक्षा, बारबाला कानून आदि दूरी बढ़ाने के। राज्य दोनों विपरीत दिशाओं में एक साथ सक्रिय है।

4501. कोई व्यभिचार चाहे आश्रमों में भी हो, अपराध नहीं होता,

अनैतिक या असामाजिक हो सकता है। व्यभिचार के लिए किसी का सामाजिक बहिष्कार हो सकता है, किन्तु दण्ड नहीं दे सकते। नासमझ नेताओं ने तो बारबालाओं या वैश्यावृत्ति तक पर रोक लगा दी है।

4502. प्राकृतिक संरचना के आधार पर पति को आक्रामक और पत्नी को आकर्षक होना चाहिए। वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में धीरे-धीरे महिलाओं को आक्रामक बनाया जा रहा है, जो ठीक नहीं है।

4503. स्त्री और पुरुष के बीच एक-दूसरे के प्रति आकर्षण सृष्टि की रचना के लिए अनिवार्य होता है। विशेष परिस्थितियों में ही उसे नियंत्रित या संतुलित करने का प्रयास किया जा सकता है।

4504. पुराने जमाने में परिवार और समाज का अनुशासन था। अब वर्तमान समय में परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को जान बूझकर कमजोर किया गया। पुराने जमाने में छेड़छाड़ की घटनाओं को विशेष परिस्थिति में ही कानून की शरण में लिया जाता था, अन्यथा ऐसी बातें सामाजिक स्तर पर निपटा ली जाती थीं या छिपा ली जाती थीं। अब ऐसी घटनाओं को बढ़ा-चढ़ा कर प्रचारित करना एक फैशन बन गया है।

4505. वर्तमान समय में हर पुरुष को अपराधी सिद्ध करने की होड़ मची है। मेरा स्वयं का अनुभव है कि जो महिलाएं भारत की महिलाओं का संवैधानिक पदों पर प्रतिनिधित्व कर रही हैं, उनमें से अनेक ऐसी हैं जिनका व्यक्तिगत जीवन कलंकित रहा है। उनमें से कई तो किसी बड़े राजनेता के साथ जुड़ी भी रही हैं और उन्हें ऊँचे पद दिलाने में यह जुड़ाव महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है।

4506. यह नियम है कि कोई बांध बनाने के पहले उसके अतिरिक्त जल

के निकलने के लिए सुरक्षित मार्ग छोड़ा जाता है। हमारे नासमझ नेता बांध भी बनाना चाहते हैं और अतिरिक्त जल निकास के मार्ग भी बंद करना चाहते हैं। महिला और पुरुष के बीच दूरी भी घटाना चाहते हैं तथा साथ-साथ विवाह की उम्र भी बढ़ाते रहना चाहते हैं।

4507. शारीरिक भूख को सीमा से अधिक रोकने की कोशिश की जायेगी, तो उससे विकृति पैदा होगी। यदि ऐसी व्यवस्थाओं को आवश्यकता से अधिक नैतिकता की ताकत से ढंका जायेगा तब भी नुकसान बहुत होगा। यदि ऐसी व्यवस्थाओं को कानून के द्वारा अपराध घोषित कर रोकने की कोशिश होगी, जैसे कि वर्तमान में हो रही है, तो समाज को अपुरणीय क्षति होगी।

4508. व्यभिचार के मामले में स्त्री और पुरुष की भूमिका बराबर ही होती है, क्योंकि एक व्यभिचार की घटना में एक स्त्री और एक पुरुष की भूमिका समान ही होती है। पता नहीं कि यौन शोषण अपराध कैसे हो गया, जबकि किसी भी प्रकार का शोषण अनैतिक होता है, असामाजिक होता है, अपराध नहीं। वर्षों साथ साथ रहकर सहमत सेक्स को भी शोषण कहकर अपराध कहना स्वयं में गलत सोच है।

451 बलात्कार

4510. स्त्री-पुरुष के बीच बिना सहमति के बनाया जाने वाला सम्बन्ध बलात्कार के रूप में अपराध होता है। बलात्कार के अतिरिक्त अन्य सहमत सम्बन्ध अनैतिक हो सकते हैं, किन्तु बलात्कार नहीं। स्वेच्छा से बनने वाले ऐसे सम्बन्ध में बाधा अपराध है। ऐसे सहमत सम्बन्ध को सामाजिक सहमति से नियंत्रित किया जा सकता है, किन्तु कानून का हस्तक्षेप गलत है, जैसा वर्तमान में

होता है। बलात्कार सम्बन्धी वर्तमान कानून पूरी तरह अमानवीय और असामाजिक है। इनमें आमूल-चूल बदलाव उचित है।

4511. भारत में बलात्कार तेजी से बढ़ रहे हैं, जिसके लिए सरकारी कानून जिम्मेदार हैं। सरकार विवाह की उम्र बढ़ाती है और वेश्यावृत्ति रोकती है, इससे बलात्कार बढ़ते हैं। भारत में बलात्कार के सरकारी आंकड़े पूरी तरह गलत हैं। इनमें सिर्फ पांच-सात प्रतिशत मामले ही बलात्कार के होते हैं। अन्य सभी मामले बलात्कार न होकर सिर्फ व्यभिचार होते हैं, जो गैरकानूनी होते हैं। ऐसे मामले अनावश्यक कानून के कारण होते हैं।

4512. भारत में बलात्कार के साथ हत्याएं बहुत तेजी से बढ़ी हैं, क्योंकि सरकार ने बलात्कार में दण्ड को गलत तरीके से बहुत बढ़ा दिया। यदि सामान्य बलात्कार और सामान्य डकैती की तुलना करें, तो डकैती अधिक गम्भीर अपराध है। बलात्कार शब्द का महिला-पुरुष के बीच वर्ग संघर्ष के लिए जिस तरह दुरूपयोग हो रहा है, वह महिला-पुरुष के आपसी सम्बन्धों को व्यापक नुकसान करेगा। पश्चिम से आयी यह बीमारी सामाजिक व्यवस्था को व्यापक नुकसान करेगी। सरकार को चाहिए कि बलात्कार सम्बन्धी सभी नये कानून समाप्त करके पुराने कानून तक सीमित कर दे।

4513. अब तक बलात्कार की घटनाएं अनियंत्रित नहीं हुई हैं, यह भारतीय समाज व्यवस्था के अवशेषों का ही प्रभाव है, अन्यथा राजनेताओं ने तो अपनी ओर से स्थिति को भयावह बनाने की कोई कोर कसर नहीं छोड़ रखी है। स्वच्छन्द सेक्स सहमत लोगों के बीच विभिन्न कानूनों द्वारा दूरी बढ़ाना और स्वच्छन्द सेक्स असहमत लोगों के बीच दूरी घटाने के प्रयत्न किसी षडयंत्र के अन्तर्गत जानबूझकर

हो रहे हैं अथवा भूलवश यह तो राजनेता ही बता सकते हैं, किन्तु इन प्रयत्नों के परिणाम बढ़ते बलात्कारों के रूप में समाज को भुगतने पड़ रहे हैं, यह बात पूरी तरह सच है। समाज में महिलाओं पर बलात्कार के मामले लगातार बढ़ रहे हैं। यह बात सच है। विचारणीय प्रश्न यह है कि बलात्कार बढ़ने के लिए समाज दोषी है या नई राजनैतिक व्यवस्था?

4514. मेरा व्यक्तिगत और पारिवारिक तथा सामाजिक रूप से भी यह अनुभव है कि भारत की आबादी के आधे से अधिक बालिग पुरुष जीवन में कभी न कभी ऐसी गलतियां करते हैं, जो बलात्कार तो नहीं होती, किन्तु अनैतिक होती हैं, लगभग पिछले बारह वर्ष के पूर्व बने कानून के आधार पर पुरुषों के लिए अपराध भी होती है। जबकि वास्तव में वे गलतियां सिर्फ अनैतिक होती हैं, अपराध नहीं।

4515. किसी महिला की गुण्डों से सुरक्षा करने का अर्थ उसके साथ बलात्कार का लाइसेंस नहीं है। किसी बलात्कार के खतरे से जूझ रही युवती को उस बलात्कारी से बचाकर ले जाने वाला यदि बलात्कारी है, तो वह कोई आदर्श स्थिति नहीं है, बल्कि मजबूरी है।

4516. व्यभिचार की घटनाओं को महिलाओं के विरुद्ध पुरुषों का अत्याचार स्थापित करके महिला-पुरुष के बीच के सांमजस्य को वर्ग संघर्ष में बदलना तो इन राजनेताओं का उद्देश्य है। कहीं ऐसा तो नहीं हैं कि बढ़ते हुए बलात्कार में अपनी अक्षमता के संभावित छींटों के डर से विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका, मीडिया, समाजसेवी, मानवाधिकार संगठन पहले ही जोर-जोर से चिल्ला-चिल्ला कर अपना दामन बचाते रहे हों?

4517. बलात्कार एक अपराध है। अपराधों के लिए दण्ड होना चाहिए, लेकिन दण्ड तुलनात्मक होना चाहिए, भावनात्मक नहीं। यदि हर बलात्कारी को फांसी की बात होगी, तो बलात्कार के साथ हत्या जुड़ने पर क्या होगा? फांसी किसी समस्या का समाधान न होकर, समाज में अपराधों के विरुद्ध भय पैदा करने का प्रतीक मात्र है। प्रतीक कठोर होना चाहिए, किन्तु यदा-कदा ही उपयोग करना चाहिए। यदि बलात्कार की परिभाषा और दण्ड की मात्रा में सुधार नहीं किया गया, तो बलात्कारो की ऐसी बाढ़ आयेगी कि रोकने के लिए सेनाएं भी बुलानी पड़ सकती हैं।

4518. बलात्कार के गंभीर अपराधों को छोड़कर अन्य किसी भी प्रकार के महिला-पुरुष संबंधों पर राज्य को कोई कानून नहीं बनाना चाहिए। यहां तक कि छेड़छाड़ की घटनाएं भी यदि सामाजिक नियंत्रण से बाहर न हो, तब तक सरकार को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

4519. बढ़ते बलात्कार समाज के लिए एक कलंक है। उन्हें रोकने के लिए चौतरफा प्रयत्न करने होंगे। हमें यह ध्यान रखना होगा कि बलात्कार रोकने के नाम पर स्त्री और पुरुष के बीच के आकर्षण पर विपरीत प्रभाव न पड़े। हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि कोई व्यक्ति सेक्स की भूख के कारण मानसिक रोगी न हो जाये या कोई अन्य गंभीर अपराध न कर बैठे।

4520. बलात्कार सामान्यतया दो परिस्थितियों में होता है :- 1. आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, 2. इच्छाओं की पूर्ति के लिए।

4521. बलात्कार के मुकदमें बढ़ने में वे कारण महत्वपूर्ण नहीं जो बताये जाते हैं। मेरे विचार में प्रमुख कारण है कि करीब दो प्रतिशत महिलाओं का परिवार व्यवस्था से मोह भंग होना। ये महिलाएं

अपनी शारीरिक भूख मिटाने के निमित्त किसी खूंटे से बंध कर नहीं रहना चाहतीं। इस इच्छा पूर्ति के लिए उनके लिए सबसे अधिक सहायक है, महिला सशक्तिकरण की आवाज मजबूत करना।

4522. किसी पुरुष द्वारा किसी महिला के साथ उसकी सहमति के बिना यौन संबंध ही बलात्कार है। बलात्कार महिला के मूल अधिकारों का उल्लंघन है और अपराध भी। बलात्कार किसी भी सभ्य समाज का कलंक होता है। जो सरकार बलात्कार नहीं रोक पा रही, वही सरकार वेश्यावृत्ति रोकने का बहुत प्रयास करती है। किसी पुरुष द्वारा किसी महिला के साथ बलपूर्वक किया गया सेक्स संबंध बलात्कार होता है। बलात्कार में शक्ति प्रयोग अनिवार्य शर्त होती है। भारत में बलात्कार की गलत परिभाषा प्रचलित की गई हैं।

4523. अस्सी प्रतिशत तक बलात्कारों की थाने में रिपोर्ट ही नहीं होती है, दूसरी ओर थाने में हुई रिपोर्ट में से अस्सी प्रतिशत तक असत्य, भ्रमपूर्ण अथवा शोषण के लिए होती है।

455 शोषण, समस्या बनाम अपराध

4550. शोषण अनैतिक है, अपराध नहीं। शोषण सामाजिक समस्या है, राजनैतिक नहीं। शोषण सामाजिक दबाव से दूर होगा, कानून से नहीं। शोषण को अपराध घोषित करके राजनेताओं को हस्तक्षेप के और अवसर देना कोई बुद्धिमानी नहीं होगी। हमें दो बुराइयों में से किसी एक का चयन करना है। 1-शोषण, 2-राजनेताओं का अत्याचार।

4551. संगठन सर्वदा मजबूतों से सुरक्षा तथा कमजोरों का शोषण करते हैं।

4552. भारत की वर्तमान व्यवस्था पूंजीपतियों तथा बुद्धिजीवियों द्वारा

श्रम और धनहीनों का शोषण करने का षड़यंत्र मात्र है,

4553. जब से भारतीय संविधान ने हिन्दुओं के पारिवारिक मामलों में हिन्दू कोड बिल बनाकर प्रवेश और हस्तक्षेप किया है, तब से हिन्दुओं में जलने-जलाने की घटनाएं बहुत बढ़ी हैं, जबकि मुसलमानों में नहीं बढ़ी। पारिवारिक मामलों में शासन को कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

4554. पहले शरीफ लोगों का शोषण धूर्त सवर्ण किया करते थे। स्वतंत्रता के बाद धूर्त अवर्ण भी उस शोषण में शामिल हो गये और अब धूर्त अवर्ण ही मुख्य शोषणकर्ता बन गये हैं। धूर्त के श्रेष्ठता संघर्ष को उदाहरण स्वरूप बताकर जातीय संघर्ष को हवा देने से समाज व्यवस्था कमजोर होगी और समाज में अव्यवस्था का लाभ हमेशा ही धूर्त उठाते रहे हैं, चाहे वे सवर्ण हों या अवर्ण।

4555. कुछ लोग एक ओर तो बन्द समाज को खुले समाज में बदलने हेतु प्रयत्नशील हैं, तो दूसरी ओर बन्द समाज के नियम कानूनों को खुले समाज में उसी तरह या और जटिल स्वरूप में रखना चाहते हैं, जो बिल्कुल ही गलत है।

4556. किसी भी प्रकार का शोषण कोई अपराध नहीं होता, चाहे वह शोषण आर्थिक, सामाजिक या दैहिक कैसा भी हो? शोषण अनैतिक, असामाजिक कार्य माना जा सकता है। शोषण को अपराध कहना गलत है। समाज में प्रारम्भ से अन्त तक स्वतंत्र प्रतिस्पर्धाएं होती हैं। किसी भी प्रतिस्पर्धा को शोषण कहा जाने लगा है, जो गलत है। शोषण रोकना सरकार का काम नहीं है।

4557. दुनिया में सर्वाधिक शोषण, अत्याचार और हत्याएं धर्म के नाम पर होती हैं। दूसरा क्रम राजनीति का है और तीसरा जातिवाद

का। व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ण अपराधों का क्रम तो चौथा होता है, अतः अधिकांश सामाजिक संगठन धर्म, राजनीति, और जाति को हथियार बनाते हैं।

460 भय

4600. भय, किसी भी व्यक्ति से अपने अनुसार आचरण कराने का सबसे अधिक सुविधाजनक और सफल किन्तु अन्यायपूर्ण तथा अमानवीय मार्ग है। अपराध नियंत्रण के लिए भय तीन प्रकार से प्रचलित है :- (1) ईश्वर का, (2) समाज का, (3) सरकार का। सरकार का भय सिर्फ दो प्रतिशत आबादी पर ही प्रभाव डालने में सफल हो सकता है। यदि अपराध 2% से अधिक हो तो सरकार का भय प्रभावहीन होता है। समाज का भय 10% आबादी पर प्रभाव डाल पाता है, शेष 88% भय तो ईश्वर का ही काम करता है। ईश्वर का भय विश्वास घटने से प्रभावहीन हो गया है। समाज का स्वरूप अस्तित्वहीन हो गया है। सरकार ही भय पैदा करने का एकमात्र आधार है। यही कारण है कि वर्तमान समय में भय का प्रभाव घटता जा रहा है।

4601. भय का उपयोग बिल्कुल अंतिम स्थिति में ही करना चाहिए, सामान्यतया नहीं। सामान्य स्थिति में भय का प्रयोग जितना घातक होता है, विशेष स्थिति में भय का प्रयोग न करना या कम करना उससे अधिक घातक होता है। वर्तमान समय में नक्सलवादी, आतंकवादी अथवा अपराधी तत्व समाज में अपना भय पैदा करने में सफल हैं, जबकि सरकार उनके अंदर भय पैदा करने में सफल नहीं है, क्योंकि सरकार भय (शक्ति) का प्रयोग आवश्यकता से कम कर रही है। शक्ति का सन्तुलित उपयोग सरकार द्वारा भय पैदा

करने का एकमात्र आधार है।

461 अनुशासन

4610. बाधा रहित प्रतिस्पर्धा और सहजीवन के बीच समन्वय ही आदर्श व्यवस्था मानी जाती है। प्रतिस्पर्धा के लिए असीम स्वतंत्रता और सहजीवन के लिए अनुशासन अनिवार्य है।

490 नरेन्द्र मोदी

4900. नरेन्द्र मोदी कभी न उग्रवादी विचारों के रहे और न ही उदारवादी विचारों के। उनकी गिनती सफल कुटनीतिज्ञ के रूप में की जाती है। प्रारम्भ में उन्होंने गुजरात में इस्लामिक उग्रवाद को जिस कुशलता से सबक सिखाया तथा धीरे-धीरे मुसलमानों में अपनी उदारवादी छवि बनाने की कोशिश की, वह उनकी एक अलग छाप स्थापित करती है। पिछले दस वर्षों में भी नरेंद्र मोदी ने उदारवादी हिन्दुत्व की छवि प्रस्तुत की है।

4901. नरेन्द्र मोदी के भाषणों में कला होती है, आकर्षण होता है, जबकि राहुल गांधी के भाषण नीरस, किन्तु बिना लाग लपेट के होते हैं। नरेन्द्र मोदी सफलता पूर्वक जीवन भर प्रधानमंत्री रह सकतें हैं, क्योंकि किसी मजबूत और समझदार को किसी पद से आसानी से नहीं हटाया जा सकता, दूसरी ओर यदि राहुल गांधी प्रधानमंत्री बन जाते हैं, तो या तो एक वर्ष में छोड़कर भाग जाएंगे या हटा दिये जाएंगे। मेरे विचार में राहुल गांधी के हाथों देश की राजनीतिक बागडोर सौंपना उचित नहीं है, बल्कि राहुल गांधी का राजनीति पर नियंत्रण होना ही सामाजिक हित में है।

491 प्रधानमंत्री

4910. प्रधानमंत्री प्रत्येक मंत्री से ऊपर होता है, किन्तु मंत्रीमंडल से उसे नीचे ही रहना चाहिए। उसे पार्टी से भी नीचे रहना पड़ता है। न अडवाणी जी ने कभी पार्टी की परवाह की, न नेहरू ने और न ही इन्दिरा ने।

4911. यदि एक ही परिवार ने कई पीढ़ियों तक प्रधानमंत्री पद आरक्षित करा लिया है, तो ऐसे आरक्षण को अस्वीकार करना ही होगा। वर्तमान समय में अगर कोई चीज लोकतंत्र की सबसे बड़ी शत्रु है, तो वह है देश के प्रधानमंत्री पद का किसी एक परिवार के लिए आरक्षित हो जाना।

4912. मैं समझता हूं कि प्रधानमंत्री बनने के लिए पांच अनिवार्य योग्यताएं आवश्यक होती हैं - 1. ईमानदारी, 2. लोकतंत्र पर विश्वास, 3. शालीनता, 4. समझदारी, 5. कठोर परिश्रम। मेरे विचार में नरेन्द्र मोदी इन सब मामलों में सबसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति हैं।

4913. आज के राजनीतिक वातावरण को देखते हुए लगता है कि प्रधानमंत्री पद गांधी-नेहरू परिवार अपना पारिवारिक अधिकार मानता है, जिस पर वे अपने ही परिवार के किसी सदस्य को देखना चाहते हैं। स्वतंत्रता के बाद से ही चली आ रही परिवारवाद की यह समस्या आज देश की सबसे बड़ी चुनौती बन गई है। गांधी परिवार में ऐसी कोई विशेषता नहीं है, जिसके बिना इस देश का काम न चल सके।

4914. एक विकार की तरह कांग्रेस में यह विचार हमेशा प्रभावी रहा है कि योग्यता का मतलब होता है प्रधानमंत्री का पद और प्रधानमंत्री के पद का मतलब होता है नेहरू गांधी वंश परंपरा। क्या कांग्रेस की

नजर में योग्यता का अर्थ प्रधानमंत्री की कुर्सी मात्र है या गांधी नेहरू परिवार का अंतिम लक्ष्य ही प्रधानमंत्री की कुर्सी तक पहुंचना है?

4915. प्रधानमंत्री के पद पर अगर किसी एक ही परिवार के लोगों का कब्जा बना रहे, तो लोकतंत्र का झुकाव राजशाही की ओर बढ़ता जाता है। वर्तमान समय में अगर कोई चीज लोकतंत्र की सबसे बड़ी शत्रु है, तो वह है देश के प्रधानमंत्री पद का किसी एक परिवार के लिए आरक्षित हो जाना।

4916. लोकतंत्र में प्रधानमंत्री का पद संवैधानिक प्रमुख तक ही सीमित होता है। यदि प्रधानमंत्री अपने मंत्रिमंडल तथा पार्टी प्रमुख की सलाह से काम करे, तो यह तो आदर्श स्थिति मानी जानी चाहिए।

4917. मनमोहन सिंह न अच्छे प्रधानमंत्री हैं न बुरे। स्वतंत्रता के बाद अब तक जितने प्रधानमंत्री हुए, उन सबमें ये सबसे कम बुरे हैं।

4918. मेरा अपना विचार है कि स्वतंत्रता के बाद मनमोहन सिंह के कार्यकाल में पहली बार बिना नेता के देश चलता रहा। न्यायालय मजबूत होता रहा। सी. ए. जी. भी बहुत मजबूत हुआ। घपले उजागर होते रहे। सेना तक के भ्रष्टाचार प्रत्यक्ष दिखने लगे। काले धन के खिलाफ आंदोलन होते रहे। संसद पर प्रश्न उठते रहे। देश में साठ वर्षों से फैलाये गये शासक और शासित के विचार को चुनौती मिलती रही। शासन पक्ष का चौथा स्तंभ बनकर लाभ उठाने वाला मीडिया भी मनमोहन सिंह की अकेन्द्रित नीति के विरुद्ध रहा। अब स्वतंत्रता के बाद पहली बार एक नेता के अन्तर्गत देश चल रहा।

4919. मनमोहन सिंह ने नेहरू के उस समाजवादी आर्थिक ढ़ांचे को भी ध्वस्त करने का काम किया, जिसके सहारे नेहरू गांधी परिवार आर्थिक तरक्की का दंभ भरता रहा। नेहरू के इसी आर्थिक मॉडल

के सहारे समाजवाद लाने और गरीबी हटाने की अनेक कोशिश की गई, लेकिन वे इसमें कामयाब नहीं हुए।

4920. मेरे विचार में प्रधानमंत्री चुनते समय भी गुप्त मतदान अवश्य होने की परिपाटी विकसित करनी चाहिए।

4921. प्रधानमंत्री की योग्यता का एकमात्र आधार उसके निर्वाचन मंडल का विश्वास होता है। अन्य कुछ नहीं। यह योग्यता सापेक्ष होती है, निरपेक्ष नहीं। हम ऐसे मामले में यदि निर्वाचित व्यक्ति की आलोचना करें, तो ऐसी आलोचना गलत है। वास्तव में ऐसी आलोचना निर्वाचन मंडल की होनी चाहिए, जिसने अन्य प्राथमिकताओं की अनदेखी करते हुए ऐसे व्यक्ति को चुना है।

4922. वर्तमान समय में अगर कोई चीज लोकतंत्र की सबसे बड़ी शत्रु है, तो वह है देश के प्रधानमंत्री पद का किसी एक परिवार के लिए आरक्षित हो जाना। आज के राजनीतिक वातावरण को देखते हुए लगता है कि प्रधानमंत्री पद गांधी नेहरू परिवार की संपत्ति हो गई है, जिस पर वे अपने ही परिवार के किसी सदस्य को देखना चाहते हैं। स्वतंत्रता के बाद से ही चली आ रही परिवारवाद की यह समस्या आज देश की सबसे बड़ी चुनौती बन गई है।

4923. गांधी नेहरू परिवार ने महात्मा गांधी के नाम का इस्तेमाल कर राजनीतिक सफलता तो अर्जित कर ली, लेकिन उन्होंने गांधी जी के विचारों को तिलांजलि दे दी। नेहरू परिवार ने समाज को रास्ता दिखाया, लेकिन उस रास्ते पर चलने से वे खुद कतराते रहे।

4924. यदि नरेन्द्र मोदी पर विचार करें तो उनका प्रधानमंत्री बनना सर्वाधिक आसान और खतरनाक मार्ग है। नरेन्द्र मोदी देश की सभी समस्याओं के समाधान के लिए तो सर्वाधिक उपयुक्त हैं,

किन्तु तानाशाही का भी उतना ही खतरा है। समस्याओं के त्वरित समाधान और तानाशाही का चोली दामन का संबंध होता है। यह तो अन्तिम विकल्प होना चाहिए।

4925. भारत तानाशाही का देश न होकर लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र में देश किसी व्यवस्था से चलता है तथा प्रधानमंत्री किसी व्यवस्था का प्रमुख होता है। प्रधानमंत्री कभी भी ऐसा नहीं होना चाहिए जो स्वयं को व्यवस्था से ऊपर माने। प्रधानमंत्री को विशेष स्थिति में वीटो का अधिकार है। किन्तु प्रधानमंत्री का यह भी कर्तव्य है कि वह कभी वीटो का उपयोग न करे। वही प्रधानमंत्री अच्छा होता है, जो कम से कम वीटो का उपयोग करे।

4926. राजीव गांधी एकमात्र प्रधानमंत्री हुए, जिन्होंने ग्राम सभाओं को संवैधानिक मान्यता दी। स्वतंत्रता के बाद भारत में जयप्रकाश तथा अन्ना हजारे के अतिरिक्त किसी ने गांधी मार्ग को महत्व नहीं दिया।

4927. सन् सैंतालीस से ही पण्डित नेहरू प्रधानमंत्री के पद को अधिक से अधिक शक्तिशाली बनाने की जो भूल करते रहे, उसी का परिणाम है कि आज प्रधानमंत्री पद इतना ज्यादा महत्वपूर्ण बन गया है।

4928. भारत की राजनीति में पांच समूह कुछ ज्यादा ही ब्लैकमेल कर रहे हैं - 1. आदिवासी हरिजन, 2. महिला, 3. मुसलमान, 4. कश्मीर, 5. मध्यमवर्ग।

4929. प्रधानमंत्री को अधिकतम लोकतांत्रिक होना चाहिए तथा गृहमंत्री को न्यूनतम लोकतांत्रिक होना चाहिए।

4930. प्रधानमंत्री की उम्मीदवारी पार्टी की अमानत है या उनका अधिकार? स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री पद देश की जनता की अमानत

है न कि किसी का अधिकार।

4931. एक विकार की तरह कांग्रेस में यह विचार हमेशा प्रभावी रहा है कि योग्यता का मतलब होता है प्रधानमंत्री का पद और प्रधानमंत्री के पद का मतलब होता है नेहरू गांधी वंश परंपरा।

4932. क्षमता और योग्यता एक अलग गुण है और नीयत अलग। दोनों एक ही व्यक्ति में आमतौर पर नहीं होता। बिरले लोगों में ही दोनो गुण एक साथ होते हैं। जो लोग क्षमता और योग्यतावान होते हैं, वे आमतौर पर चालाक होते हैं। उनकी चालाकी जल्दी समझ में नहीं आती है।

4933. राहुल गांधी प्रधानमंत्री पद के लिए अक्षम, अपरिपक्व तथा अनाड़ी दिखते हैं। किसी व्यक्ति का अनेक बार चुनाव जीतने का यह अर्थ नहीं है कि वह व्यक्ति योग्य ही हो।

4934. भिंडरावाले को पैदा करना और खड़ा करना इंदिरा जी का व्यक्तिगत स्वार्थ था और भिंडरावाले को खत्म करना एक राष्ट्रीय मजबूरी थी तथा प्रधानमंत्री के रूप में इंदिरा गांधी का दायित्व भी।

4935. जब किसी प्रधानमंत्री के कार्यकाल की पिछले 70 वर्षों से तुलना होती है, तब किसी वर्तमान शासक के गुण-दोष की समीक्षा न करके पिछली सरकारों की तुलना होती है। गुण-दोष की तुलना उस संभावित शासक से होती है, जो भविष्य के लिए और अधिक अच्छा दिख रहा हो।

4936. मैं आश्वस्त हूं कि भारत का प्रधानमंत्री कोई भी हो, किन्तु अब भारत वैसे दिनों को पार करके आगे बढ़ चुका है, जैसे दिन पिछले 67 वर्षों में देखने को मिले, भविष्य अच्छा ही होगा।

4937. स्वतंत्रता के बाद मनमोहन सिंह सबसे अधिक लोकतांत्रिक

और सफल प्रधानमंत्री माने जाते हैं। पुत्रमोह में सोनिया गांधी ने मनमोहन सिंह को अस्थिर किया।

4938. देश में यदि मजबूत प्रधानमंत्री की मांग उठती है, तो यह मांग ही घातक है। यदि ऐसी आवश्यकता महसूस होती है तो यह न्याय की विफलता है। वर्तमान में नरेन्द्र मोदी की लोकप्रियता का बढ़ना एक खतरे की घंटी है, जिसकी आवाज न सुनना न्यायालय के लिए भी घातक है। इस आवाज को किसी कानून से दबाना संभव नहीं। यह आवाज तो सशक्त लोकतंत्र से ही दब सकती है, जिसके लिए न्यायालय की भी भूमिका आवश्यक है।

सामाजिक

❒

2

500 व्यक्ति

5000. प्राकृतिक रूप से कोई भी दो व्यक्ति किसी भी मामले में समान नहीं होते। सबमें कुछ-न-कुछ असमानता अवश्य होती है। असमानता प्राकृतिक है और समानता का प्रयत्न करना षड्यंत्र। यदि असमानता बहुत अधिक हो जाये, तब समाज अथवा राज्य को उसमें इस प्रकार हस्तक्षेप करना चाहिए कि किसी के मौलिक अधिकारों का हनन न हो।

5001. व्यक्ति दो प्रकार के होते हैं - भावना प्रधान और बुद्धि प्रधान। भावना प्रधान लोग शरीफ माने जाते हैं और बुद्धि प्रधान लोग चालाक। हर बुद्धि प्रधान बिल्लियों के बीच बंदर की भूमिका में भावना प्रधान लोगों को ठगने के लिए समानता दूर करने के प्रयास को हथियार बनाते हैं।

5002. गरीब अमीर, ऊँच-नीच, छोटा-बड़ा, कमजोर और मजबूत भ्रामक शब्द है। हर व्यक्ति अपने से मजबूत की अपेक्षा कमजोर और कमजोर की अपेक्षा मजबूत समझता है। यह सापेक्ष शब्द है, निरपेक्ष नहीं।

5003. व्यक्ति एक प्राकृतिक इकाई है और व्यक्ति समूह संगठनात्मक। परिवार एक से अधिक व्यक्तियों को मिलाकर बनता है। इसलिए

परिवार को संगठनात्मक अथवा संस्थागत इकाई माना जा सकता है, प्राकृतिक नहीं।

5004. प्रत्येक व्यक्ति को एक प्राकृतिक अधिकार प्राप्त होता है, और वह है उसकी स्वतंत्रता। प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता असीम होती है, उस सीमा तक जब तक किसी अन्य व्यक्ति की सीमा प्रारंभ न हो जाये। प्रत्येक व्यक्ति का एक सामाजिक दायित्व होता है और वह होता है उसका सहजीवन। प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता की सुरक्षा राज्य का दायित्व होता है तथा व्यक्ति को सहजीवन की ट्रेनिंग देना समाज का दायित्व होता है। व्यक्ति की स्वतंत्रता को भारत में व्यक्ति से खतरा कम होता है, समाज से आंशिक होता है, और सरकार से अधिक।

5005. व्यक्ति की क्षमता का निर्धारण तीन आधारों पर होता है – (1) जन्मपूर्व के संस्कार, (2) पारिवारिक वातावरण, (3) सामाजिक परिवेश। दुनिया में व्यक्ति दो विपरीत प्रवृत्ति के होते हैं। सामाजिक और समाज विरोधी। इन प्रवृत्तियों में जन्म पूर्व के संस्कार, पारिवारिक वातावरण और सामाजिक परिवेश का मिला-जुला स्वरूप होता है।

5006. व्यक्ति तीन जगह से सुरक्षित होता है - 1. परिवार से, 2. समाज से, 3. सरकार से। तीनों ही मिलकर व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी देते हैं।

5007. व्यक्ति एक मूल इकाई है तथा अन्य सभी इकाईयां व्यवस्था की इकाई मानी जाती हैं। व्यक्ति को तीन प्रकार के अधिकार प्राप्त होते हैं-1- प्राकृतिक अधिकार, 2- संवैधानिक अधिकार, 3- सामाजिक अधिकार। व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकारों का उल्लंघन

अपराध, संवैधानिक उल्लंघन गैरकानूनी तथा सामाजिक का उल्लंघन अनैतिक माना जाता है। अपराध को रोकना समाज तथा सरकार का संयुक्त उत्तरदायित्व माना जाता है। गैरकानूनी काम को रोकना सरकार का उत्तरदायित्व होता है तथा अनैतिक को रोकना समाज का उत्तरदायित्व होता है। अनैतिक रोकने में सरकार की भूमिका स्वैच्छिक कर्तव्य तक सीमित होती है, दायित्व नहीं।

5008. व्यक्ति को सहजीवन का प्रशिक्षण देना समाज का दायित्व होता है तथा सुरक्षा और न्याय कर्तव्य। समाज सुरक्षा और न्याय के लिए अहिंसा और सत्य के साथ कोई समझौता नहीं कर सकता, किन्तु अहिंसा और सत्य के लिए न्याय और सुरक्षा को छोड़ सकता है। राज्य के लिए यह विपरीत होता है। सुरक्षा और न्याय राज्य का दायित्व होता है। अहिंसा और सत्य राज्य का मार्ग होता है। राज्य अहिंसा और सत्य की सुरक्षा के लिए सुरक्षा और न्याय के साथ कोई समझौता नहीं कर सकता।

5009. व्यक्ति की स्वतंत्रता को राज्य या समाज उसकी सहमति के बिना तब तक सीमित नहीं कर सकता, जब तक उस व्यक्ति ने किसी अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता की सीमा का अतिक्रमण न किया हो। किसी अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन अपराध होता है तथा ऐसे अपराध से व्यक्ति को सुरक्षित रखना राज्य का दायित्व होता है।

5010. विचारणीय प्रश्न यह है कि यदि यह निश्चित दिखता हो कि कोई व्यक्ति मजबूत होता है, तो कभी न्याय की बात नहीं करता, यदि ऐसा व्यक्ति कभी अन्याय में फंस जाये, तो तटस्थों को ऐसे मामले में न्याय-अन्याय की बात क्यों करनी चाहिए? न्याय-अन्याय की

बात दो समान प्रवृति वालों के बीच ही संभव है। गुंडे और शरीफ के बीच या तो शरीफ की सहायता की जायेगी या चुप रहा जायेगा।

5011. व्यक्ति की स्वतंत्रता पर तब तक कोई अन्य अंकुश नहीं लगा सकता, जब तक उसने किसी अन्य की स्वतंत्रता में बाधा न पहुंचाई हो। समाज को भी ऐसा अंकुश लगाने का अधिकार नहीं। जब कोई अन्य व्यक्ति या व्यक्ति समूह किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता में बाधक होता है, तब उसकी स्वतंत्रता की रक्षा करने का दायित्व समाज का है।

5012. प्रत्येक व्यक्ति की दो भूमिकाएं होती है— 1. व्यक्ति के रूप में, 2. समाज के अंग के रूप में। दोनों भूमिकाएं बिल्कुल अलग-अलग होते हुए भी कुछ मामलों में एक-दूसरे की पूरक होती है, जब तक व्यक्ति अकेला है तब तक वह व्यक्ति है, एक से अधिक होते ही वह समाज का अंग बन जाता है। व्यक्ति की स्वतंत्रता असीम होती है, किन्तु एक से अधिक होते ही सबकी स्वतंत्रता समान हो जाती है।

5013. व्यक्तियों का सामाजिक, असामाजिक, समाज-विरोधी के बीच विभाजन होना व्यवस्था की दृष्टि से बहुत अच्छा है, किन्तु अच्छे और बुरे के रुप में विभाजन करके अनेक प्रकार की समस्याएं पैदा की गयीं। आज तक दुनिया में ऐसा कोई भौतिक मापदंड नहीं बना, जिसके आधार पर किसी व्यक्ति को अंतिम रूप से अच्छा या बुरा माना जा सके।

5014. व्यक्ति वह होता है, जिसे मौलिक अधिकार भी प्राप्त होते हैं तथा सामाजिक अधिकार भी प्राप्त होता है किन्तु संवैधानिक अधिकार नहीं। जब एक ही व्यक्ति दोनों स्थितियों में होते हैं, तब उसे तीनों अधिकार प्राप्त होते हैं किन्तु जब कोई विदेशी भारत में आता है,

तो उसे संवैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं होते, सिर्फ मूल अधिकार प्राप्त होते हैं या सामाजिक अधिकार।

5015. व्यक्ति दो प्रकार के होते हैं - 1. त्याग प्रधान, 2. संग्रह प्रधान। त्याग प्रधान व्यक्ति किसी के लिए कोई अन्याय नहीं करते, बल्कि व्यवस्था में सहायक होते हैं। संग्रह प्रधान व्यक्ति यदि सीमा से आगे चले जायें, तो वे समस्या पैदा करते हैं और ऐसे व्यक्तियों को नियंत्रित करने के लिए व्यवस्था को आगे आना पड़ता है। संग्रह तब तक अपराध नहीं होता, जब तक किसी अन्य की स्वतंत्रता में बाधा न पैदा हो।

5016. व्यक्ति तीन प्रकार के होते हैं :- (1) शरीफ, (2) समझदार, (3) धूर्त। समाज में शरीफ लोगों की संख्या 95 % से अधिक होती है। धूर्तों की संख्या तीन-चार प्रतिशत होती है और समझदारों की संख्या नगण्य।

5017. व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के तीन माध्यम हैं - 1. श्रम, 2. बुद्धि, 3. धन।

5018. प्रतिस्पर्धा व्यक्ति को कार्य की क्षमता के साथ-साथ परिणाम भी निश्चित करती जाती है। प्रतिस्पर्धा ही उसे और अधिक गति से काम करने की प्रेरणा देती है। इसलिए राज्य को चाहिए कि वह स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा में कभी कोई हस्तक्षेप न करे।

5019. कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत सीमा तक ही किसी अन्य पर दया कर सकता है, अमानत का उपयोग नहीं किया जा सकता। राजनैतिक सत्ता समाज की अमानत होती है, व्यक्तिगत नहीं।

5020. दुनिया में दो प्रकार के व्यक्ति होते हैं - 1. प्रेरक, 2. प्रेरित। आमतौर पर प्रेरक संचालक होते हैं और प्रेरित संचालित।

5021. प्रत्येक व्यक्ति की दो भूमिकाएं होती है - 1. सामाजिक, 2. राष्ट्रीय। व्यक्ति हमेशा समाज का अंग होता है और नागरिक राष्ट्र का।

5022. किसी भी व्यक्ति की सहमति के बिना उसे समाज के किसी व्यवस्था का अंग नहीं बनाया जा सकता। न ही उसकी सहमति के बिना उसके ऊपर कोई कानून थोपा जा सकता है।

5023. जब व्यक्ति किसी संगठन के साथ जुड़ जाता है, तब उसकी स्वतंत्रता पूरी तरह संगठन में विलीन हो जाती है अर्थात् संगठन छोड़ने की स्वतंत्रता के अतिरिक्त उसकी कोई स्वतंत्रता नहीं होती।

503 व्यक्ति, परिवार और समाज

5030. भारत के संवैधानिक स्वरूप में परिवार प्रणाली को कहीं स्वीकृति या मान्यता नहीं है। व्यक्ति को सीधा राज्य से जोड़ दिया गया। परिवार और गांव की न कोई संवैधानिक रचना की गयी, न ही उनके अधिकारों को परिभाषित किया गया।

5031. भारतीय संविधान ने व्यक्ति, परिवार और समाज के आपसी सम्बन्धों की व्याख्या का अधिकार शासन को सौंप दिया, जिसने ऐसी अव्यवस्था फैलाई कि व्यक्ति, परिवार और समाज के आपसी अधिकारों की सारी सीमाएं टूट गयीं। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता रही है कि यहां व्यक्ति, परिवार, समाज और राज्य के अधिकारों की स्पष्ट सीमाएं रही हैं।

5032. लोकतंत्र, इस्लाम और साम्यवाद की संयुक्त खिचड़ी भारत की परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को समाप्त कर रही है। आज तक भारत में परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था कभी इतनी कमजोर नहीं रही जितनी आज है। आज तो हाल यह है कि भारत

की समाज व्यवस्था पर पश्चिम के (1) लोकतंत्र, (2) साम्यवाद के राजतंत्र और (3) इस्लाम के धर्मतंत्र का लगातार आक्रमण तो हो ही रहा है, भारत के अन्दर से भी राष्ट्र, समाजवाद और संस्कृति जैसे भारी-भरकम सम्मानजनक शब्द उसे अर्थभ्रमित कर रहे हैं।

5033. जब भारत अंग्रेजी व्यवस्था का गुलाम हुआ, तो अंग्रेजों ने परिवार व्यवस्था को राज्य मान्यता देने से इनकार कर दिया, क्योंकि पश्चिमी जगत में व्यक्ति और राज्य की द्विस्तरीय व्यवस्था ही मान्य रही है, फिर भी परिवार व्यवस्था के सामाजिक स्वरूप के साथ उन्होंने छेड़छाड़ नहीं की। परिवार व्यवस्था कमजोर होने लगी। व्यक्ति एक स्वतंत्र ईकाई के रूप में स्थापित होने लगा, जो आज तक जारी है। भारतीय शासन व्यवस्था में नेहरू-अम्बेडकर के रूप में काले अंग्रेज आये, तो ये भूखे शेर के समान परिवार व्यवस्था और गांव व्यवस्था पर टूट पड़े।

5034. यदि व्यक्ति परिवार से सम्बन्ध विच्छेद कर ले, तो वह पृथक परिवार बना सकता है, क्योंकि व्यक्ति सचल इकाई है।

5035. व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के पूरक होते हैं। दोनों के अपने-अपने स्वतंत्र अस्तित्व भी होते हैं तथा एक-दूसरे के सहभागी भी। व्यक्ति, परिवार, समाज और राज्य के अलग-अलग अधिकार हैं और सीमाएं भी। व्यक्ति का अपना स्वशासन होता है, परिवार और समाज का अनुशासन तथा राज्य का शासन।

5036. परिवार या समाज किसी व्यक्ति को उसके किसी अपराध या अनैतिक कार्य के लिए बहिष्कृत तक ही कर सकता है, दण्डित नहीं कर सकता। क्योंकि पहली बात तो यह है कि अनैतिक कार्यों में दण्ड का प्रावधान वर्जित है। दूसरी बात यह है कि दण्डित करना

सिर्फ राज्य के अधिकार क्षेत्र की बात होती है। उसमें परिवार या समाज की भूमिका शून्यवत होती है।

5037. व्यक्ति और समाज को अहिंसक होना चाहिए और व्यवस्था को हमेशा हिंसक। भारत में व्यवस्था अहिंसक हो रही है और व्यक्ति समाज हिंसक। व्यक्ति और समाज मूल इकाई होते हैं। परिवार से राष्ट्र तक व्यवस्था की इकाईयां है। परिवार, गांव, जिला, प्रदेश, देश, व्यवस्था की आदर्श इकाईयां मानी जाती हैं। भारत में इस क्रम को बदल कर जाति, वर्ण, धर्म, राष्ट्र कर दिया गया।

5038. प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता असीम होती है। कोई भी इकाई उसकी सहमति के बिना उसकी स्वतंत्रता की कोई सीमा नहीं बना सकती न ही उसकी स्वतंत्रता में कोई बाधा पैदा कर सकती है।

5039. व्यक्ति और समाज के बीच सहजीवन की पहली पाठशाला परिवार है। किन्तु परिवार की संरचना भी सहमति से ही हो सकती है, किसी कानून से नहीं।

5040. प्राकृतिक व्यवस्था को सशक्त करना हम सबका कर्तव्य है, चाहे हम व्यक्ति हों या सरकार हों या समाज। प्राकृतिक व्यवस्था में अनावश्यक हस्तक्षेप भी घातक होता है।

5041. सामाजिक व्यक्ति को समाज का अंग और समाज विरोधी को समाज बहिष्कृत माना जाता है। इन दोनों के बीच भी एक वर्ग होता है, जो पूरी तरह किसी परिभाषा में नहीं होता, उसे असामाजिक कहा जाता है। व्यक्ति की भी सीमाएं हैं। किसी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति के मौलिक अधिकारों पर आक्रमण अपराध, संवैधानिक अधिकारों का अतिक्रमण गैर कानूनी तथा सामाजिक अधिकारों की अनदेखी अनैतिक कार्य माना जाता है।

5042. जब समाज में सामान्य लोग असुरक्षा महसूस करते हों, तब प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सुरक्षा की चिन्ता करनी पड़ती है। यह कोई आदर्श स्थिति नहीं है, किन्तु आपातकाल में ऐसा करना हमारी मजबूरी है।

505 समाज और व्यक्ति

5050. भारत की प्राचीन व्यवस्था में समाज और व्यक्ति के अधिकारों का संतुलन बिल्कुल ठीक था, जो भारत की गुलामी के काल में बिगड़ गया। मुस्लिम शासनकाल में व्यक्ति कमजोर हुआ, तो अंग्रेजों के शासनकाल में समाज कमजोर हुआ। आदर्श स्थिति वह है, जिसमें व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के पूरक, समन्वयक तथा नियंत्रक हों। जिस तरह लोकतंत्र में कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा विधायिका के सम्बंध होते हैं।

5051. समाज के व्यवस्थित संचालन में व्यक्ति के चरित्र की बहुत बड़ी भूमिका है। यदि सामान्य नागरिक का चरित्र ही ठीक नहीं है, तो व्यवस्था ठीक हो ही नहीं सकती। इसलिए समाज के व्यवस्थित संचालन में धर्म को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

5052. समाज के अच्छे लोग मिलकर समाज में जो भी व्यवस्था बनाते हैं, धूर्त लोग उस व्यवस्था की कमजोरियों का लाभ उठा उठाकर, उस व्यवस्था में ही मजबूती प्राप्त कर लेते हैं।

5053. समाज, व्यक्ति और परिवार को अनुशासित करता था, नियंत्रित नहीं, क्योंकि व्यक्ति और परिवार के अधिकारों की अपनी स्वतंत्र सीमाएं थीं। व्यक्ति और परिवार पर नियंत्रण का दायित्व राज्य का था, जो व्यक्ति या परिवार द्वारा अपने अधिकारों का उल्लंघन करने

पर दण्ड देता था। राज्य के पास सर्वोच्च शक्ति होते हुए भी न्यूनतम हस्तक्षेप था।

5054. मैं भी तीन ही प्रकार के व्यक्ति मानता हूँ - सामाजिक, असामाजिक तथा समाज विरोधी। समाज विरोधियों से सामाजिक लोगों का टकराव हमेशा चलता रहता है। इसे ही देवासुर संग्राम कहते रहे हैं।

5055. समाज को दबाकर धर्म और राज्य ने उसे पंगु बना दिया है। समाज व्यवस्था को जानबूझकर तोड़ा जा रहा है। यही कारण है कि मेरी प्राथमिकता समाज सशक्तिकरण है। समाज को अनावश्यक वर्ग संघर्षों में उलझाकर उन्हें मुकदमेबाजी का मार्ग दिखाने वाले मेरी नजर में आदर्श नहीं।

5056. व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के पूरक भी होते हैं और नियंत्रक भी। दोनों के अलग-अलग अस्तित्व हैं और अलग-अलग सीमाएं भी। व्यक्तियों से ही समाज का अस्तित्व होता है। बिना व्यक्तियों के जुड़े समाज बनता ही नहीं। समाज के बिना भी व्यक्ति का जीना कठिन हो जाता है, क्योंकि सुचारू जीवन के लिए जिस व्यवस्था की आवश्यकता होती है, वह समाज ही दे सकता है, कोई और नहीं। पश्चिम की संस्कृति में व्यक्ति को समाज की तुलना में बहुत अधिक महत्व दिया, तो साम्यवादी और इस्लामिक संस्कृति ने व्यक्ति को मौलिक अधिकार भी नहीं दिये। इसके कारण असंतुलन पैदा हुआ।

5057. जिसकी अधिक क्षमता हो, वह छोटा संकल्प ले तो समाज के लिए कम लाभदायक होगा, किन्तु यदि कम क्षमता का व्यक्ति बिना अपनी क्षमता का आकलन किये बड़ा संकल्प ले ले, तो समाज के लिए हानिकारक हो जाता है।

5058. सामाजिक व्यक्ति के लिए लक्ष्य और साधन दोनों की पवित्रता होनी चाहिए, जबकि राजनेता के लिए लक्ष्य पवित्र हो, किन्तु विशेष परिस्थिति में साधन पवित्र नहीं भी हो सकता है। व्यवसायी के लिए भी लक्ष्य तो पवित्र होना चाहिए, किन्तु साधन कुछ अपवित्र भी हो सकता है।

5059. व्यक्ति तीन प्रकार के होते हैं - 1. दैवीय प्रवृत्ति, 2. मानवीय प्रवृत्ति, 3. आसुरी प्रवृत्ति। दैवीय प्रवृत्ति अर्थात् सामाजिक। मानवीय प्रवृत्ति का अर्थ है असामाजिक। आसुरी प्रवृत्ति का अर्थ है - समाज विरोधी। जब समाज में आसुरी प्रवृत्ति वाले मजबूत हों, तब व्यक्ति को समझदार होना चाहिए अर्थात् शराफत छोड़कर बीच में रहना चाहिए। किन्तु जब अपराधी तत्व नियंत्रित हो, तब व्यक्ति को गाय की प्रवृत्ति का होना चाहिए, अर्थात् शरीफ होना चाहिए। उस समय समझदारी की आवश्यकता नहीं होती।

506 व्यक्तिगत सम्पत्ति

5060. वर्तमान विश्व में प्रत्येक व्यक्ति में स्वार्थ भाव बढ़ता जा रहा है। व्यक्तिगत सम्पत्ति पूरी तरह प्रतिबंधित करके पारिवारिक संयुक्त सम्पत्ति का मार्ग व्यावहारिक समाधान है। नई व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति के लिए परिवार बनाना अनिवार्य होगा और सम्पत्ति परिवार की संयुक्त होगी।

507 साम, दाम, दण्ड, भेद

5070. दूसरों से व्यवहार करने में चार भूमिकाएं महत्वपूर्ण मानी जाती हैं :- साम, दाम, दण्ड, भेद। प्रत्येक व्यक्ति या समूह समय-समय पर चारों का प्रयोग करता है, किन्तु दुनिया की अलग-अलग

संस्कृतियों की प्राथमिकताएं अलग-अलग होती हैं। भारतीय संस्कृति 'साम' को अधिक महत्व देती है, पश्चिम की संस्कृति 'दाम' अर्थात धन को, इस्लामिक संस्कृति 'दण्ड' अर्थात बल प्रयोग को तथा साम्यवादी संस्कृति 'भेद' अर्थात वर्ग विद्वेष को महत्व देती है।

508 आक्रोश

5080. दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति में आक्रोश की भावना बढ़ रही है। भारत भी इससे अलग नहीं है। परिवार में सामूहिक उत्तरदायित्व होने से परिवार अपने सदस्यों पर अनुशासन सिखाने और बनाये रखने के लिए बाध्य होगा।

509 परिवार की संरचना

5090. भारत के प्रत्येक नागरिक के लिए न्यूनतम दो का परिवार बनाना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए। जो व्यक्ति किसी एक व्यक्ति से भी सामंजस्य हेतु प्रतिबद्ध होने को तैयार नहीं है, उसे भारत की नागरिकता नहीं मिल सकती, भले ही व्यक्ति के रूप में वह रह सकता है। जो व्यक्ति अन्य लोगों की व्यवस्था में भागीदारी चाहता है उसे किसी एक व्यक्ति के साथ रहने की आवश्यकता पूरी करनी ही होगी।

5091. आदर्श व्यवस्था यह है कि परिवार में या समाज में सबको समान अधिकार देने के बाद भी, जिन्हें विशेष सहायता की आवश्यकता हो, वह सहायता अन्य सदस्यों का कर्तव्य तो होना चाहिए, किन्तु कमजोर का अधिकार नहीं।

5092. नई व्यवस्था में परिवार प्रमुख परिवार का सबसे अधिक उम्र का

व्यक्ति होना चाहिए। इससे आधी प्रमुख महिलाओं में से अपने आप आ जायेंगी तथा मुखिया चुनने में भी उनकी भूमिका का महत्व बढ़ जायेगा। ये संशोधन महिला समानता के लिए पर्याप्त है। परिवार के मुखिया का चयन परिवार के सदस्य करें तथा परिवार से ऊपर ग्रामसभा या संसद के चुनावों में परिवार का मुखिया ही मतदान करे, जिसका मत उसके परिवार की सदस्य संख्या के आधार पर गिना जायेगा।

5093. यदि परिवार के किसी सदस्य का परिवार में सम्पूर्ण समर्पण न होकर आंशिक समर्पण भाव हो अथवा दोहरी निष्ठा हो, तो परिवार व्यवस्था ठीक से नहीं चल पाती। मेरी मान्यता तो यह है कि परिवार व्यवस्था में परिवार के प्रत्येक सदस्य को मौलिक अधिकार तो प्राप्त है, किन्तु संवैधानिक या सामाजिक अधिकार प्राप्त नहीं है। परिवार का सदस्य परिवार में विलीन होता है। उसकी न तो पृथक से सम्पत्ति हो सकती है, न ही पृथक प्रतिबद्धता। परिवार के प्रत्येक सदस्य को सामूहिक निर्णय मानना अनिवार्य है, इसलिए किसी भी सदस्य की योग्यता का निर्धारण भी परिवार ही करता है और परिवार के बाहर सक्रिय होने का भी।

5094. किसी राजनैतिक दल से जुड़ा सांसद यदि संसद में स्वतंत्र वोट देगा, तो संसद सदस्यता रद्द हो जायेगी। किसी राजनैतिक दल का सदस्य सार्वजनिक रूप से दल के विरूद्ध कुछ बोल दे, तो अनुशासन की कार्यवाही सम्भव। किन्तु किसी परिवार का सदस्य परिवार की इच्छा के विरुद्ध विवाह कर ले, तो कोई अनुशासन हीनता नहीं। यदि उसे रोकने का प्रयास हो, तो 'परिवार तोड़क ब्रिगेड' उसके समर्थन में बिना बुलाये तैयार हो जाते हैं। परिवार

तोड़क ब्रिगेड के बनाये कानून उसे संरक्षण देंगे और जरूरत पड़े तो अनुशासनहीनता के लिए पुरस्कृत भी करेंगे।

5095. यदि हम सामान्य व्यक्ति हैं, तो हमें अपने परिवार तक मुख्य रूप से तथा परिवार के बाहर आंशिक रूप से सक्रिय होना चाहिए। यदि हम उससे ऊपर की योग्यता रखते हैं, तभी हमें ऊपर की ओर सक्रियता बढ़ानी उचित है अन्यथा नहीं।

5096. किसी व्यक्ति का अकेला रहना उसकी स्वतंत्रता है तथा मौलिक अधिकार है। हम किसी के मौलिक अधिकार को नहीं छीन सकते। किन्तु उक्त व्यक्ति को समाज के साथ रखना या न रखना अथवा उसे सुरक्षा देना या न देना भी समाज का मौलिक अधिकार है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति की यह मजबूरी है कि वह समाज के साथ जुड़े।

5097. मेरे विचार से संतान तो किसी भी परिवार में किसी दम्पत्ति की नहीं होती। कोई भी संतान जन्म लेते ही उस परिवार का सदस्य है, जिस परिवार में उसने जन्म लिया है।

5098. मैं सहमत हूँ कि परिवार एक संगठनात्मक इकाई है, प्राकृतिक इकाई नहीं। हमारे संविधान निर्माताओं ने नासमझी में परिवार को प्राकृतिक इकाई मान लिया। अब इसे ठीक करने की जरुरत है। परिवार एक संगठनात्मक इकाई है, जो आपसी अनुशासन और सहमति के आधार पर चलती है।

5099. परिवार में शामिल होने के बाद व्यक्ति के संवैधानिक अथवा सामाजिक अधिकार समाप्त होकर परिवार के साथ जुड़ जाया करते हैं। परिवार की एक परिभाषा होगी "संयुक्त सम्पत्ति तथा संयुक्त उत्तर दायित्व के आधार पर एक साथ रहने के लिए सहमत

व्यक्तियों का पंजीकृत समूह"। परिवार के प्रत्येक अच्छे-बुरे कार्य के परिणाम में परिवार के सभी सदस्य का समान अधिकार तथा दायित्व होगा।

5100. परिवार न कहीं से प्रारंभ होता है, न समाप्त। परिवार सतत सक्रिय इकाई है, जो हजारों वर्षों तक निरंतर चलती रहती है। यह अलग बात है कि समय-समय पर परिवार विभाजित होकर नये परिवार भी बनाते रहते हैं।

5101. जब हमारा एक सांसद लाखों मतदाताओं के स्थान पर संसद में प्रतिनिधित्व कर सकता है, मंत्रिमंडल का सदस्य मंत्रिमंडल में रहते हुए बाहर में स्वतंत्र विचार नहीं रख सकता, उसी तरह बालिग मताधिकार की जगह परिवार के सभी सदस्य मिलकर एक मुखिया को नियुक्त करे तथा निर्वाचित मुखिया ही आगे वोट दे, जिसके वोट परिवार की सदस्य संख्या के आधार पर गिने जायेँ, तो बहुत खर्च बच सकता है।

5102. परिवार को वृद्ध और जवान में बांटना भी घातक है। वृद्धाश्रम जैसी अवधारणा पूरी तरह घातक है।

5103. जिस तरह परिवार में परिवार के बाहर का कोई सदस्य बिना पारिवारिक अनुमति या सहमति के शामिल नहीं हो सकता अथवा जिस तरह भारत से बाहर का कोई व्यक्ति बिना भारत सरकार की अनुमति या सहमति के भारत में न रह सकता है, न आ सकता है, न ही रोजगार कर सकता है, तो यही अधिकार गांव को देने में आपत्ति क्यों होनी चाहिए? गांव को भी एक संगठनात्मक इकाई घोषित कर देना चाहिए।

5104. परिवार में माँ-बेटा, भाई-बहन, पति-पत्नी, बाप-बेटी के रिश्तों में

किसी प्रकार की दरार बहुत नुकसान करेगी। यदि इन सम्बन्ध में अविश्वास की खाई बढ़ी, तो लाभ कम होगा और नुकसान ज्यादा। पश्चिमी जगत में परिवार व्यवस्था को मान्यता नहीं है। भारत में हजारों वर्षों से परिवार व्यवस्था सक्रिय है।

5105. कोई भी नवजात, चाहे लड़का हो या लड़की, उस परिवार का सदस्य होगा, जिस परिवार की सदस्य बच्चे की माँ है, पिता से बच्चे की पहचान नहीं होगी।

5106. सम्पति का विभाजन, मुखिया का चुनाव, अपराधों के परिणाम में सहभागिता या किसी निर्णय की सहभागिता में उम्र, लिंग या योग्यता का कोई भेद नहीं होगा।

5107. परिवार में रहते हुए प्रत्येक सदस्य के संवैधानिक, सामाजिक, आर्थिक अधिकार संयुक्त हो जाते हैं। किसी सदस्य के कोई पृथक अधिकार नहीं हो सकते। कानून पृथक अधिकार भी मानता है और संयुक्त भी।

5108. परिवार का अर्थ होता है सम्पूर्ण अधिकार समर्पित व्यक्ति समूह। परिवार समाज व्यवस्था की पहली मूर्त इकाई है। परिवार व्यवस्था व्यक्ति के सहजीवन की पहली पाठशाला है, क्योंकि परिवार व्यवस्था स्वतंत्रता और उच्छृंखलता के बीच संतुलन की ट्रेनिंग देने वाली पहली इकाई होती है।

5109. आदर्श परिवार व्यवस्था में परिवार का आंतरिक ढांचा लोकतांत्रिक, समाजपूरक और राज्य सहायक होना चाहिए।

5110. वेशभूषा का अंतिम अधिकार या तो व्यक्ति के स्वयं का है या परिवार का।

5111. परिवार एक संगठन है, सहमति से बनता है। तथा परिवार का प्रत्येक

सदस्य परिवार रूपी संगठन का एक संयुक्त सदस्य है, पृथक सदस्य नहीं। परिवार में शामिल होने के बाद व्यक्ति का सम्पूर्ण विलय हो जाता है और यह विलय तब तक रहता है, जब तक व्यक्ति और परिवार के बीच आपसी सहमति है।

5112. कोई परिवार न सिर्फ उत्पादक होता है, न सिर्फ उपभोक्ता। अधिकांश परिवारों की दोनों भूमिकाएं होती हैं। शासन या उसके लोग इन्हें दो वर्ग मानकर कभी उत्पादक के पक्ष में आवाज लगाते हैं, तो कभी उपभोक्ता के पक्ष में।

512 परिवार का महत्व

5120. परिवार और समाज सशक्तिकरण ही समस्या का समाधान है। परिवार सशक्तिकरण, समाज सशक्तिकरण की तुलना में पुरुष या महिला सशक्तिकरण बिल्कुल ही विरोधी कार्य है। परिवार सशक्तिकरण की सबसे बड़ी बाधा सम्पत्ति का अधिकार संबंधी विवाद है। यदि इस विवाद को सहज-सरल विधि से दूर कर दिया जाये, तो यह बहुत बड़ा सामाजिक हित होगा।

5121. परिवार व्यवस्था के टूटने से वृद्ध सदस्यों के मामलों में भी दिक्कत आनी ही है। परिवार व्यवस्था को तोड़कर पूर्ण स्वतंत्रता के बहुत ज्यादा दुष्परिणाम होंगे ही।

5122. किसी अन्य परिवार के किसी सदस्य के विरूद्ध अपने परिवार के मुखिया की सहमति से ही थाने या कोर्ट में शिकायत हो सकती है अन्यथा नहीं। अपने परिवार के किसी सदस्य के विरूद्ध भी थाने में शिकायत के पूर्व परिवार छोड़ना आवश्यक है।

5123. स्त्री और पुरुष का मिलकर एक साथ रहना, एक प्राकृतिक मजबूरी

है। ये दोनों पूर्ण समर्पण भाव से एकाकार हों, यह संयुक्त परिवार व्यवस्था है। इन दोनों को विशेष परिस्थिति में ही अलग-अलग होने की छूट थी तथा इस वीटो का उपयोग भी असामाजिक कार्य ही माना जाता था। स्त्री-पुरुष का एक साथ जुड़ना दो परिवारों का जुड़ना माना जाता था, न कि दो व्यक्तियों का। पाश्चात्य संस्कृति स्त्री और पुरुष के जुड़ने को आपसी समझौता मानती है और इस्लाम पुरुष द्वारा महिला का उपयोग। भारतीय संस्कृति इन सबसे अलग दो इकाइयों का विलीनीकरण देखती है, जो एक-दूसरे को अपना स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त करके एक परिवार रूपी स्वतंत्र इकाई का स्वरूप देना है।

5124. नेहरू तथा अम्बेडकर सारी पुरानी मान्यताओं को संशोधन योग्य और सारी नयी मान्यताओं को स्वीकार करने की भूल कर बैठे। यही भूल परिवार व्यवस्था को तोड़ने का आधार बनी। इन दोनों ने सबसे पहले परिवार व्यवस्था को तोड़ने की पहल स्वयं से ही शुरू की। यदि परिवार व्यवस्था, व्यक्ति को अनुशासन, सहजीवन, सम्पूर्ण समर्पण की ट्रेनिंग दे देती तो राज्य व्यवस्था को बहुत सुविधा होती। लेकिन इन दोनों ने ऐसे प्रयत्न किये कि परिवार व्यवस्था धीरे-धीरे समाप्त हो जाये।

5125. परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था का हिस्सा है, धर्म व्यवस्था का नहीं। कोई भी व्यक्ति धर्म तो बदल सकता है, किन्तु समाज नहीं। परिवार व्यवस्था सहजीवन सिखाने वाली पहली पाठशाला है। परिवार व्यवस्था माता-पिता से शुरु होती है और पति-पत्नी से गुजरते हुए पुत्र-पुत्री तक आकर पूरी हो जाती है।

5126. परिवार व्यवस्था एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें व्यक्ति सहजीवन

के प्रारंभिक पाठ सीखता है। यह प्रणाली अनुशासन सिखाने का भी एक उचित माध्यम है। यह प्रणाली राज्य व्यवस्था का भी बोझ हल्का करती है। परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था में बहुत सहायक होती है। परिवार व्यवस्था को संवैधानिक इकाई के रूप में स्वीकार किया जाये। यदि आप परिवार को संवैधानिक इकाई मान लेंगे, तो अपने आप समाज को उसके लाभ मिलने लगेंगे। परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को इस बात का गर्व है कि हजारों वर्ष बीतने के बाद भी इस कानून में सुधार मात्र की आवश्यकता है, इसे बदलने की नहीं।

5127. परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था की एक पहली इकाई होती है, जो अपनी सीमा में स्वतंत्र होते हुए भी ऊपर की इकाईयों की पूरक होती है। परिवार व्यवस्था सहजीवन की पहली पाठशाला है और प्रत्येक व्यक्ति को परिवार व्यवस्था के साथ अवश्य ही जुड़ना चाहिए।

5128. परिवार सामाजिक व्यवस्था की प्रथम तथा विश्व समाज व्यवस्था की अंतिम इकाई है। प्रत्येक व्यक्ति को असीम स्वतंत्रता प्राप्त है, जो उसे अपनी स्वेच्छा से परिवार के साथ जोड़ना आवश्यक है।

5129. दुनिया में किसी भी व्यक्ति के लिए अकेला रहना न संभव है न उचित। यदि कोई व्यक्ति दूसरों की सुरक्षा में भागीदार नहीं बनना चाहता, तो कोई अन्य उसकी सुरक्षा की गांरटी क्यों लेगा?

5130. व्यक्ति का सिर्फ एक ही प्राकृतिक अधिकार होता है असीम स्वतंत्रता तथा एक दायित्व होता है, सहजीवन। स्वतंत्रता के चार भाग हैं - 1. जीवन की, 2. अभिव्यक्ति की, 3. सम्पत्ति की, 4. स्वनिर्णय की। सहजीवन के तीन भाग हैं - 1. पारिवारिक, 2.

स्थानीय, 3. राष्ट्रीय।

5131. प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छा के अनुसार किसी अन्य के साथ सहजीवन शुरू करना उसकी बाध्यता है, स्वतंत्रता नहीं। कोई व्यक्ति इस बाध्यता से इनकार नहीं कर सकता। व्यक्ति चाहे कितना भी अधिक शक्तिशाली क्यों न हो, व्यवस्था हमेशा उससे ऊपर होती है। दुर्भाग्य से व्यवस्था के ऊपर व्यक्ति बनाये जा रहे हैं, जो गलत है।

5132. भारत एक ऐसा देश है, जहां सन्तुलन में व्यक्ति, राज्य और समाज के बीच में एक चौथी इकाई शामिल होती है, जिसे परिवार कहते हैं। पारिवारिक व्यवस्था तथा सामाजिक व्यवस्था के छिन्न-भिन्न होने से व्यक्ति का ज्ञान तो घटता चला गया और शिक्षा बढ़ती चली गयी।

5133. सम्पूर्ण समर्पण का अर्थ गुलामी नहीं होता, बल्कि सम्पूर्ण समर्पण का अर्थ सामूहिक सहमति होता है। परिवार में सम्पूर्ण समर्पण परिवार के प्रति होता है, व्यक्ति के प्रति नहीं।

513 परिवार की वर्तमान स्थिति

5134. परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था कमजोर होती जा रहा है और व्यक्तिवाद बढ़ रहा है। आध्यात्म लगातार भौतिकवाद की तरफ खिसक रहा है। सबसे अधिक खतरनाक बुराई सम्पूर्ण भारत में यह बढ़ी है कि लोग अपनी सफलता के लिए चालाकी को किसी भी सीमा तक उपयोग करने को अच्छा मानने लगे है।

5135. वर्तमान समय में परिवार व्यवस्था तथा समाज व्यवस्था टूट नहीं रही है, बल्कि तोड़ी जा रही है। शासन व्यवस्था सामाजिक एकता से खतरा महसूस करती है और इसलिए वर्ग समन्वय को वर्ग

विद्वेष में बदलने के लिए निरंतर सक्रिय रहती है।

5136. भारत की परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था को तोड़ने में कानून और राज्य ने ही सारी पहल की है। यदि भारत पर ऐसा रद्दी संविधान न थोपकर कोई ऐसा संविधान बनाया जाता, जिसमें परिवार व्यवस्था, गांव व्यवस्था, समाज व्यवस्था में कानूनों का न्यूनतम हस्तक्षेप होता, तो ऐसी अव्यवस्था नहीं होती, जैसी आज है। खाप पंचायतों को दण्डित करने का कोई अधिकार नहीं है और राजनेताओं को भी समाज व्यवस्था परिवार व्यवस्था को तोड़ने का अधिकार नहीं होना चाहिए।

5137. गुलामी के लम्बे काल में भी हमारी त्रिस्तरीय व्यवस्था सुरक्षित रहीं, यद्यपि इस व्यवस्था में कुछ विकृतियां आयीं। समाज व्यवस्था ने व्यक्ति के मूल अधिकारों और परिवार के आंतरिक मामलों में अपनी सीमाओं का उल्लंघन करके अपना हस्तक्षेप बढ़ाया।

5138. पश्चिमी जगत में परिवार व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता प्राप्त नहीं है। वहां द्विस्तरीय व्यवस्था है - व्यक्ति और समाज। इस्लामिक देशों में व्यक्ति और परिवार तो है, किन्तु समाज नहीं है और समाज का स्थान धर्म ने ले लिया है। भारत में परिवार व्यवस्था है और त्रिस्तरीय व्यवस्था है - व्यक्ति, परिवार और समाज। जब भारत गुलाम हुआ तब मुसलमानों ने समाज के स्थान पर धर्म की व्यवस्था घुसाई और व्यक्ति के मूल अधिकार समाप्त कर दिये। जब मुसलमानों को हटाकर अंग्रेज आये, तो इन्होंने परिवार व्यवस्था और धर्म व्यवस्था को हटाकर व्यक्ति और समाज व्यवस्था लागू कर दी। जब इनकी जगह अंबेडकर, नेहरू सरीखे काले अंग्रेज आये, तो इन्होंने परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को हटा

दिया और उसकी जगह जाति, धर्म आदि को मान्यता दे दी।

5139. परिवार के किसी भी सदस्य पर विशेषकर अवयस्क पर 33% परिवार का, 33% समाज का तथा 33% राज्य का हस्तक्षेप होना चाहिए। वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था में व्यक्ति को राष्ट्रीय संपत्ति के समान मान लिया गया है, जबकि परिवार, समाज और राज्य की मिश्रित व्यवस्था से व्यक्ति संचालित होना चाहिए।

5140. परिवार आपसी सहमति से सहमति तक ही बनते हैं। कानून उसमें हस्तक्षेप करते हैं। राज्य के लिए यह भी आवश्यक होना चाहिए कि वह परिवार व्यवस्था को एक संवैधानिक इकाई माने और उसे संप्रभुता सम्पन्न इकाई का दर्जा दे, उसके आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करे।

5141. सामाजिक व्यवस्था में तो भारत में परिवार को एक सार्वभौम स्वतंत्र इकाई माना जाता है, किन्तु संवैधानिक व्यवस्था परिवार को स्वतंत्र इकाई नहीं मानती है। गांव, जिले तो स्वतंत्र इकाई हैं ही नहीं। मेरे दिल से अकेली आवाज उठ रही है कि शराफत को सशक्त होना चाहिए, परिवार को सशक्त होना चाहिए, गांव को सशक्त होना चाहिए, समाज को सशक्त होना चाहिए। लेकिन राज्य को सशक्त नहीं होना चाहिए।

514 परिवार में संपत्ति विभाजन

5142. यदि कोई सदस्य परिवार छोड़ता है, तो वह सम्पूर्ण सम्पति में परिवार की कुल सदस्य संख्या के आधार पर हिस्सा पायेगा। इस संशोधन से सम्पति में से अधिकार की सभी जटिलताएं समाप्त हो जायेंगी। सच्चाई यह है कि परिवार में महिलाओं को व्यवस्था में

समानता का अधिकार तथा सम्पति में समान अधिकार मिलने के बाद महिला-पुरुष के बीच विवाद की कोई स्थिति ही नहीं रहेगी।

5143. परिवार की सम्पत्ति में परिवार के सभी सदस्यों का समान हिस्सा होना चाहिए। लड़की जब तक पिता परिवार में है, तब तक उसका वहां हिस्सा है। पति परिवार में शामिल होते समय वह पिता परिवार से हिस्सा लेकर पति परिवार में शामिल होगी और पति परिवार में ही उसका हिस्सा होगा।

5144. अंग्रेजी समाज व्यवस्था में परिवार का कोई स्वतंत्र अस्तित्व न होकर, वह व्यवस्था की एक इकाई होती है। उस व्यवस्था में परिवार कुछ व्यक्तियों का एक संगठन मात्र है, कोई स्वतंत्र इकाई नहीं। अंग्रेजों ने परिवार के प्रत्येक सदस्य को मौलिक अधिकारों के साथ-साथ संवैधानिक तथा सामाजिक अधिकार भी प्रदान किये। परिवार में रहते हुए भी व्यक्ति को व्यक्तिगत सम्पत्ति अलग रखने का अधिकार दे दिया गया। व्यक्ति को परिवार में रहते हुए भी परिवार की सहमति के बिना पृथक संगठनों में जुड़ने का कानूनी अधिकार भी दे दिया गया। प्रत्येक व्यक्ति को दोहरी प्रतिबद्धता की छूट दी गयी। इसी का परिणाम हुआ की व्यक्ति के स्वभाव में स्वार्थ और उद्दंडता बढ़ती चली गयी।

5145. परिवार की सम्पत्ति में परिवार के सभी सदस्यों का समान अधिकार होना चाहिए, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष बालक हो या वृद्ध, सबको सम्पत्ति में समान अधिकार देने की बात मजबूती से उठ जाती, तो सरकार द्वारा किये गये अनेक अनावश्यक कदमों का विरोध करने का नैतिक आधार मिल जाता।

5146. परिवार में सम्पत्ति का विभाजन कैसे हो, इस सम्बन्ध में राज्य

नियम बना सकता है। किन्तु वह ऐसे नियम में किसी तरह का भेदभाव नहीं कर सकता, क्योंकि कानून की नजर में प्रत्येक नागरिक के अधिकार समान हैं।

5147. परिवार के अन्दर महिला या पुरुष के व्यक्तिगत अधिकारों के अतिरिक्त अन्य कोई अधिकार नहीं होते। परिवार व्यवस्था को अस्वीकार करने वाले ऐसे पृथक अधिकारों को स्वीकार करते हैं तथा परिवार व्यवस्था को तोड़ने के प्रयत्नों में लगे लोग लगातार महिला सशक्तिकरण के नाम से महिलाओं को अलग वर्ग के रूप में स्थापित करने का प्रयत्न करते रहते हैं। जब महिला परिवार के साथ संयुक्त है, तो उसे पृथक वर्ग के रूप में स्वीकार करना असामाजिक कार्य है। इसे किसी भी रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता।

5148. राज्य व्यवस्था का सबसे पहला उद्देश्य परिवार व्यवस्था को सफलता पूर्वक तोड़ना है और लिंग भेद उसका सबसे अच्छा आधार है। महिला सशक्तिकरण का नारा तथा राजनैतिक, सामाजिक प्रयत्न पूरी तरह घातक है, जो समाज में अव्यवस्था पैदा करेंगे। महिलाओं को पुरुषों के समान सशक्त होना चाहिए, इसमें मेरी सहमति है। किन्तु इसके लिए पारिवारिक वातावरण को हम विचार परिवर्तन द्वारा बदलने का प्रयास करेंगे।

5149. महिला और पुरुष की अपनी-अपनी स्वतंत्रता को अक्षुण्ण रखते हुए भी दोनों के बीच एकत्रीकरण दोनों की अनिवार्य आवश्यकता है। साथ ही, यह भी आवश्यक है कि दोनों का एकत्रीकरण भिन्न परिवारों से होना चाहिए। इस तरह परिवार व्यवस्था हमारी अनिवार्यता है और परिवार किसी व्यवस्था के हिसाब से ही चलना

चाहिए।

5150. परिवार में महिला या पुरुष एक-दूसरे के पूरक होते हैं। परिवार की आंतरिक व्यवस्था में महिलाएं तथा बाह्य में पुरुष प्रधान होते हैं, किन्तु कुल मिलाकर सब बराबर हैं। परिवार व्यवस्था के ठीक संचालन में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि परिवार की अगली पीढ़ी के निर्माण में महिलाएं ही महत्वपूर्ण होती हैं।

515 परिवार का ऊपर की इकाई से सम्बन्ध

5151. परिवार, राज्य, समाज और व्यक्ति के अधिकारों की सीमाएं क्या हों और सामंजस्य कैसे हो? राज्य की भूमिका डाक्टर से अधिक नहीं जो बीमारी के समय सक्रिय हो और सामान्यतया हस्तक्षेप न करे। समाज में महिला-पुरुष के आपसी सम्बन्ध कैसे हों, यह या तो समाज के सोचने का विषय है या परिवार के सोचने का किन्तु राज्य तो बेमतलब उसमें दखल देता है।

5152. जो परिवार अपने विवाद ग्रामसभा में निपटाने हेतु सहमत नहीं होंगे, वही परिवार न्यायलय में जा सकते हैं, अन्यथा अपने आन्तरिक विवाद ऊपर वाली इकाई के माध्यम से ही निपटाना उचित होता है।

5153. प्रत्येक परिवार का ग्रामसभा में पंजीकरण अनिवार्य होना चाहिए, जिससे सम्पत्ति, सदस्य संख्या पहचानने या कर लेने में सुविधा हो।

5154. प्रत्येक सभा नीचे की इकाइयों द्वारा गठित होना चाहिए तथा ऐसी इकाईयां जिस सभा का गठन करेंगी, वह स्वयं ही अपने अधिकार और कर्तव्य तय कर सकेंगी। इससे व्यवस्था के अधिकार ऊपर से थोपे नहीं जायेंगे, बल्कि वे नीचे की इकाइयों से प्राप्त होंगे।

5155. प्रत्येक व्यक्ति के लिए पारिवारिक सदस्यता अनिवार्य हो। अकेला व्यक्ति समाज का अंग तो हो, उसे मूल अधिकार भी प्राप्त हों, किन्तु समाज व्यवस्था में उसकी भागीदारी तब तक रोक दी जाये, जब तक वह किसी परिवार का सदस्य न हो या किसी को जोड़कर नया परिवार न बना ले। कम-से-कम एक व्यक्ति के साथ जुड़ना या जोड़ना आवश्यक है, अन्यथा मतदान तथा सम्पत्ति का अधिकार तब तक निलम्बित रहेगा, जब तक परिवार का सदस्य न बने।

5156. प्रत्येक परिवार ग्रामसभा में रजिस्टर्ड हो। व्यक्तिगत सम्पत्ति पर रोक हो। सम्पूर्ण सम्पत्ति पारिवारिक होगी, जिसमें परिवार छोड़ते समय उसे परिवार की सदस्य संख्या के आधार पर बराबर हिस्सा मिलेगा। लड़की भी अपने माता-पिता को छोड़ते समय अपना हिस्सा लेकर नये परिवार में शामिल कर देगी।

5157. परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति का विवरण और मूल्यांकन ग्रामसभा में प्रति वर्ष या राज्य द्वारा घोषित समय-सीमा में घोषित करना अनिवार्य होगा। घोषित सम्पत्ति के अतिरिक्त छिपाई गई सम्पत्ति सरकार की या ग्रामसभा की हो जायेगी।

5158. मैं परिवार प्रणाली को संवैधानिक मान्यता दिये जाने का पक्षधर हूँ। मैं व्यक्ति और समाज के बीच परिवार, गांव, जिला, प्रदेश और देश प्रणाली का पक्षधर हूँ। मैं व्यक्ति और समाज के बीच जाति, वर्ण, धर्म और राष्ट्र प्रणाली के विरूद्ध हूँ। जाति, वर्ण, धर्म प्राचीन समय में रूढ़ न होकर, व्यवस्था के सहायक थे।

5159. सरकार को पारिवारिक मामलों में सारे कानून हटा लेने चाहिए। साथ ही एक नई व्यवस्था बनानी चाहिए कि परिवार की सम्पत्ति में परिवार के प्रत्येक सदस्य का जन्म से मृत्यु तक समान अधिकार

होगा। इसमें उम्र, लिंग आदि का कोई भेद नहीं किया जायेगा। परिवार की आंतरिक व्यवस्था परिवार के लोग बिना बाहरी हस्तक्षेप के आपसी सहमति से स्वतंत्रतापूर्वक कर सकेंगे। यदि परिवार का कोई सदस्य कभी भी परिवार छोड़ना चाहे, तो वह अपना हिस्सा लेकर परिवार छोड़ सकता है। यदि परिवार का कोई सदस्य अनुशासन भंग करे, तो परिवार उसे उसका हिस्सा देकर उसे कभी भी परिवार से अलग कर सकता है।

5160. पारिवारिक, सामाजिक व्यवस्था में यदि कोई बुराई प्रवेश करती है, तो उसे रोकना सरकार का काम नहीं। वह समाज का आंतरिक मामला है। किसी भी राजनैतिक व्यवस्था को सामाजिक व्यवस्था में तब तक कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक वह व्यवस्था किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता पर आक्रमण न करती हो। परिवार के आंतरिक मामलों में कानून को न्यूनतम हस्तक्षेप करना चाहिए। अधिक हस्तक्षेप नुकसान करता है। किसी भी परिस्थिति में कोई ऐसा कानून नहीं बनना चाहिए, जो परिवार की आंतरिक एकता को कमजोर करता हो।

516 परिवार में चुनाव

5161. राज्यसभा का नाम परिवार सभा होना चाहिए क्योंकि परिवार सभा का चुनाव परिवारों द्वारा क्रमशः चुनी गई प्रान्तीय सभाएं करेंगी। चूंकि प्रान्तीय सभा अप्रत्यक्ष चुनावों द्वारा राजनैतिक आधार पर बनती है, अतः परिवार सभा में राजनीति या राजनेताओं का प्रवेश नगण्य ही संभव होगा।

5162. हम परिवार को व्यवस्था की पहली इकाई मानते हैं और ग्रामसभा

को दूसरी। ग्राम पंचायत व्यवस्था की कोई इकाई नहीं होती। ग्राम पंचायत तो ग्रामसभा की कार्यपालिका मात्र है। जिस तरह कुछ लोग ग्राम संसद के पक्षधर हैं, उसी तरह मैं परिवार संसद का पक्षधर हूँ।

5163. पश्चिमी जगत तथा समाजवादी व्यवस्था परिवार को व्यक्ति के बाद सीधे राज्य या समाज से जोड़ देती है। बीच में परिवार की मान्यता नहीं होती।

5164. इकाईयां दो तरह की होती हैं - (1) चल, (2) अचल। परिवार और ग्रामसभा चल इकाई माने जाते हैं और ऊपर की सभाएं अचल मानी जाती हैं। चल इकाई का कोई भी सदस्य किसी भी प्रस्ताव के विरूद्ध वीटो का प्रयोग करके स्वयं को उक्त प्रस्ताव से अलग कर सकता है।

5165. प्राचीन समय में परिवार का एक मुखिया निश्चित होता था। वह या तो सबसे बड़ा लड़का होता था या मुखिया की मृत्यु पर उसे चुन लिया जाता था। मेरे विचार से यह प्रणाली ठीक नहीं है। अब तो परंपरागत प्रणाली को छोड़कर लोकतान्त्रिक प्रणाली की दिशा में बढ़ना चाहिए।

5166. मुखिया का चुनाव परिवार के लोग किसी भी पद्धति से करें, ऐसे चयनित मुखिया को गुप्त मतदान द्वारा परिवार के सदस्यों की सहमति अनिवार्य होनी चाहिए। इस तरह परिवारों में घुटन नहीं रहेगी।

5167. परिवार का एक प्रमुख होना चाहिए जो सबसे अधिक उम्र का हो। उसकी भूमिका राष्ट्रपति या परिवार देवता के रूप में रहेगी। एक मुखिया होगा, जो परिवार के लोग मिलकर चुनेंगे। मुखिया परिवार

का संचालक होगा। परिवार का संचालक आवश्यक रुप से नियुक्त होना चाहिए, जैसे शरीर के सभी अंगों का संचालन करने के लिए मस्तिष्क है।

5168. परिवार या समाज अपने सदस्यों के लिए जो नियम बनाता है, वह उसकी आचार संहिता होती है। आचार संहिता और नागरिक संहिता को अलग-अलग समझने की जरूरत है। किसी की आचार संहिता में कोई ऊपर की इकाई दखल नहीं दे सकती है, लेकिन नागरिक संहिता में ऐसा हस्तक्षेप हो सकता है।

517 परिवार के विरुद्ध षड्यंत्र

5170. भारत की परिवार व्यवस्था को तोड़ने में पश्चिम के देशों की भी बहुत रूचि है और वामपंथियों की भी। परिवार व्यवस्था को कमजोर करने के नये-नये प्रयोग होते रहते हैं। वर्तमान समय में समाज व्यवस्था को तोड़कर राज्य व्यवस्था को अधिक-से-अधिक मजबूत बनाने का पश्चिमी जगत का षड्यंत्र सफल हो गया। धीरे-धीरे परिवार व्यवस्था समाज व व्यवस्था कमजोर हो रही है, टूट रही है और राज्य व्यवस्था अधिक-से-अधिक शक्तिशाली होती जा रही है।

5171. स्वतंत्रता के बाद तो पाश्चात्य संस्कृति के संवाहक पंडित नेहरू और डॉ. भीमराव अंबेडकर ने कुछ ऐसी संवैधानिक व्यवस्था बनाई कि परिवार व्यवस्था को पूरे संविधान से ही बाहर कर दिया। जो काम अंग्रेज बहुत डर-डर कर गुप्त रूप से कर रहे थे, वह काम इन दोनों ने मिलकर समाज सुधार के रूप में शुरू कर दिया। इन दोनों ने मिलकर ऐसी व्यवस्था चलाई कि संयुक्त परिवार व्यवस्था,

सम्मिलित परिवार व्यवस्था में बदल गयी।

5172. मैं मानता हूँ कि जो कुछ पुराना है, वह सब आँख मूंदकर मानने योग्य नहीं है। लेकिन, साथ ही में यह भी मानता हूँ कि जो कुछ पुराना है, वह आंख मूंदकर बदलने योग्य भी नहीं है।

5173. दुर्भाग्य से बाहर के लोग परिवार व्यवस्था में हस्तक्षेप करने में सफल हो रहे हैं, जिसमें सरकार और ऐसे चालाक लोगों के बीच एक तालमेल दिख रहा है। हमारे लिए उचित है कि हम महिला सशक्तिकरण के प्रयास के नाम पर हो रही किसी भी ऐसी योजना को विफल करने में भरपूर सहयोग करें। इस निमित्त हमें चार काम करने चाहिए -1- पारंपरिक परिवार व्यवस्था की जगह लोकतांत्रिक परिवार व्यवस्था को प्रोत्साहित करें। 2- पुरुषों को इस बात के लिए तैयार करें कि महिलाओं के साथ समानता का व्यवहार करने की आदत डालें। 3- महिलाओं को इस बात के लिए तैयार करें कि उनके साथ किसी तरह का कोई अन्याय नहीं हो रहा है, बल्कि अन्याय का प्रचार करके सहजीवन और परिवार व्यवस्था को गंभीर क्षति पहुँचायी जा रही है। 4- महिलाओं को यह भी आभास कराया जाये कि यदि पति-पत्नी के बीच अविश्वास की दीवार खड़ी होगी, तो वह महिलाओं के लिए भी हानिकारक होगी, क्योंकि महिला और पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि अविश्वास होगा, तो संतान उत्पत्ति में भी कठिनाई होगी और उनके पालन-पोषण संस्कार में भी। यदि हम ये चार बातें समझाने में सफल हो जायें तो महिला सशक्तिकरण का नारा लगाने वाले स्वार्थी तत्व अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो पायेंगे।

5174. परिवार व्यवस्था को समाप्त करने की शुरुआत वहां से हुई, जब

गांधी के मरते ही दो ऐसे भारतीय भारत का भाग्य लिखने लगे, जिनके नाम तथा सूरत शक्ल छोड़कर कुछ भी भारतीय नहीं था। मुझे यह भी पता है कि परिवार व्यवस्था को संवैधानिक रूप से तोड़ने की योजना सिर्फ भीमराव अम्बेडकर के ही व्यक्तिगत दिमाग की उपज थी। पण्डित नेहरु तथा भीमराव अम्बेडकर ने न सिर्फ परिवार व्यवस्था को ही अमान्य किया, बल्कि उन्होंने परिवार व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करने के सभी साधन बना दिये।

5175. गांधी जी परिवार व्यवस्था तथा समाज व्यवस्था को मजबूत करना चाहते थे। गांधी जी ग्राम स्वराज्य, लोक स्वराज्य के पक्षधर थे। गांधी के मरने के बाद गांधी के विचारों को पूरी तरह उलट दिया गया।

5176. इस्लाम में परिवार व्यवस्था को तथा समाज व्यवस्था को नष्ट नहीं किया जाता। किन्तु साम्यवाद में परिवार व्यवस्था तथा समाज व्यवस्था को नष्ट कर दिया जाता है।

518 परिवार में अनुशासन

5180. परिवार के किसी भी सदस्य को परिवार छोड़ने की पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिए किन्तु परिवार में रहते हुए परिवार का अनुशासन भी आवश्यक है। परिवार एक संगठित इकाई है, जिसमें रहते हुए सदस्यों को परिवार के अनुशासन का पालन करना होता है। परिवार एक ऐसी मजबूत इकाई है कि जिसके सदस्यों का परिवार में रहते हुए सामूहिक अस्तित्व होता है, पृथक नहीं।

5181. किसी परिवार के सदस्य होने के बाद न पुरुष के कोई अलग से अधिकार होने चाहिए न महिला के। बल्कि सबको समान अधिकार

होना चाहिए। जो भूल हमने पुरुष को एकाधिकार करके कायम की थी, उसे खतम करके उस परिवार की संरचना को ठीक करना चाहिए था, न कि महिला सदस्यों को विशेष अधिकार देकर।

5182. परिवार के प्रत्येक सदस्य को कभी भी परिवार छोड़कर अलग होने की कानूनी छूट होनी चाहिए। परिवार के संचालन में परिवार के सभी सदस्यों की समान भूमिका हो। किन्तु हमारे संविधान निर्माताओं की भूलवश अथवा समाज तोड़क योजनाओं के आधार पर अनेक भेदकारी कानून बनाये गए और अब तो ऐसी योजनाओं का लाभ मिलने के बाद हमारे नेताओं को विशेष मजा आने लगा है कि वे ऐसी योजनाओं को और आगे तेजी से बढ़ा सकें।

5183. परिवार या समाज को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी व्यक्ति को किसी भी गलत कार्य के लिए किसी भी रुप में दण्डित कर सके, जब तक उस व्यक्ति की सहमति न हो। परिवार या समाज को किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकार छीनने का न कोई अधिकार है न होना चाहिए।

5184. परंपरागत परिवार व्यवस्था दोषपूर्ण हैं, उससे व्यक्ति पर व्यवस्था का अनुशासन तो है, किन्तु व्यवस्था पर व्यक्ति समूह का नियंत्रण नहीं है।

5185. परिवार के सदस्यों को पारिवारिक अनुशासन मानना ही होगा। कानून उन्हें अनुशासन तोड़ने को प्रोत्साहित करते हैं।

5186. जब तक बालक को परिवार से और बालिग को समाज से अनुशासन सीखने के अवसर नहीं मिलेंगे, तब तक राज्य चाहे जितना भी प्रयत्न कर ले, समाधान तो होगा ही नहीं। मेरे विचार

से परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को पुनर्जीवित करना, परिभाषित करना तथा अधिकार सम्पन्न बनाना, सभी समस्याओं के समाधान की शुरुआत हो सकती है।

5187. परिवार एक संगठन है। परिवार के सभी सदस्यों को या तो परिवार के नियम मानने होंगे अथवा परिवार छोड़कर जाना होगा। परिवार का अनुशासन परिवार पर सामूहिक रूप से रहेगा। उस सीमा तक रहेगा, जिस सीमा तक उसके मौलिक अधिकार का हनन ना हो।

5188. जब भारत में कोई व्यक्ति किसी परिवार रुपी संगठन का सदस्य है और यह सदस्यता उसकी सर्वोच्च प्राथमिकता है, तो ऐसा कोई व्यक्ति बिना परिवार की सहमति या अनुमति के स्वतंत्रतापूर्वक किसी अन्य संगठन का सदस्य नहीं हो सकता और यदि होता है, तो वह असामाजिक कार्य माना जायेगा।

519 पारिवारिक

5190. परिवार और समाज का अनुशासन पूरी तरह हट जाने से समाधान कम और समस्याएं अधिक बढ़ रही हैं। यदि किसी व्यक्ति की कोई स्वतंत्रता समाज पर दुष्प्रभाव डालती है, तब समाज उसे अनुशासित कर सकता है, किन्तु बाधित नहीं। बाधा पैदा करना या रोकना राज्य का काम है, समाज का नहीं।

5191. रक्त संबंधों के शारीरिक संबंधों से संतानोत्पत्ति पूरी तरह वर्जित है। फिर भी इसे अनुशासित ही कर सकते हैं, प्रतिबंधित नहीं।

5192. चाहे व्यवस्था पारिवारिक हो या स्थानीय अथवा राष्ट्रीय, व्यवस्था को ठीक ढंग से चलाते रहने के लिए दो आवश्यकताएं होती हैं - 1. मुखिया अधिकार सम्पन्न हो। 2. मुखिया समझदार हो। यदि

मुखिया में कोई एक भी कमी हो, तो अव्यवस्था निश्चित है।

5193. समाज में कुछ परिवार अक्षम और कुछ सक्षम होते हैं। सक्षम परिवारों का कर्तव्य है कि वे अक्षम लोगों की सहायता करें।

520 समाज

5200. समाज किसी देश या क्षेत्र में बंधा नहीं हो सकता। समाज तो सम्पूर्ण विश्व के सभी मानवों का एक होता है, चाहे वह किसी धर्म को क्यों न माने।

5201. समाज सर्वोच्च होता है, धर्म और राज्य सहायक। राज्य को सरकार माना जाता है जो समाज की एक व्यवस्था होती है। राज्य की सीमा देश होती है, तो समाज की राष्ट्र, इस तरह सरकार या राज्य का सम्बन्ध देश से है, राष्ट्र से नहीं।

5202. देश की एक सरकार होती है जो प्रत्येक मतदाता द्वारा सीधे चुनाव से बनती है। यह सरकार राष्ट्र द्वारा बनाये गए किसी संविधान के अनुसार कार्य करती है। सरकार या संसद संविधान का उल्लंघन या संशोधन नहीं कर सकती, क्योंकि संविधान राष्ट्र के नागरिकों या उनकी किसी स्वतंत्र व्यवस्था द्वारा निर्मित है।

5203. सरकार का एकमात्र दायित्व होता है, सुरक्षा और न्याय की स्थापना। अन्य सभी काम राष्ट्र सभा कर सकती है या आवश्यकतानुसार सरकार को दे सकती है। राष्ट्र सभा का गठन नीचे के क्रम से होना चाहिए। परिवार मिलकर गांव सभा, गांव; जिला सभा, जिला; प्रदेश सभा और प्रदेश मिलकर केन्द्र या राष्ट्र सभा का गठन करें। नीचे वाली सभा ऊपर वाली सभा को अधिकार दे या ले सकती हैं। यदि राष्ट्र सभा और सरकार के बीच कभी सहमति न बने, तो

जनमत संग्रह भी हो सकता है।

5204. यदि राष्ट्र सभा का कोई निर्णय व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के विरुद्ध हो, तो न्यायपालिका ऐसे निर्णय को रद्द कर सकती है।

5205. किसी सामाजिक कुरीति के सम्बन्ध में राष्ट्र सभा ही हस्तक्षेप कर सकती है, क्योंकि राष्ट्र सभा समाज का प्रतिनिधित्व करती है। इसलिए इसमें सरकार को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

5206. राजनेताओं ने तानाशाही के लिए बदनाम साम्यवाद को संशोधित कर जनाकर्षक नाम समाजवाद दे दिया। समाजवाद को समानता शब्द के साथ इस तरह जोड़ा गया कि समानता शब्द स्वतंत्रता को संकुचित करते जाने के लिए राजनीतिज्ञों के लिए ब्रह्मास्त्र का काम करने लगा।

5207. व्यक्ति की स्वतंत्रता और सहजीवन का तालमेल समाजशास्त्र कहलाता है। प्रत्येक व्यक्ति हमेशा दो भूमिकाओं में रहता है :- (1) व्यक्ति, (2) नागरिक। कोई भी व्यक्ति कभी समाज से अलग होकर नहीं रह सकता दूसरी ओर किसी भी व्यक्ति की स्वतंत्रता कभी भी शून्य नहीं की जा सकती है।

5208. नई व्यवस्था में चार परिभाषाएँ मान्य की गयी हैं -

1. किसी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य की स्वतंत्रता का उल्लंघन करना ही अपराध है।
2. स्वराज्य का अर्थ है - प्रत्येक इकाई को अपना आंतरिक संविधान बनाने और क्रियान्वित करने की स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीय संविधान बनाने में सहभागिता।
3. सामूहिक संपत्ति तथा सामूहिक उत्तरदायित्व के आधार पर एक साथ रहने वाले व्यक्तियों के समूह को परिवार कहते हैं।
4. स्वतंत्रता और सहजीवन का तालमेल व्यक्त करने वाले

दस्तावेज को समाजशास्त्र कहते हैं।

520 सामाजिक आपातकाल

5209. जब समाज में आम लोग अपराधियों से डरने लगे, उनके खिलाफ आमतौर पर शिकायत करने, गवाही देने या सच बोलने से भी डरे ऐसी परिस्थिति को सामाजिक आपातकाल कहते हैं। ऐसे समय में राज्य को गुप्त मुकदमा प्रणाली का प्रयोग करना चाहिए।

5210. जब भी समाज पर कोई संकट आता है, तब धर्म और आध्यात्म समाज की सहायता के लिए आगे आते हैं। रामायण काल में ऋषियों ने राम को शस्त्र भी दिये और शस्त्र चलाने की ट्रेनिंग भी। ऐसे समय में सत्य और धर्म की परिभाषा बदल जाया करती है। रामायण काल में बालि वध या मेघनाद यज्ञ विध्वंस में धर्म और कर्तव्य की परिभाषा बदल गयी, तो महाभारत काल में भी कई जगह सत्य को व्यावहारिक स्वरूप देना आवश्यक समझा गया। वर्तमान समय में भी आध्यात्म और धर्म को व्यावहारिक परिभाषाओं के साथ समाज की सुरक्षा में आगे आना चाहिए।

5211 जिस भगवान राम ने यज्ञ को श्रेष्ठतम कार्य कहकर विश्वामित्र के यज्ञ की सुरक्षा की थी, उन्हीं ने मेघनाद के यज्ञ का यह कहकर विध्वंस कर दिया कि आपातकाल में यज्ञ महत्वपूर्ण नहीं होता, बल्कि महत्वपूर्ण होता है यज्ञ से प्राप्त परिणाम।

521 समाज और राज्य

5212. समाज व्यवस्था को कमजोर करके राज्य व्यवस्था लगातार मजबूत हो रही है। साथ ही इस समाज कमजोरीकरण योजना में धर्म व्यवस्था भी सक्रिय है। भारत की वर्तमान समस्याएं तब

तक नहीं सुलझ सकतीं, जब तक भारत की समाज व्यवस्था को राजनैतिक प्रभाव से मुक्त न कर दिया जाय। न्याय और सुरक्षा के अतिरिक्त सारे काम राज्य समाज को सौंप दे और अपनी सारी शक्ति समाज को न्याय और सुरक्षा की गारंटी तक सीमित कर ले, यही है व्यवस्था परिवर्तन।

5213. प्राकृतिक अधिकारों की पूर्ति करना समाज का दायित्व होता है। समाज इन अधिकारों की पूर्ति का दायित्व व्यवस्था को देता है। इस तरह यह दायित्व व्यवस्था का हो जाता है। संवैधानिक अधिकारों की पूर्ति व्यवस्था का स्वैच्छिक कर्तव्य होता है। इन अधिकारों की पूर्ति के लिए व्यवस्था बाध्य नहीं है। संवैधानिक अधिकारों की पूर्ति व्यवस्था राज्य को सौंपती है। संवैधानिक अधिकारों की पूर्ति व्यवस्था का कर्तव्य, किन्तु राज्य का दायित्व होता है।

5214. सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक परिवर्तन का आधार है, कानून नहीं। सामाजिक व्यवस्था में कानून कभी हस्तक्षेप नहीं करता और न करना चाहिए। राजनैतिक और सामाजिक व्यवस्था के बीच यदि स्पष्ट विभाजन रेखा खींची जाये, तो ग्रामसभा समाज का प्रतिनिधित्व करती है और ग्राम पंचायत राज्य का।

5215. राज्य और समाज एक-दूसरे के पूरक हैं। कुछ विद्वानों ने अपनी सारी शक्ति राज्य की आवश्यकता को ही नकारने में लगा दी। दूसरी ओर राज्य ने समाज को अक्षम, अयोग्य और अनपढ़ कह-कहकर अल्पवयस्क प्रमाणित कर दिया। आज भी हमारे कुछ विद्वान राज्य विहीन व्यवस्था की वकालत करते हैं। मेरे विचार से राज्य विहीन नहीं सिर्फ राज्य मुक्त व्यवस्था होनी चाहिए।

5216. पांच प्रकार के अपराध राज्य की निष्क्रियता के कारण बढ़ने लगे

और छः प्रकार की समस्याएं राज्य की अति संकीर्णता के कारण बढ़ने लगी। राज्य की गलत प्राथमिकताएं समाज के लिए घातक हुई। समाधान तो कुछ नहीं हुआ, बल्कि अनेक समस्याएं और बढ़ गयीं। चोरी, डकैती, मिलावट, बलात्कार, जालसाजी, धोखा, हिंसा, आतंक आदि अपराध खुले आम होने लगे। अपहरण ने एक उद्योग का रूप ग्रहण कर लिया। नागरिकों का कानून पर से विश्वास उठने लगा। भारत का प्रत्येक नागरिक (FirstAttack is well defence) की नीति पर विश्वास करने लगा।

5217. भारत विभाजन के बाद हमने साम्प्रदायिकता के समापन की उम्मीद बांधी थी। भारत तो विभाजित हुआ, किन्तु साम्प्रदायिकता फिर भी वैसी की वैसी फन उठाये खड़ी है। जातीय कटुता भी बढ़ रही है। छुआछूत तो लगभग समाप्ति की ओर है। जाति प्रथा भी दम तोड़ रही है, आर्थिक असमानता और श्रम शोषण भी तीव्र गति से बढ़ रहा है। सम्पूर्ण समाज व्यवस्था में धन का प्रभाव और महत्व बढ़ा है। उसी तरह श्रम शोषण के भी नये-नये तरीके इजाद हो रहे हैं।

5218 जिस देश में कानून बनाने वालों की नीयत और नीतियां दोनों ही गलत हो, वहां उन्हें और अधिकार देने की बात उचित नहीं होती। भारत की वर्तमान अनेक समस्याओं का कारण समाज का कमजोर होकर राजनीति का लगातार मजबूत होना है।

5219. शासन के समाज में अधिकाधिक हस्तक्षेप का मुख्य आधार है समाजवाद, जनकल्याणकारी राज्य और नीति निर्देशक सिद्धांतों का संविधान में समावेश। आज भी भ्रष्टाचार और चरित्र-पतन के प्रमुख कारणों में न तो सत्ता के केन्द्रीकरण को माना जा रहा है न

ही समाजवाद, जनकल्याणकारी राज्य की अवधारणा और नीति निर्देशक सिद्धान्तों को, जबकि ये तीनों ही भ्रष्टाचार और चरित्र-पतन के मुख्य आधार हैं।

5220. 1- भारत का हर राजनैतिक दल लगातार यह प्रयत्न करता है कि समाज में भावनात्मक मुद्दों पर बहस आगे रहे और वैचारिक मुद्दे पीछे छूट जायें। भारत में कुछ ऐसा वातावरण बना दिया गया है कि यदि कोई राजनेता या दल वैचारिक मुद्दे को आगे करने की कोशिश भी करे, तो वह पूरी तरह असफल हो जाता है। 2- समाज को शासक और शासित में बांटकर दोनों के मनोबल में फर्क करने का संगठित प्रयास। विचारणीय प्रश्न यह है कि यदि भारत का औसत नागरिक नितान्त पारिवारिक या स्थानीय मामलों में भी निर्णय की क्षमता नहीं रखता है तो उन्हीं के बीच का तथा उन्हीं के समान औसत योग्यता का व्यक्ति सम्पूर्ण भारत के लिए नियम कानून बनाने की योग्यता कहां से प्राप्त कर लेता है? 3- समाज द्वारा स्वयं को अपराधी मानने की भावना का विकास 4- बिल्लियों के बीच बिना परिश्रम रोटी खाने वाले बंदर की तीन प्रकार की भूमिकाएं हुआ करती हैं (क) बिल्लियों की रोटी कभी बराबर न हो, (ख) बंदर हमेशा रोटी बराबर करता हुआ दिखे, किन्तु करे नहीं कभी और (ग) बिल्ली के मन में छोटी रोटी वाली असंतोष की ज्वाला लगातार धधकती रहे। भारत में सभी राजनैतिक दल पूरी ईमानदारी से तीनों काम कर रहे हैं।

5221. विधायिका के लोग व्यक्ति के रूप में न होकर सिर्फ सामूहिक ही होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि उनकी योग्यता सिर्फ एक ही होती है, कि वे समाज के विश्वास पात्र हों। न उम्र का कोई सम्बन्ध

होता है, न ही किसी योग्यता का। उम्र तथा योग्यता उन लोगों के लिए होती है जिन्हें कार्यान्वयन करना है, नीति निर्धारण नहीं।

5222. अनैतिक, असामाजिक कार्य रोकना समाज का काम होता है सरकार का नहीं। सरकार तो सिर्फ अपराध रोकने का काम करती थी। स्वतंत्रता के बाद सरकार ने सारा काम अपने ऊपर लेकर समाज को निष्क्रिय कर दिया। सरकार ने अनैतिक, असामाजिक कार्य अपने जिम्मे तो ले लिए, किन्तु कर नहीं सकी। इसके विपरीत उसका अपना काम जो अपराध रोकना था, वह पिछड़ता चला गया। व्यक्ति, परिवार, राष्ट्र और समाज के राज्य के साथ वर्तमान संबंधों का पुनर्निर्धारण होना चाहिए।

5223. समाज का सारा काम अपने जिम्मे लेकर राज्य ने समाज को निकम्मा बना दिया है। कोई भी कानून समाज सुधार नहीं कर सकता, क्योंकि समाज सुधार समाज का आंतरिक मामला है और वह विचार परिवर्तन से ही संभव है, कानून से नहीं। समाज एक स्वतंत्र इकाई है और उसे सबकी सहमति से सामाजिक समस्याओं का समाधान खोजने और करने की स्वतंत्रता हो।

5224. राज्य की भूमिका एक या 2% अपराधियों के लिए महत्वपूर्ण नियंत्रक की तथा 98% समाज के लिए शून्य हस्तक्षेप की होनी चाहिए थी। राज्य की भूमिका न्याय एवं सुरक्षा तक सीमित और महत्वपूर्ण होनी चाहिए थी, किन्तु हुआ ठीक उल्टा। 2% अपराधियों में तो राज्य का हस्तक्षेप नगण्य और 98% समाज में महत्वपूर्ण हो गया।

5225. शासन ने बड़ी चालाकी से अपराध शब्द की परिभाषा बदलकर गैर कानूनी कार्यों को भी अपराध कहना शुरू कर दिया। गैर कानूनी

कार्यों में अपराधी इस प्रकार छिप गये, जैसे भूसे के ढेर में सुई छिप जाती है।

522 समाज की परिभाषा

5226. दैवी प्रवृति के व्यक्तियों के समूह को सामाजिक कहते हैं तथा आसुरी प्रवृति वालों को समाज विरोधी। सामाजिक और समाज विरोधी तत्वों के बीच निरंतर संघर्ष होता रहा है। समाज विरोधी तत्वों पर समाज के नियंत्रण को व्यवस्था के नाम से पुकारा जाता है। व्यवस्था समाज द्वारा समाज विरोधी तत्वों पर नियंत्रण तथा समाज के सुचारू रूप से संचालन के लिए बनाई जाती है। समाज की व्यवस्था करने वाले वर्ग को सरकार कहते हैं। समाज शब्द पूरे विश्व का प्रतिनिधित्व करता है।

5227. सामाजिक व्यक्ति वह होता है, जो असामाजिक तथा समाज विरोधी कार्य नहीं करता। असामाजिक व्यक्ति वह होता है, जो सामाजिक कार्य भी, करता है तथा असामाजिक भी किन्तु समाज विरोधी कार्य नहीं करता। समाज विरोधी वह होता है, जो तीनों प्रकार के कार्य करने को स्वतंत्र है।

5228. राष्ट्र की एक भौगोलिक सीमा होती है, किन्तु समाज की नहीं। अमेरिका या पाकिस्तान का नागरिक भी समाज का तो हिस्सा है, किन्तु राष्ट्र का नहीं। इसीलिए समाज को राष्ट्र से ऊपर माना जाना चाहिए।

5229. प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता असीम होती है और किसी अन्य के साथ जुड़ते ही उसकी स्वतंत्रता समान और संयुक्त हो जाती है। स्वतंत्रता और सहजीवन का तालमेल ही समाजशास्त्र है। वर्तमान

समय में यह तालमेल गड़बड़ हो गया है। समाजशास्त्र असफल हो गया है, इसीलिए परिस्थितियों को देखते हुए समाज विज्ञान की आवश्यकता महसूस हो रही है, जो संशोधित समाजशास्त्र प्रस्तुत करे।

5230. समाज का अर्थ होता है, प्रत्येक इकाई की इकाईगत स्वतंत्रता को मान्य करने वाले व्यक्तियों का समूह। समाज व्यक्तियों का समूह होता है, व्यक्ति समूहों का समूह नहीं।

523 समाजशास्त्र

5231. समाजशास्त्र का सामान्य सिद्धान्त है कि "शराफत जब सीमा से आगे बढ़ती है, तो मूर्खता में बदल जाती है और चालाकी जब सीमा से आगे बढ़ती है, तो धूर्तता में बदल जाती है।" इसीलिए हम शराफत को छोड़कर समझदारी को आगे बढ़ाना चाहते हैं, जिससे धूर्तता पर नियंत्रण आसान हो सके।

5232. समाज एक निर्लिप्त संगठन न होकर एक दायित्व पूर्ण संगठन है, जिसके अनुसार यदि कोई किसी अन्य का जीवन लेगा, तो समाज उस नागरिक को अधिकतम सुरक्षा देगा और फिर भी यदि कोई व्यक्ति अपनी सीमाएं पार करेगा, तो उसे आवश्यकतानुसार दण्ड भी देगा, भले ही प्राण दण्ड ही क्यों न हो। यह दण्ड समाज स्वयं नहीं दे सकता, बल्कि राज्य के माध्यम से ही दिया जा सकता है।

5233. समाजशास्त्र व्यक्ति को विचार संकुचन से हटाकर विचार विस्तार की दिशा देता है, स्व-चिन्तन को हटाकर सर्व-चिन्तन की ओर सक्रिय करता है तथा सिद्धांतों का व्यावहारिकता से तालमेल कराता है। इसीलिए हम धर्मशास्त्र, राजनीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र

की तुलना में समाजशास्त्र को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।

5234. समाज में शराफत और धूर्तता के बीच हमेशा ही टकराव रहा है। शरीफ लोगों की औसत संख्या 98% और अपराधी धूर्तों की 2% के आस-पास होती है। ये 2% लोग स्वयं को सुरक्षित बनाये रखने के लिए वर्ग निर्माण का सहारा लेते हैं। यह वर्ग निर्माण ऐसे तत्वों को छिपने के भी अवसर प्रदान करता है और 98 % लोगों को कई वर्गों में बांटकर उनमें आपसी वर्ग-संघर्ष कराने के भी अवसर पैदा करता है। अपराधियों की यह चालाकी हजारो वर्षों से चली आ रही है और आज तो और भी तीव्र गति से बढ़ रही है भले ही उसका स्वरूप कुछ बदल गया हो।

5235. समाजशास्त्र का यह आवश्यक नियम होता है कि आर्थिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक समस्याओं की ठीक-ठीक तथा अलग-अलग पहचान हो, तो उसका समाधान भी उसी वर्ग के अनुसार किया जाये, अर्थात् सामाजिक समस्याओं का सामाजिक, आर्थिक समस्याओं का आर्थिक तथा प्रशासनिक समस्याओं का प्रशासनिक समाधान हो।

5236. समाज के सुव्यवस्थित संचालन में धर्म, समाज और राज्य की पृथक-पृथक भूमिका को समझना आवश्यक है। समाज को एक बृहद परिवार कहा जा सकता है। जिस तरह की संरचना परिवार की होती है, वैसी ही समाज की भी होती है। यदि समाज के अंदर वर्गभेद आधारित पृथक समाज की विकृति को नहीं रोका गया तो किसी दुर्घटना से बचना कठिन होगा।

5237. समाज किसी भी व्यक्ति के गलत कार्यों के विरूद्ध उसका बहिष्कार कर सकता है, किन्तु समाज किसी भी व्यक्ति के गलत कार्यों के

विरूद्ध बिना कानूनी प्रक्रिया के दण्ड नहीं दे सकता। यदि व्यक्ति के कुछ मौलिक अधिकार हैं, तो समाज के भी अपने कुछ सामाजिक अधिकार हैं। आप समाज की अनदेखी करके चलेंगे, तो समाज आपका बहिष्कार कर सकता है।

5238. यदि समाज स्वतंत्र रूप से न सोच सकेगा, न कर सकेगा, तो उसमें जड़ता आयेगी ही।

5239. भारतीय समाज की गिरती हुई स्थिति चिन्ता का विषय न होकर, चिन्तन का विषय होना चाहिए, सिर्फ समाधान का मार्ग खोजना है।

5240. समाज में चार प्रकार के लोग होते हैं - मार्गदर्शक, रक्षक, पालक और सेवक। मार्गदर्शक और पालक को प्रवृत्ति में दयालु होना चाहिए, जबकि रक्षक और सेवक को दयालु प्रवृत्ति प्रधान नहीं होना चाहिए।

5241. समाज किसी भी पशु, जीव, पेड़-पौधे को अबध्य घोषित कर सकता है, किन्तु कोई वर्ग नहीं कर सकता। किसी वर्ग द्वारा घोषित किसी पशु-पक्षी को सम्मान देना अन्य वर्ग की मजबूरी नहीं है।

5042. समाज का संस्थागत ढांचा कमजोर करके संगठनात्मक ढांचा मजबूत किया जा रहा है। सब जानते हैं कि संस्थाएं समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं, तो संगठन आवश्यकताओं को पैदा करते हैं। फिर भी इतना जानते हुए भी संगठनों को बढ़ावा दिया जा रहा है।

525 अधिकार विभाजन

5250. पूरी दुनिया में आदर्श व्यवस्था वह होती है, जिसमें व्यक्ति, परिवार, राज्य और समाज के अधिकारों का संतुलित विभाजन

हो। दुनिया में जहां कहीं भी इस अधिकार संतुलन को अस्वीकार करके व्यक्ति, जाति, धर्म और राज्य के अधिकार विभाजन को स्वीकार किया गया, उन सभी देशों में अशान्ति और अव्यवस्था का खतरा बना रहता है।

5251. आज भी समाज व्यवस्था के नाम पर सामाजिक पंचायत व्यक्ति या परिवार के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील है। समाज भी उस पर कानून थोपता है और राज्य भी। समाज कभी किसी व्यक्ति या परिवार को दण्ड नहीं दे सकता, वह तो बहिष्कार करने तक ही सीमित है। सरकार समाज से बहिष्कार तक का अधिकार छीनना चाहती है, तो समाज राज्य से दण्ड देने तक का अधिकार लेना चाहता है, जबकि ऐसे अनेक अधिकार या तो व्यक्ति के हैं या परिवार के, राजनैतिक और सामाजिक व्यवस्था के बीच यदि स्पष्ट विभाजन रेखा खींची जाये, तो ग्रामसभा समाज का प्रतिनिधित्व करती है और ग्राम पंचायत राज्य का। राज्य और समाज के अधिकारों की विभाजन रेखा में समाज का पक्ष मजबूत हो और इसके लिए संविधान से वे सभी प्रावधान हटा दिये जाएं, जो राज्य को मजबूत करते हैं।

5252. राज्य ने जिस गति से अधिकार अपने पास इकट्ठे किये, उसी गति से भ्रष्टाचार बढ़ा।

5253. राज्य समाज को दबाकर स्वयं शक्तिशाली होना चाहता है या प्रयास करता है। समाज राज्य के ऐसे प्रयास को नियंत्रित करता है कि वह अपनी सीमा में रहे। जब राज्य अपनी सीमाएं तोड़ना शुरू कर देता है, तब धर्म अपना काम छोड़कर समाज की रक्षा करने के लिए आगे आता है। वर्तमान समय में राजनीति ने समाज व्यवस्था

को या तो पंगु बना दिया है या नियंत्रित कर लिया है। सामाजिक अनुशासन रहा नहीं और राजनैतिक व्यवस्था अपराधियों से सांठगांठ के कारण अव्यवस्था में बदल चुकी है। ऐसे समय में धर्म को समाज की सहायता में आगे आना चाहिए, लेकिन धर्म इस सम्बन्ध में चुप है या राज्य के सामने स्वयं को असहाय मान रहा है।

5254. शासन राष्ट्र का भी प्रतिनिधित्व करने लगा और समाज का भी। परिणाम स्वरूप शासन लगातार अपने अधिकार और हस्तक्षेप में वृद्धि करता गया और उसी गति से समाज के अधिकार, दायित्व और हस्तक्षेप में कमी आती गयी। शासन का समाज में जितना हस्तक्षेप बढ़ा, उतना ही समाज कमजोर हुआ।

5255. सामाजिक अधिकार समाज देता है जिनकी सुरक्षा की गारंटी व्यक्ति देता है। कोई किसी की सीमाओं में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। महिला हो या पुरुष, सबके मौलिक अधिकार समान होते हैं। इनमें कोई भेद नहीं हो सकता। सामाजिक अधिकार अलग-अलग होते हैं, क्योंकि दोनों की प्राकृतिक संरचना, स्वभाव तथा सक्रियता में फर्क होता है।

5256. सामाजिक अधिकारों के मामले तो “न्यायपालिका और विधायिका” दोनों के हस्तक्षेप से बाहर होने चाहिए, किन्तु हैं नहीं। ना समझी में ये लोग सामाजिक अधिकारों में भी मूल या संवैधानिक शब्द घुसाने की भूल कर देते हैं और यह भूल दोहराते जाना इनकी आदत है।

5257. सामाजिक अधिकारों की सुरक्षा व्यक्ति और समाज का दायित्व होता है। कानूनी अधिकारों की सुरक्षा कानून का अर्थात संवैधानिक

व्यवस्था का दायित्व होता है। दायित्व बाध्यकारी होता है और कर्तव्य स्वैच्छिक।

526 समाज व्यवस्था

5260. स्वतंत्रता के बाद लगातार समाज व्यवस्था कमजोर हो रही है। ग्यारह प्रकार की समस्याएं लगातार बढ़ रही हैं, जिनमें - (1) चोरी, डकैती, लूट, (2) बलात्कार, (3) मिलावट, कमतौल, (4) जालसाजी, धोखाधड़ी, (5) हिंसा, आतंक, (6) भ्रष्टाचार, (7) चरित्रपतन, (8) साम्प्रदायिकता, (9) जातीय कटुता, (10) आर्थिक असमानता, (11) श्रम शोषण।

5261. समाज व्यवस्था त्रिस्तरीय है - (1) व्यक्ति, (2) परिवार, (3) समाज। पहली इकाई में प्रत्येक व्यक्ति एक स्वतंत्र इकाई है। उसमें सबको समान अधिकार होना चाहिए। दूसरी इकाई परिवार है, जिसमें शामिल सभी सदस्यों की सहमति अनिवार्य है। इसमें महिला और पुरुष कोई पृथक समुदाय नहीं होता। तीसरी इकाई समाज है जिसमें सब लोग शामिल हैं। इसमें सहमति और असहमति का कोई प्रश्न नहीं है। दुनिया की अनेक व्यवस्थाओं में से भारतीय समाज व्यवस्था ही एकमात्र ऐसी व्यवस्था है, जो त्रिस्तरीय है। साथ ही साथ भारतीय समाज व्यवस्था को इस बात का भी गौरव प्राप्त है कि वह सबसे ज्यादा लम्बे समय तक सफलतापूर्वक चल रही है तथा वह विपरीत परिस्थितियों में भी लम्बे समय तक टिकी रह सकती है अन्यथा अन्य कोई समाज व्यवस्था नहीं है, जो दूसरी समाज व्यवस्थाओं के इतने आक्रमणों के बाद भी जीवित बच सके।

5262. भारतीय समाज व्यवस्था में दो मौलिक इकाइयों "व्यक्ति और

समाज" के बीच एक तीसरी इकाई है, जिसे परिवार कहते हैं। जिस तरह व्यक्ति और समाज को पृथक-पृथक मौलिक अधिकार प्राप्त है, उस तरह के मौलिक अधिकार तो परिवार को प्राप्त नहीं होते किन्तु परिवार भी कोई ऐसी इकाई नहीं होती जो कुछ व्यक्तियों की साझेदारी से बनता हो। परिवार साझेदारी व्यवस्था से नहीं, बल्कि संयुक्त अधिकार व्यवस्था से बनता है।

5263. अम्बेडकर जी को भारतीय समाज व्यवस्था में कभी वैसा सम्मानजनक विश्वास प्राप्त नहीं हुआ, जैसा नेहरू या पटेल को प्राप्त था। सब कुछ करते हुए भी अम्बेडकर जी उस समय का लोकसभा चुनाव हार गये। समाज व्यवस्था को वरीयता दिलाने का कोई भी मार्ग संविधान व्यवस्था के माध्यम से ही आगे जा सकता है क्योंकि भारत में लोकतंत्र है और लोकतंत्र में हिंसा का स्थान नहीं होता।

5264. भारत की अति प्राचीन सामाजिक व्यवस्था पूरी दुनिया की तुलना में अधिक विकसित तथा वैज्ञानिक थी। यदि हम पूरी दुनिया का आकलन करें, तो भारत की व्यवस्था ही एक मात्र ऐसी सामाजिक व्यवस्था थी जिसमें प्रवृत्ति, योग्यता और क्षमता के अनुसार कार्य विभाजन था। उसमें भी ज्ञान और त्याग को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था।

5265. प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक व्यवस्था में सहभागी होना उसके लिए बाध्यकारी है। सामाजिक व्यवस्था के समक्ष सम्पूर्ण समर्पण उसकी मजबूरी है। कोई बड़े से बड़ा अपराधी भी समाज व्यवस्था की सहभागिता से वंचित नहीं किया जा सकता। इसका अर्थ हुआ कि किसी दण्ड प्राप्त अपराधी को भी किसी कानून के अंतर्गत

संसद की सहभागिता से तब तक नहीं रोका जा सकता, जब तक संसद संविधान संशोधन की अन्तिम अधिकार प्राप्त इकाई है।

5266. विश्व स्तर तक मैं व्यक्ति, परिवार, गांव से समाज तक की व्यवस्था का पक्षधर हूं तथा लिंग, जाति, धर्म, राष्ट्र की व्यवस्था का विरोधी। हमारे नेताओं ने परिवार, समाज को पूर्व की नकल करके अधिकार-विहीन किया तथा स्वयं को मजबूत किया।

5267. भारतीय सामाजिक व्यवस्था वर्तमान समय में तीन तरफ से आक्रमण झेल रही है - (1) साम्यवाद, (2) दारुल इस्लाम, (3) पाश्चात्य संस्कृति। यदि राजनैतिक तौर पर तीन श्रेणियां - (1) शत्रु, (2) विरोधी, (3) प्रतिस्पर्धी मान लें, तो "साम्यवाद शत्रु", "दारुल इस्लाम विरोधी" और "पाश्चात्य संस्कृति को प्रतिस्पर्धी" की श्रेणी में रखा जा सकता है।

5268. यदि हम हिन्दुत्व को भारतीय समाज व्यवस्था के साथ जोड़कर देखें, तो संघ के कार्य हिन्दुत्व की सुरक्षा में तो सहायक है, किन्तु विस्तार में बाधक। राष्ट्रवाद भारतीय समाज व्यवस्था के लिए बहुत घातक है, किन्तु वर्तमान समय में साम्यवाद और दारुल इस्लाम के खतरे को देखते हुए हमें सावरकरवादियों और उसके राष्ट्रवाद को शक्ति देने के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है।

5269. समाज व्यवस्था के प्रत्येक अंग एक-दूसरे से इस तरह जुड़े हैं कि किसी एक के सुधार से कोई परिणाम दिखने वाला नहीं।

5270. यह बात गलत है कि लोगों का जीवन स्तर सुधरेगा, तो अपराध स्वयं घट जायेंगे। आर्थिक या बौद्धिक स्तर पर अधिक सक्षम लोग कम अपराध करें, यह बिल्कुल गलत है। यह बात भी गलत है कि अपराध तो अपराध होता है, चाहे वह सामाजिक हो या गैरकानूनी।

अपराध और गैर कानूनी में बहुत अन्तर होता है।

5271. व्यवस्था के चार अंग होते हैं - (1) आध्यात्म, (2) धर्म, (3) समाज, (4) राज्य। समाज व्यक्ति को अनुशासित करता है। जब कोई व्यक्ति धर्म का दुरूपयोग और समाज का अनुशासन मानना बन्द कर दे, तभी राज्य को हस्तक्षेप करना चाहिए, अन्यथा उसे समाज से दूर रहना चाहिए।

5272. व्यवस्था के चार अंग होते हुए भी यह आवश्यक है कि व्यवस्था के चारों अंगों का अपना-अपना अस्तित्व भी बना रहे और चारों का सामूहिक अस्तित्व भी। कानूनी व्यवस्था सामाजिक व्यवस्था की सहायक तो हो सकती है, किन्तु विकल्प बनाने का प्रयास घातक होगा। राजनीति से जुड़े लोग बहुत तेज गति से सामाजिक व्यवस्था पर नियंत्रण करने की होड़ में लगे हुए हैं। ये सामाजिक व्यवस्था को सामाजिक न्याय की दिशा में कितना बढ़ा सकेंगे, यह तो निश्चित पता नहीं, किन्तु समाज और परिवार व्यवस्था को इतना क्षत-विक्षत कर देंगे कि हम लम्बे समय तक उसके दुष्परिणाम भोगते रहेंगे। इसलिए समाज को इस सम्बन्ध में सावधानी पूर्वक कदम उठाना चाहिए।

5273. समाज में व्यवस्था बनाये रखने के दो ही मार्ग हैं - 1- तानाशाही, 2- लोक स्वराज्य। लोकतांत्रिक शासन में स्वतंत्रता तो होती है, किन्तु व्यवस्था नहीं होती। आज तक लोकतांत्रिक शासन पद्धति में दुनिया के किसी देश में व्यवस्था न तो स्थापित हो पायी है, न होना संभव है।

5274. समाजसेवा पूरी तरह नि:स्वार्थ होने से उसे राजनीति या व्यवसाय की अपेक्षा अधिक सम्मान प्राप्त था, जब अंग्रेजों ने भारतीय

व्यवस्था में प्रवेश किया, तो उन्होंने व्यवसाय के माध्यम से राज्य पर कब्जा किया। वर्तमान समय में समाज सेवा भी व्यवसायीकरण हो जाने के कारण समाज सेवा को वह सम्मान प्राप्त नहीं है, जो होना चाहिए।

5275. कानून की दृष्टि में सभी पशु, पशु होंगे। सरकार को किसी पशु के वध या सुरक्षा में कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह उसका दायित्व नहीं है। गांव-समाज यदि ऐसा कोई नियम बनाये, तो बना सकता है।

5276. समाज के समक्ष तीन स्थितियां होती हैं - (1) तंत्र आश्रित समाज व्यवस्था, (2) तंत्र मुक्त समाज व्यवस्था, (3) तंत्र रहित समाज व्यवस्था। वर्तमान समय में तंत्र आश्रित समाज व्यवस्था चल रही है, उसे तंत्र मुक्त होना चाहिए। तंत्र रहित समाज व्यवस्था यूटोपिया है।

5277. दुनिया की व्यवस्था चार प्रवृत्तियों का समिश्रण होती है - (1) विचार मंथन और मार्गदर्शन, (2) शक्ति और सुरक्षा, (3) धन और सुविधा, (4) पूर्ण स्वतंत्रता और सेवा। प्रत्येक व्यक्ति में ये चारों प्रवृत्तियां एक साथ होती हैं और अलग-अलग भी होती हैं। चारों प्रवृत्तियों का सामान्य स्वरूप व्यक्ति में एक साथ होता है और विशेष स्वरूप अलग-अलग।

528 सुरक्षा और न्याय

5280. पुलिस के दायित्व एकदम से इतने कम कर दिये जायें कि वह अपराध नियंत्रण तक सीमित हो जाये। समाज के कामों में पुलिस का हस्तक्षेप शून्य होने से पुलिस को अपराध नियंत्रण के लिए

पर्याप्त समय मिलेगा।

5281. समाज में जब समाज विरोधी स्वच्छंद तथा समाज कायर की तरह मूकदर्शक हो जाता है, उसे अराजक स्थिति कहते हैं। ऐसी स्थति में अपराधी तत्वों का मनोबल ऊँचा और समाज का मनोबल गिर जाता है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षा और न्याय की गारंटी से मानवता मजबूत होगी। वर्तमान समय में समाज का कानूनों पर से विश्वास बिल्कुल उठ गया है और अपराधियों का कानून से भय समाप्त हो गया है।

5282. भारत के सम्पूर्ण केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकारों के बजट का सिर्फ 1% मात्र पुलिस और कोर्ट पर खर्च होता है। इस 1% बजट में भी 90% सामाजिक असमानता नियंत्रण में लग जाता है। अपराध नियंत्रण पर भारत के सम्पूर्ण बजट का 100 रुपये में से सिर्फ 10 पैसा ही खर्च होता है।

5283. जब तक चरित्र नहीं सुधरेगा तब तक कुछ नहीं सुधरेगा। यह बात पूरी तरह गलत है। सन् 1947 में सबका चरित्र आज से कई गुना अच्छा था। फिर चरित्र में गिरावट क्यों आयी। स्पष्ट है कि व्यवस्था दोषपूर्ण थी, जिसका प्रभाव चरित्र पर पड़ा।

5284. समाज विरोधी व्यक्तियों से सामाजिक व्यक्तियों की सुरक्षा की चिन्ता समाज ही करता है। समाज द्वारा सुरक्षा और न्याय के लिए एक विशेष सेल बनाया जाता है, जिसे सरकार कहते हैं।

5285. आश्चर्य की बात है कि चोरी, डकैती और बलात्कार जैसे संगीन अपराधों में सबूत का भार पुलिस पर है तथा संदेह का लाभ अपराधी को मिलता है

5286. प्रशासन तो सुरक्षा और न्याय के निमित्त बनाया ही गया था। किन्तु

दुर्भाग्य है कि पचास वर्षों में किसी प्रधानमंत्री ने सुरक्षा और न्याय को सर्वोच्च प्राथमिकता नहीं दी।

529 समाज में हिंसा

5290. मैं हिंसा के समर्थकों को कायर मानता हूं। मैं तो यहां तक मानता हूं कि जो लोग सामाजिक व्यवस्था के बदलाव के लिए सरकारों का मुंह देखते हैं, वे भी निकम्मे हैं। गांधी जी ने अपने आचरण और विचार के बल पर सामाजिक परिवर्तन का प्रयास किया था।

5291. सम्पूर्ण समाज में न्याय प्राप्ति के लिए सामाजिक हिंसा पर अधिक विश्वास बढ़ता जा रहा है। प्रशासनिक बल प्रयोग यदि आवश्यकता से कम होता है, तो समाज में उसकी उसी तरह प्रतिक्रिया होती है, जिस तरह कीटाणुओं पर कम दवा का विपरीत प्रभाव होता है। राज्य द्वारा गांधी विचारों से प्रभावित होकर न्यूनतम हिंसा का सहारा लिया गया, उसी के परिणाम स्वरूप समाज में हिंसा बढ़ रही है। आज तो यह प्रश्न ही विवादास्पद बन गया है कि हिंसा को रोकने के प्रयत्न हिंसा का विस्तार कर रहे हैं या नियंत्रण।

5292. सामाजिक हिंसा तब बढ़ती है, जब राज्य समाज को न्याय और सुरक्षा देने में विफल हो जाये तथा समाज का न्याय और सुरक्षा के लिए हिंसा पर विश्वास बढ़ता चला जाये। एक ओर सम्पूर्ण समाज में हिंसा के प्रति विश्वास बढ़ रहा है, तो दूसरी ओर कायरता का भी विस्तार स्पष्ट दिख रहा है। यदि समाज को सुरक्षा और न्याय नहीं मिला, तो हिंसा की आवश्यकता को कमजोर करना कठिन है।

5293. समाज को कभी भी तब तक सामाजिक हिंसा को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए, जब तक वर्तमान शासन व्यवस्था को बदलकर

नई शासन व्यवस्था बनाने का लोकतांत्रिक तरीका उसके पास सुरक्षित है। इसलिए समाज को किसी भी परिस्थिति में सामाजिक हिंसा का समर्थन नहीं करना चाहिए। साथ ही मेरा यह भी मानना है कि राज्य को उस सीमा तक हिंसा का मार्ग अपनाना चाहिए, जब तक अपराध प्रवृत्ति वाले अपराध न छोड़ दें। यदि इस कार्य के लिए राज्य खुली फांसी की भी व्यवस्था करे, तो मैं गांधीवादी होते हुए भी ऐसी खुली फांसी का पक्षधर हूं।

530 समाज और गुलामी

5300. उच्छृंखलता और गुलामी के बीच गुलामी अधिक घातक है और यदि गुलामी के बाद भी उच्छृंखलता न रूके, तो ऐसी गुलामी को तो तत्काल ही त्याग देना चाहिए। उच्छृंखलता का भय दिखाकर राजनैतिक दलाल हमें गुमराह करेंगे, किन्तु हमारा कर्तव्य है कि हम सतर्क रहें। उन्हें जब पता चलेगा कि इस बदलाव से उनके कानूनी हस्तक्षेप में कमी आयेगी तथा सामाजिक गुलामी कम होगी, तो वे अवश्य कोई-न-कोई तिकड़म करेंगे। सैकड़ों वर्षों से समाज को गुलाम बनाने के प्रयत्नों को वे इतनी आसानी से ध्वस्त नहीं होने देंगे। लोक स्वराज्य व्यवस्था से समाज में भले ही थोड़ी-सी उच्छृंखलता बढ़ जाये, किन्तु राज्य की गुलामी से तो मुक्ति अवश्य दिलायेगी।

5301. प्राचीन समय में अनेक सामाजिक बुराईयों के होते हुए भी अनेक अच्छायां भी थीं कि समाज का पृथक अस्तित्व था। जिसके आन्तरिक मामलों में राजा का हस्तक्षेप नहीं के बराबर था तथा आर्थिक या धार्मिक मामलों में भी राजा की भूमिका नगण्य ही होती थी। स्वतंत्रता के बाद राजाओं का स्थान राजनीति ने ले

लिया और उसने समाज को इस प्रकार गुलाम बनाया कि समाज की पूरी सामाजिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई। नई लोकतांत्रिक व्यवस्था में समाज लगभग गुलाम हो गया।

5302. सरकार चाहे किसी की हो, वह सेना और पुलिस के आतंक के बल पर समाज को गुलाम बनाकर रखना चाहती है, यह आतंकवाद है। हर कार्य शासन पर निर्भर हो जाने से गांव, परिवार और व्यक्ति की भूमिका एक ऐसे मालिक के समान हो गयी जो अपने प्रत्येक कार्य के लिए अपने नौकर का गुलाम हो गया। क्योंकि भारतीय संविधान के अनुसार तंत्र लोक का कस्टोडियन होता है। लोक को अनपढ़, अयोग्य, असक्षम मानकर तंत्र ने अपने को संरक्षक घोषित कर दिया है।

5303. समाज शब्द की महत्ता को लगातार कमजोर करके राष्ट्र शब्द को व्यापक स्वरूप दिया जा रहा है। पूरे भारत में यह कार्य योजनापूर्वक किया जा रहा है। राज्य का यह कार्य उचित नहीं है। इस तरह समाज को गुलाम बनाने का हर स्तर पर विरोध होना चाहिए।

5304. परिवार व्यवस्था तथा समाज व्यवस्था को तोड़ने के लिए राज्य व्यवस्था बहुत उतावली दिख रही है। राज्य, धर्म और समाज की अलग-अलग सीमाएं हैं। तीनों एक-दूसरे के उसी तरह पूरक और नियंत्रक होते हैं जिस तरह राज्य व्यवस्था में न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका। भारत की वर्तमान राज्य व्यवस्था धर्म-जाति के साथ तो समझौता कर रही है, किन्तु समाज व्यवस्था के स्वाभाविक अंग परिवार और गांव व्यवस्था को पूरी तरह गुलाम बनाकर रखना चाहती है।

5305. शराब का विरोध समाज को करना चाहिए, परिवार को करना

चाहिए। किन्तु सरकार को नहीं। गुलाम मानसिकता के लोग अपना काम तो करते नहीं और सारा काम सरकार से कराना चाहते हैं, इससे भ्रम फैलता है और सरकार के ऊपर अनावश्यक वजन बढ़ता है। जिसका दुष्परिणाम होता है कि सरकार शराब पर नियंत्रण जैसे सामाजिक कार्य तो करने लगती है तथा चोरी, हत्या, डकैती, बलात्कार जैसे अपराधों को नहीं रोक पाती।

531 समाज निर्माण

5310. जब कार्यपालिका और विधायिका के अधिकारों से लैस संसद ही संविधान संशोधन तक के अन्तिम अधिकार अपनी तिजोरी में बन्द रखे, तो ऐसी शासन व्यवस्था को आंशिक तानाशाही कहना कुछ भी गलत नहीं।

5311. समाज निर्माण तथा समाज की सुरक्षा बिल्कुल अलग-अलग विषय होते हैं। दोनों की अलग-अलग तैयारी भी करनी पड़ती है तथा दोनों के मार्ग भी अलग-अलग होते हैं। समाज को शराफत की शिक्षा देना समाज निर्माण का काम है तथा समझदारी की शिक्षा देना सुरक्षा का कार्य। जब समाज पर गंभीर संकट आ जाता है तो सब काम रोककर भी थोड़े समय के लिए सुरक्षा में अधिक शक्ति लगानी पड़ती है। मेरा आकलन यह है कि समाज निर्माण की अपेक्षा अल्पकाल के लिए सामाजिक सुरक्षा को प्राथमिकता दी जाए।

5312. यदि आग नियंत्रण योग्य है, तो उसे बुझाने का कार्य प्राथमिक होता है और यदि आग भयंकर हो, तो स्वयं को बचाने का कार्य प्राथमिक होता है। आग बुझाना प्राथमिक है या अपना घर बचाना,

यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है, किसी सिद्धान्त पर नहीं।

5313. यदि समाज सशक्तिकरण का कार्य शुरू होगा, तो पहला टकराव राजनेताओं से ही होगा। बाकी लोग हवा देखकर बहेंगे। प्रश्न उठता है कि जब विद्वान, लेखक, कलाकार, राजनेता, धर्म गुरू सरीखे समाज सशक्तिकरण के स्तम्भ ही समाज कमजोरीकरण में लग जायेंगे, तो समाज का क्या होगा, यह चिन्ता का विषय है। यदि हम स्वयं परिवार व्यवस्था को राजनैतिक प्रभाव से मुक्त कर लें, तो समाज सशक्त हो सकता है।

532 समाजवाद

5320. समाज में गरीब और अमीर नाम से वर्ग निर्माण करके वर्ग संघर्ष तक ले जाना भी समाजवादी कदम माना गया, जबकि समाजवाद के समाज में गरीब और अमीर एक समान रूप से शामिल होते हैं। समाजवाद शब्द का सर्वाधिक दुरूपयोग हुआ। समाजवाद का अर्थ सत्ता की अपेक्षा समाज के पास अधिक अधिकार होने से था। पश्चिम के देश समाजवाद की "समाज में आर्थिक विषमता का कम होना" परिभाषा मानते हैं। प्राचीन भारत "सामाजिक मामलों में निर्णय के अधिकतम अधिकार समाज के पास" को समाजवाद मानता रहा।

5321. समाजवाद की दूषित परिभाषा पश्चिमी देशों के वामपंथियों ने बनायी थी। भारत में समानता और समाजवाद की परिभाषाएं सत्ता का समाज की दिशा में अकेन्द्रीकरण तथा समाज का अधिकाधिक सशक्तिकरण माना जाता है, जो पश्चिम और साम्यवादी परिभाषाओं से बिलकुल विपरीत है। समाजवाद की पुराने समय में प्रचलित

परिभाषा में पूंजीवादी प्रभाव के समय साम्यवादियों ने अपने ढंग से संशोधन करके जो परिभाषा बनायी, वह हो सकता है कि उस समय ठीक हो और आज गलत हो गयी हो।

5322. समाजवाद का वास्तविक अर्थ बदलकर साम्यवादियों ने इस शब्द को सत्ता के अकेन्द्रीकरण से हटाकर अर्थ के अकेन्द्रीकरण तक सीमित कर दिया। मुझे लगता है कि समाजवाद शब्द इतना बदनाम हो गया है कि लोकतांत्रिक समाजवाद शब्द को पुनर्जिवित करना कठिन होगा।

5323. पश्चिमी देशों में समाजवाद लोकतंत्र का संशोधित स्वरूप है, जो पूंजीवाद से टकराता है, जबकि नेहरू जी का समाजवाद लोकतंत्र के विकल्प के रूप में आना चाहता था। स्वाभाविक ही था कि ऐसे समाजवादी लोकतंत्र की विदेश नीति भी भिन्न ही होती, जिनके शासकों की प्रवृत्ति तो तानाशाह है, किन्तु उन्होंने आपसी समझौते के अन्तर्गत लोकतंत्र अपनाया हुआ है।

5324. विश्व में साम्यवाद ने बंदूक के माध्यम से पूंजीवाद को परास्त करने की योजना बनायी थी और समाजवाद ने प्रचार को आधार बनाकर। दोनों का लक्ष्य था सत्ता प्राप्ति, टकराव का केन्द्र था पूंजीवाद, किन्तु टकराव के मार्ग भिन्न थे। साम्यवाद का मार्ग हिंसक था और समाजवाद का अहिंसक। किन्तु न दोनों के लक्ष्य में कोई भेद था, न टकराव के केन्द्र में।

5325. समाजवाद का स्वाभाविक अर्थ होता है समाज सर्वोच्च जिसका अर्थ है समाज का अधिक-से-अधिक अधिकार और संप्रभुता संपन्न होना। निर्णय का अन्तिम अधिकार समाज के पास हो। राज्य अपने अधिकार ऊपर से नीचे को देता है, तो समाज अपने

अधिकार नीचे से ऊपर को दे। समाजवाद में राज्य को समाज का प्रबंधक होना चाहिए अभिरक्षक नहीं। यह मौलिक फर्क है। लोकतंत्र और समाजवाद में अधिकारों का अकेन्द्रीकरण ही वास्तविक समाजवाद है।

5326. समाजवाद शब्द का एक ही अर्थ हो गया "पूंजीवाद के विरूद्ध अहिंसक तरीके से सत्ता संघर्ष"। सत्ता प्राप्त करना इनका लक्ष्य है। पूंजीवाद का विरोध इनका मार्ग है। हिंसा से दूरी बनाना इनका आचरण है।

5327. ये हिंसा के मामले में साम्यवादियों से दूरी बनाकर रखते हैं, किन्तु सत्ता के अकेन्द्रीकरण से अब इनका कोई तालमेल नहीं रहा। समाजवाद शब्द ने अपना वास्तविक अर्थ खो दिया और समाजवाद शब्द सत्ता संघर्ष की भेंट चढ़ गया।

5328. समाज की नीचे से ऊपर तक की प्रत्येक इकाई को अधिकतम इकाईगत निर्णय की स्वतंत्रता समाजवाद का भावार्थ है। इसमें धार्मिक, आर्थिक, जातीय, भाषा संबंधी तथा अन्य सब प्रकार की स्वतंत्रता शामिल है। यह स्वतंत्रता उस सीमा तक होनी चाहिए जो किसी अन्य इकाई की सीमा का अतिक्रमण न करे। यह सीमा गलती करने की स्वतंत्रता तक होनी चाहिए।

5329. समाजवाद की वास्तविक अवधारणा को बदलकर जब यूरोप के कुछ देशों ने नई परिभाषा दी, तब उनका उद्देश्य समाज सशक्तिकरण न होकर, समाजवाद के नाम पर राज्य में अपनी भूमिका की तलाश थी। समाजवाद का यह अर्थ नहीं हो सकता कि समाज जिसे चुने, वह शासक या गवर्नमेंट हो, वह समाज में मालिक के समान व्यवहार करे, वह समाज के अधिकार और कर्तव्यों की सीमा रेखा

बनाये, वह जैसा चाहे और जब चाहे तब संविधान में भी संशोधन कर ले।

5330. राज्य समाज का मैनेजर होगा। समाज उसे जितना अधिकार देगा, वह उस सीमा तक ही उपयोग करेगा। वह समाज की स्वीकृति से ही संविधान संशोधित कर सकेगा, आदि, आदि। समाजवाद में परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर परिवार का, गांव की सम्पत्ति पर गांव का स्वामित्व होगा। सरकार को सिर्फ आवश्यकतानुसार ही सम्पत्ति का स्वामित्व दिया जायेगा और वह भी समाज की मर्जी से। समाज राष्ट्र तक सीमित न रहकर, विश्व व्यवस्था तक होगा।

5331. पंडित नेहरू ने समाजवाद का अर्थ किया राष्ट्रीयकरण अर्थात राज्य सशक्तिकरण और जिसका धरातल पर अर्थ हुआ परिवार, गांव, जिले के सारे अधिकार छीनकर राज्य के पास केन्द्रित करना। पंडित नेहरू समाजवाद के पोषक थे, किन्तु आश्चर्य है कि वे कभी समाजवाद का अर्थ समझे ही नहीं।

5332. समाजवादी व्यवस्था हमेशा से ही असंगठित नागरिकों की चिन्ता छोड़कर संगठनों को जोड़कर रखती है। समाजवादी व्यवस्था की एक खास बात होती है कि वह पूंजीवादी देशों से गुप्त रूप से चाहे समझौता कर ले, किन्तु प्रत्यक्ष रूप से तो उसे हर मामले में अमेरिका अथवा पूंजीवाद के विरूद्ध लगातार बोलना ही पड़ता है।

5333. समाजवादी-साम्यवादी विचारधारा गांधी और संघ की विचारधारा से बिल्कुल हटकर आर्थिक ध्रुवीकरण कराना चाहती थी। आजादी मिल भी जाये, तो बहुत अच्छा और देर भी हो जाये तो देखा

जायेगा। उनमें भी समाजवादी गांधी की दिशा में ज्यादा झुके हुए थे, जबकि साम्यवादी अपनी मौका परस्ती की राह पर थे।

5334. समाजवादी हमेशा बीच में रहते हैं। वे लोकप्रियता के लिए आर्थिक आधार पर तो वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष की बात करते हैं, किन्तु सांप्रदायिकता अथवा जातीय कटुता को कभी नहीं उभारते। समाजवादी चरित्र या आचरण के बंधन भी स्वीकार करते हैं। समाजवादियों को छोड़कर किसी अन्य ने कभी जनहित की परवाह नहीं की, चाहे अंबेडकर हों या नेहरू। भारत की वर्तमान राजनीति में समाजवादी सिर्फ नाम के लिए है, उनका समाजवाद से दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं है।

5335. मैं बचपन से ही समाजवादी विचारों का रहा, आज भी मैं नीतीश कुमार की नीतियों को मोदी जी के बाद सबसे अच्छा मानता हूं। मेरे मन पर दो संस्कार छाये रहे। पहला, पारिवारिक सत्ता का विरोध, दूसरा, अल्पसंख्यक तुष्टीकरण का विरोध।

534 सामाजिक समस्या

5340. संचालक और संचालित के बीच बढ़ती दूरी ही समाज की सबसे प्रमुख समस्या है।

5341. मानव स्वभाव क्यों बदल रहा है? इन बातों पर हम अलग से विचार मंथन करेंगे, किन्तु यह बात निर्विवाद है कि मानव स्वभाव उद्दंडता, आक्रोश और हिंसा की दिशा में बदल रहा है। पर्यावरणीय ताप वृद्धि का दुष्परिणाम आने में जितना समय लगेगा, उसकी अपेक्षा बहुत कम समय में ही मानव स्वभाव ताप वृद्धि के दुष्परिणामों का खतरा मंडरा रहा है, किन्तु आश्चर्य यह है कि इस समस्या पर गंभीर

विचार मंथन के लिए कोई सम्मेलन नहीं हो रहा।

5342. अस्तित्वहीन समस्याओं को समाज में जीवित रखना, कुछ लोगों के संगठित प्रयत्नों का ही परिणाम है। इसीलिए अनेक पेशेवर लोग प्रचार माध्यमों का सहारा लेकर अस्तित्वहीन समस्याओं को लेकर ही प्रमुख समस्या सिद्ध करने में सफल हो जाते हैं।

5343. समाज की समस्याएं समाज ही ठीक करता है। उसमें हस्तक्षेप करना किसी सरकार का कार्य नहीं।

5344. समाज के समक्ष समस्याएं पाँच प्रकार की होती हैं - (1) वास्तविक, (2) कृत्रिम, (3) प्राकृतिक, (4) भूमण्डलीय, (5) अस्तित्वहीन। समाज प्राथमिकताओं के क्रम में, उपरोक्त क्रम से समाधान चाहता है, तो राजनीति ठीक विपरीत क्रम से समाधान करती है।

5345. मेरे विचार में आत्महत्या असामाजिक है, पाप है, किन्तु अपराध नहीं। क्योंकि आत्महत्या किसी अन्य के मौलिक अधिकारों का न उल्लंघन है, न ही आक्रमण।

535 सामाजिक विघटन

5350. स्वतंत्रता के तत्काल बाद हमारे नेताओं ने हमारी सामाजिक स्वतंत्रता को अल्पकाल के लिए अपने पास अमानत रख लिया और गांधी जी के मरते ही इन नेताओं ने समाज को हिन्दू, मुसलमान, आदिवासी, गैर आदिवासी, औरत-मर्द गरीब-अमीर के वर्गों में बांटना शुरू कर दिया। वे इन मतभेदों को टकराव तक ले जाते रहे। पचहत्तर वर्ष बीत गये और राजनीति इस टकराव को सामाजिक न्याय का नाम देकर आगे बढ़ा रही है, जबकि इन सारे प्रयत्न का एकमात्र परिणाम है सामाजिक विघटन। पारिवारिक

और सामाजिक विभाजन रोकने का पहला पाठ है कि वर्ग विद्वेष को वर्ग समन्वय की दिशा दी जाये।

5351. किसी भी वर्ग विशेष के सब लोग न अच्छे होते हैं न सब बुरे। सभी वर्गों में सब प्रकार के लोग होते हैं। सभी वर्गों में कुछ लोग मजबूत और चालाक होते हैं तथा कुछ कमजोर।

5352. विकास के नाम पर समाज में अलग-अलग समूह बनाये गये हैं और ये समूह कालान्तर में वर्ग का रूप लेकर समाज में समस्याएं भी पैदा करते हैं और विघटन भी।

5353. जातीय भेदभाव, साम्प्रदायिकता, छुआछूत, ऊंच-नीच, वर्ण व्यवस्था का विकृत होना आदि समस्याएं अनेक सामाजिक समस्याओं में प्रमुख हैं।

5354. समाज एक परिवार है और गांव को परिवार के रूप में ही होना चाहिए। परिवार में वर्ग भेद खड़ा करना लाभ कम और हानि अधिक करेगा, वर्ग विद्वेष भी बढ़ायेगा जो परिवार के टूटने का आधार बनेगा।

5355. भारत देश के रूप में निरंतर आगे बढ़ रहा है और समाज के रूप में पीछे जा रहा है। हमें समृद्ध भारत के साथ-साथ सुखी समाज के लिए प्रयत्न करना चाहिए था जो हम नहीं कर सके। क्योंकि पहली बात तो हमारे लोग राष्ट्र और समाज का अंतर ही नहीं समझ सके तथा राष्ट्र को ही समाज समझ लिए और दूसरी भूल यह भी कर दी कि उन्होंने राष्ट्र और राज्य का भी अंतर समाप्त करके राज्य को ही सब कुछ बना दिया। भारत में जो भी समस्याएं बढ़ी हैं, उनमें न तो समाज कोई कारण है, न सामाजिक समस्याओं का कोई योगदान है। सिर्फ राजनेताओं की राजनैतिक महत्वाकांक्षा ने ही समस्याओं

को बढ़ाने का काम किया है।

5356. हमारे प्रतिष्ठित सामाजिक विचारक प्रशासन से सम्मान या पारितोषिक की लालच में अनेक मुद्दों पर अनावश्यक जनमत को भ्रमित करते रहते हैं।

540 समाज सर्वोच्च

5400. समाज सर्वोच्च होता है, धर्म उसका सहायक और राज्य उसका रक्षक। तीनों का अपना-अपना स्वतंत्र अस्तित्व होता है, तीनों एक-दूसरे के पूरक भी होते हैं किन्तु समाज हमेशा धर्म और राज्य से ऊपर रहा है। लोकतंत्र में व्यक्ति सर्वोच्च होता है तथा धर्म, राज्य व समाज पूरक। हमें पहला काम तो यह करना होगा कि समाज सर्वोच्च की अवधारणा को विकसित करना होगा। वर्तमान में राष्ट्र या धर्म सर्वोच्च की घातक अवधारणा बहुत ज्यादा नुकसान कर रही है। यह दोनों ही अवधारणाएं समाज में हिंसा की आवश्यकता महसूस कराती हैं।

5401. समाज सर्वोच्च होता है और पूरे विश्व का एक ही होता है, अलग-अलग नहीं। भारतीय समाज सम्पूर्ण समाज का एक भाग है, प्रकार नहीं।

5402. जो लोग समाज सशक्तिकरण को महत्वपूर्ण न मानकर राष्ट्र सशक्तिकरण अथवा धर्म सशक्तिकरण को ज्यादा महत्व देते हैं, मुझे संदेह है कि वे राजनैतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए हिन्दुत्व की भावना का उपयोग करना चाहते हैं।

5403. भारतीय व्यवस्था में समाज की भूमिका सर्वोच्च होती है तथा प्रत्येक व्यक्ति या समूह के कार्य समाज केन्द्रित होते हैं। यदि कोई

विद्वान होता है, तो वह विद्वत्ता के माध्यम से समाज को सशक्त करता है, उसे ब्राह्मण कहा जाता है। इन ब्राह्मणों का ही अतिवादी स्वरूप धर्मगुरू अथवा संन्यासी के रूप में दिखाई देता है। जो समाज को न्याय और सुरक्षा उपलब्ध कराते हैं, उन्हें राजनेता कहा जाता है। जो लोग खेती, व्यापार, पशुपालन आदि करते हैं, उन्हें वैश्य तथा जो सिर्फ श्रम कर सकते हैं, उन्हें शूद्र कहा जाता है। जब से अंग्रेज भारत में आये, तो उन्होंने अपने स्वभाव के अनुसार समाज को तोड़ा और समाज सशक्तिकरण में लगे चारों वर्णों का व्यवसायीकरण कर दिया, जो स्वतंत्रता के बाद भी न सिर्फ जारी है, बल्कि बहुत तेजी से फल-फूल रहा है।

5404. पूरी दुनिया में समाज की मान्यता भ्रमपूर्ण बना दी गई है। समाज सर्वोच्च होता है और धर्म, राष्ट्र, संविधान, यहां तक कि भगवान भी समाज से ऊपर नहीं हो सकते। किन्तु यह गलत धारणा प्रचारित की गई है कि समाज से ऊपर भगवान या धर्म, राष्ट्र आदि होते हैं। कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत आधार पर किसी को भी ऊपर मान सकता है, लेकिन व्यवस्था के आधार पर समाज ही सबसे ऊपर है।

5405. समाज राज्य से बड़ा है, सरकार से बड़ा है, धर्म से बड़ा है, कानून से बड़ा है और वास्तव में समाज सबसे बड़ा है। हमारे जन प्रतिनिधि हमारे मैनेजर मात्र हैं मालिक नहीं। समाज यदि एक बार मजबूत हुआ, तो पूरी राजनीति ही कमजोर पड़ जायेगी।

5406. समाज व्यवस्था के ठीक-ठीक संचालन में राज्य की भी अनिवार्य भूमिका है और राज्य राजनैतिक व्यवस्था से ही संचालित होता है। वैदिक काल की समाज व्यवस्था में समाज सर्वशक्तिमान था तथा

राज्य, व्यक्ति, धर्म गौण। समाज व्यवस्था को धर्म व्यवस्था और राज्य व्यवस्था ने कमजोर करके सारी समस्याएं पैदा की हैं। इसका एक ही समाधान है कि राज्य व्यवस्था और धर्म व्यवस्था के ऊपर समाज व्यवस्था को वरीयता प्राप्त हो। यह समस्या विश्वव्यापी है और उसके दुष्परिणाम भी विश्व स्तरीय हैं।

5407. केवल भारत ही प्राचीन समय से समाज व्यवस्था को सर्वोच्च स्थान पर रखता रहा है। अर्थात् धर्म, राज्य और व्यक्ति समाज के नीचे माने गये हैं। यहां तक कि मुसलमान तो व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार को भी मौलिक अधिकार नहीं मानता और उनके धर्म अनुसार तो धर्म के विस्तार में प्राण देने वाला सीधा स्वर्ग जाता है।

5408. राज्य न परिवार को मानता है, न समाज को, क्योंकि समाज तो वह स्वयं ही है। व्यक्ति को उसने कुछ अधिकार छोड़ ही रखे हैं। बीच में न परिवार है, न समाज। हम लोगों ने परिवार से समाज तक की विभिन्न इकाईयों में प्रयोग भी किये तथा प्रमाणित किया कि वर्तमान में समाज में व्याप्त अधिकांश समस्याओं का कारण राज्य और समाज के बीच बढ़ता असंतुलन ही है।

541 वर्तमान सामाजिक स्थिति

5410. भारत की अनेक सामाजिक समस्याओं का कारण भी कहीं-न-कहीं श्रम की मांग में कमी के साथ जुड़ा हुआ है। यदि श्रम नीति पूरी तरह इस प्रकार बदल दी जाये कि श्रम की मांग बढ़े, श्रम मूल्य बढ़े, और श्रम सम्मान बढ़े, तो अनेक सामाजिक समस्याओं के समाधान में भी सहायता हो सकती है।

5411. सारी दुनिया में समाज व्यवस्था की जगह पूंजीवाद का विस्तार हो

रहा है। प्राचीन समय में विचारकों और समाजसेवियों को सर्वोच्च सम्मान प्राप्त था, राजनेताओं से भी ऊपर। किन्तु वर्तमान समय में विचारकों और समाजसेवियों का अभाव हो गया है। यहां तक कि धर्मगुरु, समाजसेवी, राजनेता सभी किसी-न-किसी रुप में धन बटोरने में लग गये हैं। समाजसेवा के नाम पर एनजीओ के बोर्ड लगाकर धन इकट्ठठा किया जा रहा है।

5412. समाज में बुरे लोगों की संख्या एक-दो प्रतिशत से अधिक नहीं है। उनकी पहचान भी कठिन नहीं है, किन्तु उनके मायाजाल से बचना बहुत कठिन है। ये लोग समाज को हमेशा बांटकर रखते हैं। ये मायावी लोग प्रचार माध्यमों का सहारा लेकर समाज को जाति, धर्म, लिंग भेद में बांटकर टकराव पैदा करते रहते हैं।

5413. भारत में भौतिक उन्नति तो तीव्र गति से हुई, शिक्षा भी बढ़ी है। किन्तु सुरक्षा, भ्रष्टाचार, आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, विदेशी कर्ज, धार्मिक, जातीय टकराव आदि पर कोई रोक नहीं लगी, बल्कि सच्चाई यह है कि प्रत्येक मामलों में हम लगातार पिछड़ते चले गये। समाज में ज्ञान भी घटा है और नैतिकता भी घटती जा रही है।

5414. भारत राष्ट्र के रूप में उन्नति कर रहा है। भौतिक विकास तीव्र गति से हो रहा है, किन्तु समाज निरंतर पीछे जा रहा है। सभी राजनैतिक दल भौतिक विकास को लक्ष्य बनाकर उसके आनुपातिक आंकड़े प्रति सप्ताह प्रसारित करते रहते हैं, किन्तु पांच प्रकार के अपराध और छः प्रकार की समस्याओं में वृद्धि के आनुपातिक आंकड़ें वर्ष भर में कभी भी प्रकाशित नहीं होते।

5415. जब आप भौतिक विकास को ही विकास कहेंगे, समाज को गरीब

और अमीर वर्गों में बांटकर समस्याओं का समाधान करेंगे तथा योग्यता का मापदण्ड धन मान कर चलेंगे, तो संस्कृति को अर्थ प्रधान होने से नहीं रोक सकते हैं। इसीलिए आज हमारी संस्कृति में भी विकार उत्पन्न हो रहे हैं।

5416. 'व्यक्ति सर्वशक्तिमान' पश्चिम के लोकतंत्र की सोच है, जिसने समाज को इतना कमजोर कर दिया कि उच्छृंखलता पर नियंत्रण कठिन हो गया। समाज सर्वशक्तिमान भारत की सोच रही है, जिसका दुरूपयोग करके साम्यवादियों ने सत्ता सर्वोच्च बना ली।

5417. धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, आर्थिक असमानता और उत्पादक-उपभोक्ता के नाम पर समाज को तोड़ने के प्रयत्न जारी हैं तथा लिंग और उम्र के नाम पर परिवार में असंतोष और विघटन के बीज बोये जा रहे हैं। धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रियता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति, उत्पादक, उपभोक्ता आदि के नाम पर समाज को तोड़ने का प्रयत्न करने वाले अवश्य ही गली-गली में मिल जायेंगे।

5418. आज समाज में एक गलत परम्परा चल पड़ी है कि यदि किसी का सम्मान कर दिया जाये, तो वह अपने सम्मान को व्यक्तिगत लाभ में बदलने का प्रयास शुरू कर देता है।

5419. स्वतंत्रता के बाद विधायिका ने समाज के समक्ष यह अवधारणा प्रस्तुत की कि समाज न्यायपालिका की समीक्षा न्यायिक सीमाओं से बाहर जाकर नहीं कर सकता, न्यायिक प्रक्रिया की समीक्षा करनी भी होगी, तो वह विधायिका ही कर सकती है और वह भी संविधान संशोधन द्वारा ही। वास्तविकता यह है कि यदि एक बार लोक स्वराज्य आ जाय और संविधान स्वतंत्र हो जाये, तो लोकतंत्र की तीनों इकाईयों को पता चल जायेगा कि हमाम में सब

नंगे हैं। कपड़े वाला तो बाहर बैठा है, जिसने हमाम का पानी बाहर निकाल कर हमें यथार्थ बता दिया है।

5420. अब तक समाज को तोड़कर आपसी में गुटों में बांटना, राजनेताओं का साध्य था तथा असत्य परिभाषाएं बना-बना कर उनका प्रचार साधन। समाज व्यवस्था को तोड़ने वाले तो धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, गरीब-अमीर, उत्पादक-उपभोक्ता जैसे छः आधारों पर समाज को तोड़ने में पूर्ण सफल हैं, किन्तु परिवार व्यवस्था को तोड़ने वाली योजना अभी प्रारंभिक चरण में ही है। इसके दो भाग हैं - (1) महिला-पुरुष को अलग-अलग करना (2) युवा-वृद्ध को अलग-अलग करना। वर्तमान समय में राजनेता दोनों दिशाओं से परिवारों को तोड़ने में सक्रिय हैं।

5421. नेहरू, अंबेडकर को राजनीतिशास्त्र का भी ज्ञान था और धर्मशास्त्र का भी, किन्तु समाजशास्त्र का ज्ञान नहीं के बराबर था। यही कारण था कि उन्होंने भारत की राजनैतिक व्यवस्था के लिए भारतीय स्वतंत्र समाज व्यवस्था का मार्ग न पकड़कर, विदेशी समाज व्यवस्था की नकल की। नकल को भी वे स्वतंत्रतापूर्वक असल नहीं बना सके, बल्कि उन्होंने पश्चिम के लोकतंत्र, इस्लाम के धर्मतंत्र और साम्यवाद की तानाशाही का घालमेल करके समाजवाद के नाम पर व्यवस्था चलाने की कोशिश की।

5422. वर्षों की स्वतंत्रता के बाद भी समाज का इतना गहरा नैतिक पतन हुआ, उसके कारण विनोबा और उनके सर्वोदय का राजनीति पर अंकुश का गांधीवादी मार्ग छोड़कर समाजसेवा की तरफ झुक जाना ही रहा। गांधी के मरने के बाद राजनेताओं ने विनोबा को आगे बढ़ाया। विनोबा जैसे संत को भी यह बात स्पष्ट थी कि अब

गांधी मार्ग का पतन हो जाएगा और वही हुआ।

5423. यदि समाज में अच्छे मार्गदर्शकों की कमी होगी, तो नकली मार्गदर्शक अपना जाल फैलायेंगे ही। यह स्वाभाविक प्रक्रिया है, जिसे समाज विचार-मंथन के द्वारा रोक सकता है। वर्तमान समय में विचार-मंथन की प्रक्रिया बंद हो जाने के कारण यह सारी अव्यवस्था हो रही है।

5424. जब समाज में दुष्ट प्रवृत्तियां नियंत्रण में हों तो समाज सुधार की दिशा में पहल करनी चाहिए। किन्तु जब दुष्ट प्रवृत्तियां समाज में मजबूत हो जाये, तो समाज सुधार का कार्य रोककर दुष्ट प्रवृत्तियों पर नियंत्रण का उपाय करना चाहिए। मेरा विचार है कि यदि सरकार अपना कार्य ठीक से न कर सके, तब अन्तिम स्थिति में समाज वह काम करता है। इसका अर्थ हुआ कि समाज मालिक है और राज्य मैनेजर।

5425. समाज को दबाकर धर्म और राज्य ने पंगु बना दिया है। समाज व्यवस्था को जान-बुझकर तोड़ा जा रहा है। यही कारण है कि मेरी प्राथमिकता समाज सशक्तिकरण है। समाज को अनावश्यक वर्ग संघर्षों में उलझाकर उन्हें मुकदमेंबाजी का मार्ग दिखाने वाले मेरी नजर में आदर्श नहीं।

5426. शासन के कानूनों का उल्लंघन करने वाला पालन करने वाले से अधिक सुखी है।

5427. समाज सशक्तिकरण के साथ-साथ राज्य कमजोरीकरण का काम भी चलते रहना चाहिए।

543 समाधान

5430. समाज में हिंसा, घृणा, द्वेष और षड्यंत्र का सहारा लेना बिल्कुल अन्तिम स्थिति में उपयोगी होता है। जब तक संभव हो, तब तक इनका सहारा लिए बिना ही समाधान खोजना चाहिए। जब तक हम कोई नया प्रकाश स्तंभ न बना लें, तब तक ऐसे दीपक को बुझाकर कुछ दिन अंधेरे में रहने की आदत डालना ही सबसे अच्छा समाधान है।

5431. गांधी जी ने हमें स्वराज्य का नारा दिया था, जिसका अर्थ होता है "प्रत्येक इकाई को अपने इकाईगत निर्णय की स्वतंत्रता"। स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस तथा गांधीवादी आश्रम की सोच भिन्न-भिन्न हो गई। आश्रम की शक्ति कमजोर हुई तथा नेहरू-पटेल के नेतृत्व में कांग्रेस ने स्वराज्य के स्थान पर सुराज्य को अपना लक्ष्य घोषित कर दिया। सुराज्य व्यवस्था के दोष निश्चित थे, जो धीरे-धीरे व्यवस्था की अंग बनते चले गये और धीरे-धीरे हम व्यवस्था से अव्यवस्था की ओर बढ़ते चले गये। अब व्यवस्था पूरी तरह समाप्त हो चुकी है और यदि व्यवस्था नाम की कोई चीज है भी तो वह है, जो समाज विरोधियों की व्यवस्था समाज के लिए चल रही है।

5432. साम्यवादी देश भारत में फैले अपने लोगों को धन देकर यह प्रचारित कराते हैं कि भारत की प्रमुख समस्याएं हैं, गरीबी, आर्थिक असमानता, शिक्षित बेरोजगारी, सामाजिक अन्याय। दूसरी ओर दुनिया के पूंजीवादी देश भारत के अनेक लोगों को धन देकर बाल-श्रम, बाल-विवाह, अशिक्षा, कुपोषण, जल-संकट, पर्यावरण प्रदूषण, बढ़ती आबादी, नशा आदि को प्रमुख समस्याएं

बताकर इनके समाधान पर सर्वाधिक आर्थिक प्रशासनिक शक्ति लगाने की वकालत करते हैं। परिणाम स्वरूप विदेशी धन के प्रवाह में भारत की वास्तविक समस्याएं नेपथ्य में चली जाती हैं। आज तक भारत में समस्याएं और उनके समाधान का कोई स्वदेशी चिन्तन आगे नहीं बढ़ पाया। वह स्वदेशी शीतलपेय, स्वदेशी भाषा, स्वदेशी खानपान और स्वदेशी वेश-भूषा तक आकर ही सिमट गई। कभी स्वदेशी संविधान, स्वदेशी राज्य व्यवस्था या समस्याओं की पहचान और समाधान की स्वदेशी तकनीक पर विचार मंथन नहीं हुआ।

5433. एक ऐसी समिति बने, जो कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका तथा नागरिक समिति के लोग बनायें और वह समिति ऐसा प्रारुप बनाये जो संविधान संशोधन प्रक्रिया के लिए उपयुक्त हो। इस समिति द्वारा ऐसे सुझाव दिये जायें कि संविधान संशोधन में तंत्र के साथ-साथ लोक की भी प्रमुख भूमिका हो।

5434. मैं मानता हूं कि हमारे सुझाव पूरी तरह आदर्शवादी नहीं हैं, लेकिन मैं यह भी समझता हूं कि अधिक आदर्शवादी सुझाव सिर्फ किताबों तक ही न रह जायें। इसलिए मैंने आर्थिक समस्याओं के आर्थिक समाधान का प्रस्ताव दिया है तथा सामाजिक समस्याओं के समाधान का सारा दायित्व समाज पर छोड़ दिया है। मेरे विचार से यदि राज्य को शोषण मुक्ति की दिशा में सक्रिय करने की भूमिका दी गई, तो राज्य स्वयं ही शोषण मुक्ति के नाम पर शोषण करने लगेगा, अथवा समानता के नाम पर हमारी स्वतंत्रता भी खतरे में पड़ जाएगी। यही कारण है कि मैं राज्य से किसी प्रकार की मांग करने की अपेक्षा, पहले समाज व्यवस्था में उसकी भूमिका सीमित

करने का प्रयास कर रहा हूं। सैद्धांतिक दृष्टि से क्या उचित है, इसकी अपेक्षा वर्तमान परिस्थितियों में क्या कुछ संभव है, इस तरह का तालमेल बैठाने का मेरा प्रयास है।

5435. अपराधियों से समाज की सुरक्षा राज्य ही कर सकता है, समाज नहीं। इसलिए राज्य रहित व्यवस्था यूटोपिया और काल्पनिक है, लेकिन राज्य मुक्त व्यवस्था तो हो सकती है और इसी दिशा में हमे आगे बढ़ना चाहिए।

5436. यदि सुरक्षा और न्याय की गारण्टी देने वाले समाज या राज्य ही कमजोर हो जाये दुष्ट प्रवृत्ति वालों से समझौता कर ले या अपना काम छोड़कर समाज की अन्य प्रकार की चिन्ता करना शुरु कर दे, तब आपातकालीन स्थिति आ जाती है। ऐसे समय में समाज का स्वार्थी होना कोई गलत बात नहीं।

5437. समाज को समझाना होगा कि सामाजिक अव्यवस्थाओं के परिणाम स्वरूप राजनैतिक हस्तक्षेप नहीं बढ़ा है, बल्कि इसके उलट सच्चाई यह है कि कानूनी हस्तक्षेप के परिणाम स्वरूप सामाजिक अव्यवस्था बढ़ी है। राजनीति और राजनीतिज्ञ यदि समाज के सामाजिक मामलों के समाधान में कानूनी हस्तक्षेप कम करके यह मामला समाज पर छोड़ दें, तो अनेक समस्याएं कम भी हो सकती हैं और सुलझ भी सकती हैं। समाज की सामाजिक समस्याओं के समाधान में कानूनी हस्तक्षेप बाधक हैं। जब तक शासन और समाज के बीच की दूरी कम नहीं होगी, तब तक परिणाम विपरीत ही होंगे।

5438. गांधी जी ने हमें काम के तीन सूत्र दिये थे - (1) गांवों की अपनी गांव सम्बन्धी निर्णय में अधिकतम स्वतंत्रता, (2) गांव के

निवासियों को ऐसी स्वतंत्रता के सदुपयोग की ट्रेनिंग, (3) समाज में श्रम के महत्व और सम्मान का अधिक विकास। इसे ही गांधी जी ने शासन, मुक्ति शोषण मुक्ति का नाम दिया था। हमने स्वतंत्रता के बाद पहले और तीसरे काम को तो किया ही नहीं और हम सर्वोदय के माध्यम से दूसरा प्रयत्न करने लगे जिसका कोई लाभ नहीं हुआ।

5439. लगातार प्रचार के कारण भारत का आम नागरिक इन अस्तित्वहीन समस्याओं से त्रस्त भी महसूस कर रहा है तथा समाधान में शासन का सहयोग भी कर रहा है। शासन कभी इन समस्याओं को कम और कभी ज्यादा बताता रहता है, जबकि अस्तित्वहीन समस्याएं कम ज्यादा होती ही नहीं। महंगाई, बेरोजगारी, बालश्रम, महिला उत्पीड़न जैसी अनेक अस्तित्वहीन समस्याएं समाज में महत्वपूर्ण सिद्ध कर दी गयी हैं।

5440. हमारी सरकारें समाज को वर्गों में बांटकर वर्ग विद्वेष को वर्ग संघर्ष तक ले जाने का कार्य पूरी ईमानदारी से सफलतापूर्वक कर रही हैं। समस्याओं का ऐसा समाधान खोजा और किया जाता है, जो किसी एक नई समस्या को जन्म दे। उक्त नई समस्या का भी ऐसा ही समाधान होता है, जो एक और नई समस्या को उत्पन्न करे। न कभी समस्याएं कम हों, न उनका समाधान हो। एक तरफ तो आर्थिक असमानता घटने नहीं दी जा रही है, दूसरी ओर आर्थिक असमानता घटाने में निरंतर सक्रियता बनाये रखी जा रही है। समझ में नहीं आता कि क्या पूरे कुएं में ही भांग घुली है कि जो भी उसका पानी पीता है, वही अजीब हरकत करने लगता है। हत्या और मृत्यु का अन्तर तो सामान्य नागरिक भी कर सकता है, किन्तु

कार्यपालिका और विधायिका जैसे प्रजातंत्र के ठेकेदार प्रहरी पता नहीं क्यों ऐसी बातें कर रहे हैं।

544 चरित्र पतन

5441. मैं मानता हूँ कि यदि श्री राम शर्मा सरीखे महापुरुष नहीं होते, तो समाज में और भी अधिक गिरावट आती किन्तु सामाजिक पतन की गति को कम करना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि सामाजिक पतन की गति को शून्य करना या उल्टा करना ही सफलता मानी जायेगी, जो शर्मा जी भी नहीं कर सके। जब भारत स्वतंत्र हुआ, तो सत्ता में आज की अपेक्षा कई गुना अधिक चरित्रवान कुछ लोग थे। फिर भी लगातार आज तक चरित्र गिरता गया और गिरता जा रहा है, तो उसका कारण चरित्र का अभाव नहीं होकर, सत्ता के केन्द्रीकरण की नीतियों में खोजा जाना चाहिए। वर्तमान समय में लोग चरित्रहीन हैं, इसलिए तंत्र नहीं बिगड़ रहा है, बल्कि तंत्र चरित्रहीन है, इसका प्रभाव लोक पर पड़ रहा है।

5442. मेरे विचार से बालक का अन्य माध्यमों से प्राप्त चरित्र स्कूली शिक्षा के द्वारा विकसित होता है। यदि सद्चरित्र की दिशा में बीजारोपण होगा, तो स्कूली शिक्षा उस अंकुरित बीज का विस्तार करेगी। किन्तु यदि बीजारोपण ही दुष्चरित्र के रूप में हुआ, तो स्कूली शिक्षा उस दुष्चरित्र के बीज को सद्चरित्र में नहीं बदल सकेगी। मेरा मानना है, शिक्षा का चरित्र पर कोई अच्छा-बुरा प्रभाव नहीं पड़ता।

5443. समाजशास्त्र के विषयों में अनाड़ी राजनीतिज्ञ जब टांग फंसाते हैं, तब वातावरण बिगड़ने से सिर्फ कानून नहीं रोक सकता। चरित्रहीन लोग जब चरित्रवान दिखने का प्रयत्न करने के क्रम में चरित्र की

व्याख्या करने लगें, तो परिणाम तो भयंकर होना ही है। समाज के नैतिक मूल्य तब तक ठीक नहीं होंगे, जब तक समाज के नैतिक मूल्यों की परिभाषा और संरक्षण में शासन का हस्तक्षेप रहेगा। नैतिक मूल्यों की परिभाषा और संरक्षण समाज का काम है, राज्य का नहीं।

5444. आज भी भारतीय समाज व्यवस्था में औसत चरित्र अन्य सभी धार्मिक, राजनैतिक इकाइयों से कई गुना ज्यादा है। ये निरंतर पतनोन्मुख राजनैतिक, धार्मिक इकाइयां चाहे समाज के विरूद्ध कितना भी प्रचार करें, किन्तु आज भी समाज का स्तर इन सबसे हजार गुना अधिक ऊँचा है।

544 लोकहित

5445. लोकहित के कार्य दीर्घकालिक अच्छे परिणाम देते हैं और तात्कालिक रूप से अप्रिय बना देते हैं। दूसरी ओर लोकप्रिय कार्य तात्कालिक रूप से अच्छे परिणाम देते हैं, भले ही उनका दीर्घकाल में बुरा ही प्रभाव क्यों न हो। आज तक एक भी चुनाव शासन प्रणाली के गुण-दोषों के आधार पर नहीं लड़े गये। या तो गांधी, नेहरू के नाम पर लड़े गये अथवा प्याज, टमाटर के नाम पर। 2024 के चुनाव भी नरेन्द्र मोदी के नाम पर ही सम्पन्न हो रहे हैं।

5446. जब भी सत्ता संघर्ष का आधार वैचारिक न होकर भावनात्मक होता है, तो उसका प्रभाव भी दीर्घकालिक न होकर क्षणिक ही होता है। वर्तमान समय में ऐसा ही हो रहा है।

545 जातिवाद जाति-प्रथा

5450. जातीय मामलों में समानता का व्यवहार करना सवर्णों का कर्तव्य तो है, किन्तु अवर्णों का अधिकार नहीं।

5451. मेरा व्यक्तिगत रूप से मानना है कि "साम्प्रदायिकता और जातीय भेदभाव" सामाजिक शान्ति के दो बड़े शत्रु हैं। हमें चाहिए कि हम तत्काल पुराने इतिहास को यहीं रोककर ऐसी संहिता लागू कर दें, जो भविष्य में पूरी तरह समानता की गारंटी दे। स्वतंत्रता के बाद जातिवाद का सामाजिक स्वरूप घटता गया और राजनैतिक स्वरूप मजबूत होता गया।

5452. हर अपराधी चाहता है कि सामाजिक अथवा राजनैतिक व्यवस्था में ध्रुवीकरण का आधार चरित्र या प्रवृत्ति कभी न हो। यदि चरित्र या प्रवृत्ति के आधार पर ध्रुवीकरण होगा, तो अपराधी तत्वों के छिपने के मार्ग बन्द हो जायेंगे।

5453. जाति प्रथा की उत्पति न समाज व्यवस्था से है, न धर्म व्यवस्था से। हमारी प्राचीन समाज व्यवस्था के मूल तत्व किसी ग्रंथ पर आधारित न होकर, पारम्पराओं से बनते रहे हैं।

5454. जाति व्यवस्था जन्म आधारित हो जाने से योग्यता पिछड़ती गयी। इसका प्रभाव शूद्रों पर भी हुआ ही किन्तु मुख्य अत्याचार अवर्णों के साथ हुआ, क्योंकि वे श्रमजीवी के साथ-साथ अछूत भी बना दिये गये थे जबकि शूद्र अछूत नहीं थे। इस जन्म आधारित व्यवस्था को तोड़कर कर्म आधारित करना ही एकमात्र समाधान था। आज जातीयता तो घट रही है, किन्तु जातिवाद भी बढ़ रहा है और जातीय कटुता भी। हमारे राजनेताओं ने इसका बहुत लाभ उठाया और आज भी उठा रहे हैं।

5455. लम्बे समय से जाति-प्रथा एक संगठन के रूप में चलती रही। जन्म के आधार पर जातियां संगठित हुईं जो धीरे-धीरे रूढ़ हो गयीं। जन्म

अनुसार जाति के दुष्प्रभाव से समाज में पारंपरिक वर्ग बन गये। इन जातीय परंपराओं ने सामाजिक न्याय को बहुत नुकसान पहुंचाया।

5456. जाति व्यवस्था मेरे विचार में कुछ भिन्न है। गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर वर्ण बनते थे, जातियां नहीं। प्रत्येक वर्ण के अंतर्गत कर्म भिन्नता के आधार पर जातियां बनती थीं। जन्म से कोई व्यक्ति तब तक शूद्र होता था, जब तक गुण और कर्म के आधार पर उसे द्विज की पहचान नहीं दी जाती थी। द्विज का अर्थ कभी ब्राह्मण नहीं होता था, बल्कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, जिन्हें अपने-अपने तरह के यज्ञोपवीत मिल जाते थे, वे सभी द्विज होते थे। ये यज्ञोपवीत भी प्राचीन समय में योग्यता के आधार पर मिलते थे, जो धीरे-धीरे जन्म के आधार पर रूढ़ होती चली गयी। योग्यता के आधार पर बनने वाली अर्थ-व्यवस्था का रूढ़ हो जाना गलती थी, जिसका लाभ सवर्णों ने उठाना शुरू किया और यह लाभ आज भी सवर्ण उठा रहे हैं। धीरे-धीरे सवर्णों ने षड्यंत्र पूर्वक इस वर्ण और जाति व्यवस्था को आरक्षण के रूप में बदल दिया। यह अलग बात है कि वर्तमान बुद्धिजीवियों ने अपने को सवर्ण न कहकर बुद्धिजीवी कहना शुरू कर दिया और दो-चार प्रतिशत तथाकथित अवर्णों के साथ समझौता कर लिया।

546 महिला आरक्षण

5460. महिला आरक्षण की मांग पूरी तरह गलत और स्वार्थपूर्ण है। महिला आरक्षण राजनैतिक शक्ति को और कम परिवारों तक केन्द्रित कर देगा। स्वतंत्रता के बाद संसद में पांच सौ परिवारों का प्रतिनिधित्व था, जो अब घटकर चार सौ हो गया है तथा महिला आरक्षण के

बाद और घट कर तीन सौ रह जाएगा। क्योंकि पुरुष राजनेताओं की महिलाओं का आरक्षित सीटों पर जीतना आसान हो जाएगा। यही हाल सरकारी नौकरियों तथा अन्य विषयों में भी होगा।

5461. एक पुरुष और एक महिला को मिलाकर परिवार बनता है। महिला आरक्षण अन्य महिलाओं के लिए भी प्रसन्नतासूचक नहीं। किसी अन्य महिला की अपेक्षा अपने परिवार के पुरुष को नौकरी या पद प्राप्त होने पर अधिक प्रसन्नता होती है।

5462. आरक्षण समाप्त करने की वर्तमान आवाज षड्यंत्र है। श्रम मूल्य वृद्धि, महिलाओं को सम्पत्ति में समान अधिकार, असहायों का भरण-पोषण का दायित्व शासन को देकर आरक्षण समाप्ति तथा समान नागरिक संहिता एक साथ लागू होनी चाहिए। हजारों वर्ष पूर्व सवर्णों द्वारा लागू किये गये जातीय आरक्षण का दुष्परिणाम है कि आज समाज में अनेक जातियां पिछड़ गयी हैं। वैश्य और क्षत्रियों का आरक्षण तो बहुत सीमा तक समाप्त है, किन्तु ब्राह्मणों का समाज पर जातीय एकाधिकार अभी समाप्त नहीं हुआ है। वर्तमान आरक्षण और उक्त सामाजिक आरक्षण को एकसाथ समाप्त करना चाहिए। तात्कालिक रूप से समाधान हेतु आरक्षण का लाभ ले चुके व्यक्ति और उसके परिवार को सदा के लिए आरक्षण से बाहर कर देना चाहिए। किन्तु वर्तमान में श्रम शोषक अवर्ण ऐसे किसी प्रयास का भरपूर विरोध करेंगे।

546 पर्दा-प्रथा

5463. प्राचीन समय में पर्दा-प्रथा एक सामाजिक व्यवस्था थी, कोई बुराई नहीं। वर्तमान बदली हुई स्थिति में पर्दा-प्रथा अप्रासंगिक हो गयी

है। यह प्रथा समाप्त हो जाये तो अच्छा होगा, किन्तु यह परिवारों का आंतरिक मामला है।

5464. परिवार की महिलाओं की पोशाक कैसी हो, यह परिवार तय कर सकता है, कानून नहीं। हमारा खानपान, वेश-भूषा, रहन-सहन तब तक हमारा आंतरिक मामला है, जब तक वह अन्यों के लिए हानिकारक न हो। इस विषय में सरकार को कानून नहीं बनाना चाहिए।

5465. पर्दा-प्रथा महिला और पुरुष के बीच तीव्र आकर्षण के बीच एक कुचालक का काम करती है। इस तरह पर्दा-प्रथा कोई कुव्यवस्था नहीं है। पर्दा-प्रथा मानना या न मानना परिवार का आंतरिक मामला है, सामाजिक नहीं।

547 सती-प्रथा

5470. बहुत पुराने समय में देशकाल और परिस्थिति के अनुसार देवदासी-प्रथा, सती-प्रथा, बहुविवाह, कन्या-भ्रूण हत्या आदि प्रथाएं शुरू हुई, जो अब अप्रासंगिक हो चुकी हैं। इस प्रकार का कोई भी कानून अब व्यवस्था पर बोझ है। कन्या-भ्रूण हत्या की जगह भ्रूण हत्या निषेध कानून बन सकता है।

5471. अंग्रेज सरकार भारत की सामाजिक व्यवस्था में हस्तक्षेप के अवसर खोज रही थी और उसे सती-प्रथा के नाम पर ऐसा सुअवसर प्राप्त हुआ कि उसने सती-प्रथा उन्मूलन कानून बनाकर उसे लागू कर दिया। इस सफलता से प्रोत्साहित होकर डा. राममोहन राय ने ही बहुविवाह का भी विरोध करना शुरु किया, जो बाद में भारतीय कानूनों में शामिल हुआ।

5472. समाज में प्रचलित गलत प्रथाएं अथवा परम्पराएं धीरे-धीरे समाज द्वारा स्वयं ही लुप्त कर दी जाती हैं। राज्य को इस सम्बन्ध में कभी कोई कानून नहीं बनाना चाहिए। इसके समाधान के लिए रुढ़िवाद की जगह यथार्थवाद को प्रोत्साहित करना चाहिए। यथार्थवाद और विज्ञान के बीच तालमेल होने से इस समस्या का समाधान संभव है।

548 दहेज

5480. मैं स्पष्ट जानता हूं कि दहेज के खिलाफ बनाये गये कानूनी या सामाजिक विरोधों से दहेज-प्रथा नहीं रूकी है। उल्टा दहेज का हल्ला करके लड़की वालों का मनोबल तोड़ना सामाजिक हानि है।

5481. मैंने महसूस किया कि दहेज कोई बुराई न होकर एक सामाजिक व्यवस्था रही है। लड़की का पिता अपनी क्षमता अनुसार लड़की का हिस्सा समझकर उस नये परिवार को जो कुछ देता था, वह दहेज था। वह दहेज लड़के का माना जाता था। लड़के का पिता विवाह के समय लड़के का हिस्सा समझकर जो गहने देता था, वह लड़की के अधिकार में होता था। यह लड़के-लड़की की अलग-अलग व्यक्तिगत सम्पत्ति माने जाते थे, पारिवारिक नहीं।

5482. दहेज कोई सामाजिक समस्या या अन्याय अथवा अत्याचार नहीं, बल्कि एक सामाजिक व्यवस्था है, जो आपसी सहमति से चलती है। हमारे नासमझ नेताओं ने दहेज-प्रथा को नासमझी में बदनाम कर दिया। दहेज अपराध भी नहीं है, अनैतिक भी नहीं है। हम लोगों को यह समझना चाहिए कि दहेज़ विरोधी कानून गलत है।

5483. सौदेबाजी करके दहेज का लेन-देन करना न तो अच्छी बात है, न ही आदर्श। किन्तु यह बात न ही कोई बुराई है, न ही अपराध। इसे एक व्यवहारिक दृष्टिकोण कह सकते हैं, जो न सामाजिक कार्य है, न ही आपराधिक। ऐसा कार्य असामाजिक कहा जा सकता है, जिसके लिए न प्रशंसा उचित है, न ही आलोचना।

5484. दहेज-विरोधी कानून बनाने का वास्तविक उद्देश्य परिवार व्यवस्था कमजोर करके परिवार में वर्ग विद्वेष फैलाना था। दहेज-विरोधी कानून के दुरूपयोग की पोल खुलने में तो कई दशक लग गये, किन्तु बलात्कार संबंधी अभी बना कानून तो दो-चार वर्षों में ही कहर ढाने लग जायेगा।

549 छुआछूत

5490. छुआछूत मानना एक सामाजिक बुराई है, किन्तु सरकार इस विषय में कानून नहीं बना सकती। मैं किसी व्यक्ति को नहीं छूना चाहता और दूरी बनाकर रखना चाहता हूं, तो आप बाध्य नहीं कर सकते हैं।

550 छल-कपट

5500. धूर्त हमेशा छल-कपट का सहारा लेते रहे हैं, अर्थात् जो भी वेश-भूषा या विचारधारा समाज में स्थापित होगी, धूर्त तत्काल उसकी नकल करेंगे। कोई पहचान समाप्त होना बड़ा खतरा नहीं। बड़ा खतरा यह है कि स्थापित पहचान में नकली धूर्त प्रवेश करके लाभ उठा ले और कोई कानून या सामाजिक व्यवस्था उसे रोकने में सफल न हो पाये। इसीलिए वर्तमान समय में पहचान का संकट पैदा हो गया है।

5501. साम्यवादी और पूंजीवादी विदेशी संस्कृतियां भारत की परिवार व्यवस्था पर लगातार आक्रमण कर रही हैं। महिलाओं को वर्ग के रूप में स्थापित करना उनके लिए बहुत सुविधाजनक है और इस कार्य के लिए सामाजिक व्यवस्था के स्थान पर कानूनी व्यवस्था की स्थापना उनके लिए बहुत आसान मार्ग है। कई सौ वर्षों की विदेशी गुलामी और तथाकथित स्वतंत्रता के बाद की साम्यवादी गुलामी के बाद भी भारत की समाज व्यवस्था आज तक समाप्त नहीं हुई, यह आश्चर्यजनक ही है।

5502. यदि हम भारत स्थित समाज का आकलन करें, तो यहां की कुल आबादी में एक-दो प्रतिशत ही समाज विरोधी तत्व मिलते हैं। शेष समाज में कुछ लोग सामाजिक प्रकृति के होते हैं, तो अधिकांश असामाजिक प्रकृति के। किन्तु होते हैं ये दोनों ही समाज के अंग। विश्व के अन्य देशों में परिस्थिति अनुसार यह प्रतिशत बदलता रहता है।

5503. समाज के एक समूह को मोहित करके धन कमा लेना अथवा अपने शिष्य बना लेना, न विद्वता की पहचान है, न सामाजिक ज्ञान की।

5504. यदि कोई राजनैतिक व्यक्ति समाज सुधार के कोई प्रयत्न करे, तो समझने की जरूरत है कि इनमें कहीं-न-कहीं लम्बे समय तक समाज को गुलाम बनाने की दबी हुई इच्छाएं मौजूद हैं। समाज और राज्य के बीच की दूरी कम-से-कम हो यह गुलामी से मुक्ति का सार्थक प्रयत्न है। लेकिन धूर्त राजनेता समाज सुधार के नाम पर ही अपना जाल फैलाने में सफल हो जाते हैं।

551 सामाजिक विकृतियां

5510. विचारणीय है कि जातिवाद, शोषण, धार्मिक कट्टरता, पुरुष प्रधानता आदि विकृतियां समाज में अंग्रेजों के पूर्व आयी या बाद में, अंग्रेजों ने समाज व्यवस्था के प्रभाव में हस्तक्षेप करना शुरू किया। मेरे विचार से सामाजिक विकृतियां अंग्रेजों के पहले ही आ गयी थी। इन विकृतियों का अंग्रेजों ने लाभ उठाया और समाज व्यवस्था को कमजोर करना शुरू कर दिया।

5511. बाल मजदूरी का समाधान आर्थिक विषमता दूर करने में है, बाल मजदूरी पर कानूनी रोक लगाने में नहीं। हम पश्चिम की अंध नकल करके बाल मजदूरी को अपराध मानने लगे।

5512. समाज की अपेक्षा राजनीति में भ्रष्टाचार भी बहुत अधिक है और अपराधीकरण भी। इसके बाद भी राजनैतिक व्यवस्था का ऐसा संवैधानिक तानाबाना बुना गया कि व्यक्ति और समाज के अधिकारों और कर्त्तव्यों की अधिकतम सीमा भी राज्य ही तय करेगा। परिवार न राज्य के अधिकारों की अधिकतम सीमाएं तय कर सकता है न ही अपने या पारिवारिक अधिकारों की। व्यक्ति, परिवार और समाज राज्य पर निर्भर हो गया।

5513. पूरी दुनिया में यदि कोई कुरीति प्रचलित है, तो आवश्यक नहीं कि हम भी आंख बंद करके उसे अंगीकार कर लें। पश्चिम के देशों में परिवार व्यवस्था को सामाजिक व्यवस्था का अनिवार्य अंग न मानकर उसे काम चलाऊ व्यवस्था का भाग माना जाता है। हम भारत के लोग भी अंग्रेजों की आँख बंद करके नकल करते रहे और अब तक कर रहे हैं।

552 वर्ग विद्वेष

5520. एक सीधा-सा सिद्धांत है कि सभी वर्गों में अच्छे और बुरे लोगों का प्रतिशत लगभग एक समान होता है। अच्छाई और बुराई व्यक्ति का व्यक्तिगत स्वभाव है, यह वर्गगत होता ही नहीं।

553 शोषण

5530. अपराध की अनिवार्य शर्त होती है बल-प्रयोग अथवा जालसाजी, धोखाधड़ी। शोषण में न बल-प्रयोग होता है, न दुराव छिपाव। शोषण, शोषक द्वारा शोषित की सहमति से उसकी मजबूरी का लाभ उठाकर किया जाता है। शोषण अनैतिक होता है, अपराध नहीं। शोषण सामाजिक समस्या है, कानूनी नहीं। शोषण न कभी कानून से रोका गया है, न रोकना संभव है। शोषण को जीवित रखकर शोषण के नाम पर राजनीतिक रोटी सेंकने के कारण ही शोषण जीवित है, अन्यथा यदि शासन शोषण रोकने हेतु प्रयास बंद कर दे और समाज को यह काम सौंप दे, तो शोषण रोकना आसान हो जायेगा।

5531. जाति शोषण का आधार नहीं होकर, शक्ति शोषण का आधार है। किसी भी वर्ग को कोई विशेष अधिकार मिलता है, तो वह अधिकार उस वर्ग के कुछ आपराधिक प्रवृत्ति के लोगों की आपराधिक शक्ति में वृद्धि करता है। पावर जहाँ भी किसी के पास इकट्ठा होगा, तो अन्याय का आधार बनेगा। अधिकार किसी के पास इकट्ठे मत होने दें। सबके अधिकार खुद के पास रहें। विशेष आवश्यकता होने पर सब मिलकर किसी को आवश्यक अधिकार दें, किन्तु उक्त व्यवस्था पर नियंत्रण सबका हो। किसी वर्ग या जाति विशेष को

कोई भी विशेष अधिकार न दें। यह विशेष अधिकार अत्याचार का अवसर पैदा करता है। किसी भी मामले पर किसी वर्ग विशेष के लोगों के बैठकर सोचने की वर्तमान परिपाटी बिल्कुल त्याग कर, सब मिल-बैठकर समस्याओं का समाधान करें।

5532. शोषण किसी की मजबूरी से लाभ उठाने के प्रयत्न का नाम है, जो असामाजिक तो हो सकता है, किन्तु समाज विरोधी कार्य नहीं अथवा जो अनैतिक तो हो सकता है, किन्तु अपराध नहीं। अनैतिक भी तभी हो सकता है, जब समाज द्वारा बनाये गये ऐसे किसी नियम का उल्लंघन हुआ हो, अन्यथा अनैतिक भी नहीं हो सकता।

5533. शोषण स्वयं में एक घातक शब्द है। यौन शोषण शब्द उसका सहायक है। यौन शोषण शब्द अर्थहीन भी है, या तो अपराध होगा या अनैतिक होगा। यौन शोषण शब्द का प्रयोग बंद कर देना चाहिए।

5534. सिर्फ महिलाओं का ही शोषण नहीं होता। समाज में हर कमजोर का हर मजबूत के द्वारा शोषण होता है, चाहे महिला हो या पुरुष। किन्तु शोषण रोकना सरकार का काम नहीं है, समाज का काम है। हर कमजोर की सहायता भी कोई मजबूत ही करता है। समय-समय पर महिलाओं की सहायता के लिए पुरुष आगे आते रहे हैं। धूर्त लोग शोषण की बात समाज में वर्ग विद्वेष पैदा करने के लिए ही उठाते रहते हैं।

5535. स्वतंत्रता के तत्काल बाद ही विभिन्न प्रकार के शोषण रोकने की पहल की गयी, जिसका परिणाम हुआ ग्यारह समस्याओं में वृद्धि। बलात्कार भले ही बढ़ता रहे, किन्तु यौन शोषण सरकार रोके, यह मांग पूरी तरह अव्यावहारिक है।

5536. धूर्त लोग शोषण की बात समाज में वर्ग विद्वेष पैदा करने के लिए ही उठाते रहते हैं। गिलास आधा भरा है कि आधा खाली, इस विवेचना में विवेचना करने वाले की नीयत ही विवेचना के निष्कर्ष को प्रभावित करती है।

5537. यदि कोई व्यक्ति किसी पदारूढ़ व्यक्ति के पास अपने किसी कार्य के लिए जाता है और वह व्यक्ति उस कार्य के लिए पैसे से समझौता करता है अथवा अपनी शारीरिक भूख से समझौता करता है, इसमें किसी प्रकार का अंतर नहीं है, न ही इसमें कहीं से बलात्कार आता है और न ही यौन शोषण आता है। सिर्फ और सिर्फ एक चीज आती है और वह है, उसके द्वारा किया गया पद का दुरूपयोग। किसी समझौते के आधार पर लाभ उठाने के बाद उस बात को बताना या प्रसारित करना उस महिला का भी अनैतिक कार्य माना जायेगा। उस समय और भी ज्यादा अनैतिक होगा, जब वर्षों बाद इस घटना को प्रसारित किया जायें।

5538. किसी मजबूत द्वारा किसी कमजोर की मजबूरी का लाभ उठाना शोषण माना जाता है। शोषण में किसी प्रकार का बल प्रयोग नहीं हो सकता। शोषण किसी की इच्छा और सहमति के बिना नहीं हो सकता। शोषण किसी कमजोर द्वारा मजबूत का भी नहीं हो सकता। आवश्यक है कि शोषित कमजोर हो, मजबूर हो और शोषण से सहमत हो। शोषण कभी भी अपराध नहीं होता, न ही समाज विरोधी कार्य होता है। शोषण किसी के मौलिक अधिकारों का अतिक्रमण नहीं करता, किन्तु शोषण अनैतिक और असामाजिक कार्य हो सकता है।

5539. वर्तमान समय में मुख्य शोषण छः प्रकार के माने जाते हैं - 1. अमीरों द्वारा गरीबों का। 2. बुद्धिजीवियों द्वारा श्रम का। 3. परिवार व्यवस्था में पुरुषों द्वारा महिलाओं का। 4. राजनैतिक शक्ति प्राप्त तंत्र द्वारा लोक का। 5. सवर्णों द्वारा अवर्णों का। 6. धूर्त व्यक्तियों द्वारा शरीफ लोगों का।

5540. वैसे तो शोषण शब्द का दुरूपयोग सभी राजनेता करते हैं, किन्तु साम्यवादी और समाजवादी शोषण शब्द का दुरूपयोग करने में सबसे आगे रहते हैं। ये लोग आर्थिक सामाजिक गैर-बराबरी को तो शोषण मानकर बहुत हल्ला करते हैं, किन्तु राजनैतिक गैर-बराबरी को निरंतर बढ़ाते चले जाते हैं। जबकि, राजनैतिक असमानता शोषण का सबसे बड़ा हथियार है। राज्य जितना ही इस प्रकार के शोषण को रोकने में हस्तक्षेप करता है, उतना ही अधिक शोषण बढ़ता जाता है, भले ही उसका स्वरुप क्यों न बदल जाये।

5541. किसी प्रकार का शोषण रोकने के लिए राज्य किसी वर्ग को विशेष अधिकार देता है और उसका यह दुष्परिणाम होता है कि उस वर्ग के धूर्त लोग दूसरे वर्ग के शरीफ लोगों का शोषण शुरु कर देते हैं। इस तरह शोषण रोकने के नाम पर शोषण करने वाले धूर्त लोगों का एक नया वर्ग खड़ा हो जाता है, जिसका समाधान राज्य नहीं कर पाता, क्योंकि राज्य ही ऐसे वर्ग के धूर्तों को संरक्षण देता है।

5542. राज्य समाज का सबसे बड़ा शोषक होता है। राज्य शोषण रोकने के नाम पर अपने पास शक्ति इकट्ठी करते जाता है और उस शक्ति का दुरुपयोग शोषण के रुप में प्रकट हो जाता है। जनहित के नाम पर देश में ऐसे हजारों कानून बने हैं, जो राज्याश्रित शोषण के हथियार का काम करते हैं। शोषण रोकने का सबसे अच्छा तरीका

है कमजोर की मजबूरी और मजबूतों की शक्ति संग्रह को संतुलित करने का प्रयास।

5543. स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा में पिछड़ने वाले की आप सहायता तो कर सकते हैं, किन्तु आगे निकलने वाले के निकलने में बाधा पहुंचाना, आपराधिक कृत्य होगा। शोषण रोकने के नाम पर आरक्षण के माध्यम से स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा में बाधा पहुंचाना बिल्कुल गलत है।

5544. शोषण का अंतिम आधार समाज व्यवस्था है। प्राचीन समय में समाज को यह अधिकार था कि वह किसी प्रकार के अनैतिक कार्य के विरुद्ध अपने बहिष्कार रुपी अधिकार का प्रयोग कर सके। मेरा यह सुझाव है कि शोषण मुक्ति के लिए सबसे पहले शोषण और अपराध को अलग-अलग करें। शोषण मुक्ति से राज्य को अलग करें तथा शोषण मुक्ति में परिवार, गांव तथा समाज को अधिक सक्रिय करने का प्रयास करें। अब तो हमारी सरकारें समाज के बहिष्कार रूपी हथियार के प्रयोग को भी रोक रही हैं।

5545. मैंने शोषण को बुरा कहा है, अनैतिक कहा है, असामाजिक कार्य कहा है, किन्तु अपराध नहीं। क्योंकि किसी भी प्रकार का शोषण किसी व्यक्ति के सामाजिक अधिकारों का उल्लंघन हो सकता है, संवैधानिक अधिकारों का भी उल्लंघन हो सकता है, किन्तु मौलिक अधिकारों का नहीं।

5546. देश का प्रत्येक व्यक्ति तीन प्रकार के शोषण से प्रभावित है :- (1) सामाजिक शोषण, (2) आर्थिक शोषण, (3) राजनैतिक शोषण। स्वतंत्रता के पूर्व सामाजिक शोषण अधिक था, आर्थिक, राजनैतिक कम। स्वतंत्रता के बाद राजनैतिक शोषण अधिक हो गया, आर्थिक-सामाजिक कम।

5547. लूट किसी की इच्छा के विरुद्ध होती है तथा बल प्रयोग भी आवश्यक है, जबकि शोषण सहमति से होता है, बिना किसी प्रकार के बल प्रयोग के होता है। शोषण कभी अपराध नहीं होता, सिर्फ अनैतिक होता है। जबकि, लूट अपराध होता है।

5548. शोषण या अत्याचार अधिकतर व्यक्ति की प्रवृत्ति है, उसका जाति-धर्म अथवा गरीबी-अमीरी से कोई सम्बन्ध नहीं है।

5549. मेरे विचार में शोषण को रोकना समाज का कर्तव्य है, सरकार का नहीं। यदि समाज अपना कर्तव्य न करे, तब भी सरकार उस कार्य को नहीं कर सकती, क्योंकि व्यवस्था के अनुसार सरकार जब अपना दायित्व पूरा करने में असफल रहती है, तब समाज सरकार के काम में या तो सहयोग करता है या स्वयं उस कार्य को करने लग जाता है। समाज ऊपर है और सरकार समाज से नीचे।

5550. पूंजीवादी अर्थव्यवस्था बाह्य शोषण पर टिकी हुई है, तो साम्यवादी व्यवस्था आंतरिक शोषण पर। क्योंकि साम्यवाद मनुष्य को एक प्राकृतिक प्राणी न मानकर राष्ट्रीय सम्पत्ति मानता है। इसी तरह पश्चिम के पूंजीवादी देश बुद्धि को अपने विकास का महत्वपूर्ण हथियार मानते हैं, तो वामपंथी देश श्रम को।

555 वर्ण व्यवस्था

5551. प्रत्येक बालक की बचपन में ही योग्यता का आकलन करके उसे एक दिशा में दीक्षित करने को वर्ण-व्यवस्था कहा जाता है। यह आकलन चार प्रकार का होता है :- (1) मार्गदर्शक, (2) रक्षक, (3) पालक, (4) सेवक। प्राचीन समय में इन चारों का नामकरण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के नाम से था।

5552. वर्ण आश्रम व्यवस्था दुनिया की अव्यवस्था दूर करने का सबसे आसान मार्ग है। वर्ण व्यवस्था दुनिया की सबसे अच्छी व्यवस्था है। वर्तमान काल में वर्ण व्यवस्था विकृत हुई है और विभाजन योग्यता की जगह जन्म के आधार पर होने लगा। एक विकृति ने पूरी वर्ण व्यवस्था को ही बदनाम कर दिया, जबकि वर्ण व्यवस्था आज भी आवश्यक और उचित है। योग्यता और गुणों के आधार पर ही चारों वर्णों के अलग-अलग दायित्व, कर्तव्य, अधिकार तथा सुविधाओं का निर्धारण होता था। प्रत्येक वर्ण की अपनी-अपनी सीमाएं भी निश्चित थी।

5553. वर्ण व्यवस्था के विकृत होने में सर्वाधिक भूल मार्गदर्शक अर्थात ब्राह्मण वर्ग की रही। इन्होंने धर्म की जगह संस्कृति को अधिक महत्व दिया, ज्ञान की जगह विद्वत्ता को अधिक महत्व दिया तथा विचार मंथन की जगह धर्म ग्रंथों और परम्पराओं को ही अंतिम आधार मान लिया।

5554. भारत ने वर्ण व्यवस्था की जगह पश्चिम का लोकतंत्र अपनाकर भूल की है। भारत को लोक स्वराज्य तथा वर्ण व्यवस्था के मिश्रित स्वरूप की दिशा में पहल करनी चाहिए।

5555. धूर्तों ने शरीफ बुद्धिजीवियों के योग्यतानुसार वर्ण और जाति के सार्थक प्रयत्न को पीछे ढकेल कर, जन्मना वर्ण और जाति के अनुसार योग्यता का ऐसा खाका तैयार किया कि इस नये आरक्षण के शब्दजाल से उन धूर्त बुद्धिजीवियों की अपनी और उनके आगे आने वाली कई-कई पीढ़ियां सुरक्षित हो गयीं। इस व्यवस्था ने समाज में वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष पैदा किया।

5556. वर्ण व्यवस्था का अर्थ यह था कि प्रत्येक बालक को बचपन में ही

उसकी प्रवृत्ति का आकलन करके, उसे उस दिशा में बचपन से ही प्रशिक्षित किया जाता था। यदि गुण और स्वभाव के आधार पर प्रीटेस्ट लेकर उन्हें तदनुसार अलग-अलग शिक्षा दी जाये, तो मेरे विचार में बहुत अच्छा होगा।

5557. मानव प्रकृति में गुण, कर्म और स्वभाव को मिलाकर जो भिन्न-भिन्न परिणाम होते हैं, उन्हें चार वर्णों में बांटकर भिन्न-भिन्न वर्ग बना दिये गये। यह वर्ग निर्माण जन्म अनुसार न होकर, योग्यतानुसार था। गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर यदि आकलन किया जाये, तो चार अलग-अलग क्षमताओं के लोग मिलते हैं। इन्हें हम विचारक, व्यवस्थापक, प्रबंधक और श्रमिक के रूप में विभाजित कर सकते हैं। इस विभाजन को ही प्राचीन समय में वर्ण व्यवस्था कहा जाता था।

5558. भारत की वर्ण व्यवस्था दुनिया की एकमात्र ऐसी सामाजिक व्यवस्था है, जो आदर्श है। बहुत लम्बे समय के बाद सामाजिक व्यवस्थाएं रूढ़ होकर विकृत हो जाती हैं और उसके दुष्परिणाम उस पूरी व्यवस्था को ही सामाजिक रूप से अमान्य कर देते हैं। यदि यह व्यवस्था विकृत होकर योग्यता की जगह जन्म का आधार नहीं ग्रहण करती, तो अब तक सारी दुनिया इसे स्वीकार कर चुकी होती। वर्ण व्यवस्था से विकृति दूर करने की अपेक्षा वर्ण व्यवस्था का समाप्त होना, अव्यवस्था का प्रमुख कारण है।

5559. वर्ण और जाति अलग-अलग व्यवस्था है। जातियां सिर्फ कर्म के आधार पर बनती हैं, तो वर्ण गुण, कर्म, स्वभाव को मिलाकर। प्रत्येक वर्ण में कर्म के आधार पर अलग-अलग जातियां बनती हैं।

5560. स्वामी दयानंद, महात्मा गांधी सरीखे महापुरुष वर्ण व्यवस्था की

विकृतियों को दूर करना चाहते थे। भीमराव अम्बेडकर, नेहरू आदि ने वर्ण व्यवस्था की विकृतियों पर अपनी राजनैतिक रोटी सेंकने का प्रयास किया। उसका दुष्परिणाम भारत भोग रहा है। स्वामी दयानंद ने खतरे उठाकर भी इस जन्मना जाति वर्ण को कर्मणा करने के प्रयत्न किये। गांधी ने इन प्रयत्नों को आगे बढ़ाया। जाति व्यवस्था टूटने लगी। स्वामी दयानन्द या महात्मा गांधी इस अन्याय को दूर करना चाहते थे। गांधी के प्रयत्नों को अम्बेडकर जी ने नकार कर जन्म अनुसार जाति व्यवस्था को मजबूत कर दिया। पुनः आज स्थिति है कि छुआछूत घट रही है, जाति-प्रथा दम तोड़ रही है, लेकिन जातिवाद बढ़ रहा है।

5561. वर्ण व्यवस्था में योग्यता और क्षमतानुसार कार्य का विभाजन होता है और सामाजिक व्यवस्था के अनुसार अलग-अलग वर्ण को अलग-अलग उपलब्धियां भी प्राप्त होती हैं। वर्ण व्यवस्था में विचारक को सर्वोच्च सम्मान, प्रबंधक को अधिकतम शक्ति, व्यवस्थापक को अधिकतम आर्थिक सुविधा और श्रमिक को अधिकतम सुख की गारंटी एवं सीमा निर्धारित होती है।

5562. वर्ण व्यवस्था एक सामाजिक व्यवस्था है। उसका राजनीति से किसी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं। सामाजिक व्यवस्था में राजनीति का प्रवेश जितना ही बढ़ता है, उतनी ही अव्यवस्था बढ़ती है। जैसा भारत में हो रहा है।

5563. प्राचीन समय में वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मण विचार प्रधान होता था, क्षत्रिय शक्ति प्रधान, वैश्य कुशलता तथा श्रमिक सेवा प्रधान जाना जाता था। सबके गुण और स्वभाव के आधार पर वर्ण निर्धारित होते थे। जन्म के अनुसार सबको शून्य अर्थात शुद्र माना जाता था

और धीरे-धीरे जन्म पूर्व के संस्कार पारिवारिक वातावरण और सामाजिक परिवेश के आधार पर वह अपनी योग्यता सिद्ध करता था, तब उसे ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य का विशेष वर्ण दिया जाता था।

5564. कुछ नये नामों पर विचार करके फिर से वर्ण व्यवस्था को सक्रिय और प्रभावी बनाने का प्रयास होना चाहिए। ब्राह्मण की जगह विचारक, विद्वान या मार्गदर्शक नाम दिया जा सकता है। क्षत्रिय की जगह रक्षक, व्यवस्थापक सरीखा नाम दिया जा सकता है। वैश्य की जगह व्यापारी या पालक नाम दे सकते हैं। शुद्र की जगह श्रमिक या सेवक उपयुक्त नामकरण है किन्तु वर्ण व्यवस्था नये ढंग से विकसित होनी चाहिए और वह जन्म के आधार पर न होकर, गुण और स्वभाव के आधार पर किसी परीक्षा के बाद घोषित होनी चाहिए।

5565. मैं तो इस मत का हूं कि शादी-विवाह तथा अन्य सामाजिक संबंधों में भी यदि जाति और वर्ण को प्राथमिकता दी जाये तो व्यवस्था और अच्छी होगी। यदि वकील लड़के का विवाह वकील लड़की से हो और श्रमिक का विवाह श्रमिक कन्या से हो, तो इसमें लाभ ही होगा, हानि नहीं।

5566. आदर्श वर्ण व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति की उपलब्धियां सीमित होती हैं। मार्गदर्शक की सीमा सर्वोच्च सम्मान तक, रक्षक की सर्वोच्च शक्ति तक, पालक की सर्वोच्च सुविधा एवं धन संपत्ति तक तथा सेवक की सर्वोच्च सुख तक होती है। (2) आदर्श वर्ण व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति की प्रवृत्तियां भी अलग-अलग होती हैं। मार्गदर्शक अर्थात ब्राह्मण मर सकता है, मार नहीं सकता, हृदय परिवर्तन कर सकता है, डरा नहीं सकता, सत्य छुपा सकता है,

किन्तु झूठ नहीं बोल सकता। (3) आदर्श वर्ण व्यवस्था में रक्षक अर्थात क्षत्रिय कूटनीति का प्रयोग कर सकता है, बल प्रयोग कर सकता है, किन्तु उपदेश अथवा प्रवचन नहीं दे सकता। मरने और मारने के लिए तैयार होता है। (4) आदर्श वर्ण व्यवस्था में पालक अर्थात वैश्य जनहित में सच छुपा भी सकता है और झूठ भी बोल सकता है। मरने से भी बचेगा और मारने से भी बचेगा। लालच दे सकता है, शत्रु को धोखा भी दे सकता है, किन्तु प्रवचन उपदेश अथवा डर या भय नहीं दिखा सकता। शूद्र अर्थात श्रमिक या सेवक जिस वर्ण के साथ जुड़कर काम करेगा, उसे वर्ण के अनुसार ही उसकी सहयोगी योग्यताएं बन सकती हैं।

5567. क्या ब्राह्मण शब्द पर उन मूर्खों का भी एकाधिकार है, जो शूद्र से भी कम योग्यता रखते हैं। जब गुण कर्म स्वभाव के अनुसार वर्ण बनते थे, तब उन्हें जन्म के आधार पर जोड़ने की धूर्तता सवर्णों के द्वारा की गई या अवर्णों के। जन्म से जाति आरक्षित करने का पाप किसने किया अवर्णों ने या सवर्णों ने। मेरे विचार से तो यह गलती सवर्णों के द्वारा की गई है और उसमें से भी ब्राह्मण के द्वारा अधिक।

5568. जब वर्ण व्यवस्था कर्म पर आधारित होती है, तब 'महाजनों येन गतः स पन्थाः' का आंख मूंदकर अनुकरण करना चाहिए और जब जन्म पर आधारित हो, तब बिल्कुल स्वीकार नहीं करना चाहिए। वर्तमान समय में भारत में वर्ण व्यवस्था जन्म अनुसार चल रही है, इसलिए हमारा सुझाव है कि बिना विचारे आंख बंद करके किसी महापुरुष की बात नहीं माननी चाहिए।

5569. जाति-प्रथा, वर्ण व्यवस्था न कोई षड्यंत्र था, न ही कुप्रथा। गुण-कर्म-स्वभाव का आकलन करके ही चार वर्ण बनते थे। इन्हीं वर्णों

में से कर्म के आधार पर जाति थी। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति अपने दैनिक क्रियाकलापों में चारो वर्णों का काम करता है। किन्तु इन कामों को करते हुए भी उसमें किसी वर्ण की कुछ विशेष क्षमता और योग्यता होती है। इस विशेष क्षमता और योग्यता का आकलन करके ही उसे उस वर्ण का माना जाता है। पुरानी व्यवस्था में प्रत्येक परिवार में भिन्न-भिन्न वर्ण के लोग होते रहे हैं, जो आज तक है। इस तरह वर्ण और जाति का सीधा सम्बन्ध कर्म से था, जन्म से नहीं।

5570. अब जन्म के अनुसार वर्ण और जातियां बनने लगीं और वर्ण तथा जाति के अनुसार कर्म निर्धारित होने लगे। यह एक विकृति थी, किन्तु इतना होते हुए भी विशेष स्थिति में वर्ण और जाति बदलती थी। किन्तु इस व्यवस्था में भयानक विकृति तो तब आयी, जब अवर्णों को भी इसी तरह जन्मना कर दिया। शूद्र कभी न अछूत थे, न अवर्ण। वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत व्यवस्था थी कि अनुलोम विवाह मान्य है और प्रतिलोम वर्जित। जो लोग इस व्यवस्था को तोड़कर प्रतिलोम विवाह करते थे, उनकी संतानों को दण्ड स्वरूप अछूत मान लिया जाता था।

5571. दूसरी बात यह भी थी कि महिलाओं का अपना न कोई वर्ण होता था, न जाति। महिलाएं उस वर्ण और जाति की होती थी, जिस परिवार में वह जाती थी। उच्च वर्ण की लड़की का निम्न वर्ण में जाना वर्जित था। फिर भी व्यवस्था तोड़कर कोई लड़की निम्न वर्ण में गयी, तो उसकी संतान वर्णशंकर होती थी, जिसे दण्ड स्वरुप अवर्ण और उनमें से ही कुछ अति निषिद्ध को अछूत मानते थे। समाज बहिष्कार से आगे दण्ड देना वर्जित था। इस व्यवस्था में एक भारी कमी थी कि एक बार गलती करने वाले की संतान को

कभी मुक्त होने का प्रावधान नहीं था। यह जान-बूझकर हुआ या षड्यंत्र था, यह अलग शोध का विषय है। किन्तु ऐसा हुआ और इस विकृति के भयंकर दुष्परिणाम हुए।

558 आश्रम व्यवस्था

5580. भारतीय समाज व्यवस्था में व्यक्ति की सम्भावित उम्र को सौ वर्ष मानकर चार भागों में बांटा जाता है:- व्यक्तिगत, पारिवारिक, स्थानीय, सामाजिक। इन चारों को ही क्रमशः ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास का नाम दिया जाता था। मार्गदर्शकों के लिए उम्र का चौथा चरण आवश्यक था तथा अन्य तीन तक रुक सकते थे। इस पद्धति से पीढ़ियों के बीच टकराव टल जाता था। सामाजिक व्यवस्था में भी सुविधा होती थी।

5581. मैं आज भी आश्रम व्यवस्था का पक्षधर हूं। मैंने स्वयं घोषित रूप से वानप्रस्थ और अघोषित रूप से संन्यास स्वीकार किया है। आश्रम व्यवस्था में वर्तमान समय के अनूकूल सुधार किया जा सकता है। सुधार के रूप में ही हम लोगों ने आदर्श परिवार व्यवस्था में यह सुझाव दिया है कि परिवार का प्रमुख सबसे अधिक उम्र का तथा मुखिया के रूप में किसी को भी चुनने की प्राथमिकता देनी चाहिए।

559 वर्ण जाति व्यवस्था

5590. भारतीय समाज व्यवस्था ने सम्मान, शक्ति और सुविधा के एकत्रीकरण पर कठोर प्रतिबंध लगा रखे थे। इसी व्यवस्था को वर्ण व्यवस्था कहते थे। वर्तमान समय में हर व्यक्ति इन तीनों का अपने पास एकत्रीकरण का प्रयास कर रहा है, यही टकराव का मुख्य आधार है।

5591. मैं अच्छी तरह समझता हूं कि समाज व्यवस्था के सुचारू संचालन के लिए वर्ण व्यवस्था से अच्छी कोई अन्य व्यवस्था नहीं हो सकती। किन्तु वर्तमान समय में वर्ण व्यवस्था को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र के नाम से संशोधित या प्रचलित करना न संभव है, न उचित।

5592. गांधी वर्ण व्यवस्था को जन्म की अपेक्षा कर्म के आधार पर सुधारना चाहते थे तथा वर्ग विद्वेष की जगह वर्ग समन्वय चाहते थे। इसके साथ ही गांधी ग्राम को संवैधानिक अधिकार और मान्यता देकर जाति, धर्म को अमान्य करने के पक्षधर थे।

5593. वर्तमान समय में दिमाग को शिथिल करके दिल को हावी करने का विश्वव्यापी अभियान चल रहा है, जिसका भारत पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ रहा है। यह प्रभाव समाज को गुलाम बना रहा है, किन्तु गुलामी ही उसके दिल को ठंढक प्रदान कर रहा है।

5594. ऐसी कोई सामाजिक व्यवस्था बनायी जानी चाहिए जो फिर से सम्मान, शक्ति, सुविधा और सेवा को योग्यता और क्षमतानुसार अपनी-अपनी सीमाओं में बिना किसी राजनैतिक कानून के दबाव में बांधने और संचालित करने में सक्षम हो सके। मैं पूरी तरह वर्ण व्यवस्था के पक्ष में हूं। मैं समझता हूं कि ऐसी कोई नई व्यवस्था बनाना बहुत कठिन कार्य है, किन्तु इसकी शुरूआत इस तरह हो सकती है कि वर्तमान समय में बने हुए बौद्धिक, राजनैतिक, व्यावसायिक या श्रमिक समूहों को मान्यता देकर उन्हें अपनी आंतरिक व्यवस्था को मान्यताएं दी जाये। वर्तमान ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को बदलकर मार्गदर्शक, रक्षक, पालक और सेवक के नाम से कर देना चाहिए।

5595. भारतीय संविधान में न चाहते हुए भी मजबूरी में अल्पकाल के लिए जिस जातिवाद से आंशिक समझौता किया था, उसे सत्ता संघर्ष के उद्देश्य पूर्ति के लिए खाद-पानी मानकर निरंतर बढ़ाया जा रहा है। जातिवाद और साम्प्रदायिकता पूरी तरह समाज के लिए घातक है।

560 सेक्स

5600. सेक्स एक प्राकृतिक भूख है और उसे बलपूर्वक नहीं दबाया जा सकता। न प्राचीन समय में ऐसा संभव हो पाया, न ही आज हो पा रहा है, न भविष्य में हो पायेगा। भूख और पूर्ति के बीच दूरी जितनी बढेंगी, उतनी ही अपराध की स्थितियां पैदा होंगी। यदि इच्छाएं सोलह की जगह अब चौदह वर्ष में और विवाह सोलह की जगह इक्कीस की उम्र में होंगे, तो बलात्कार सहित अनेक अपराध बढेंगे। इसलिए सहमति से किया गया सेक्स कभी अपराध नहीं हो सकता। सहमत सेक्स में बाधक कानून बलात्कार सहायक होते हैं।

5601. अनियंत्रित सेक्स बहुत घातक होता है। इस प्रकार के सम्बन्धों को अनुशासित होना ही चाहिए। विवाह प्रणाली ऐसे अनुशासन का सबसे अच्छा समाधान है। विवाह एक सामाजिक अनुशासन है, इसमें कानून का कोई भी हस्तक्षेप गलत है। विवाह के चार उद्देश्य होते हैं :- (1) शारीरिक इच्छा पूर्ति, (2) सन्तानोत्पत्ति, (3) माता-पिता के ऋण से मुक्ति, (4) सहजीवन का अभ्यास।

5602. दो लोग आपसी सहमति से शारीरिक संबंध बनाते हैं, तो इसमें सरकार का हस्तक्षेप क्यों? कामवासना मनुष्य की प्राकृतिक भूख है, इसे विरले लोग ही पूरी तरह रोक पाते हैं। इसे अनुशासन से कुछ

नियंत्रित किया जा सकता है। शासन से बिल्कुल नहीं। सरकार को बलात्कार छोड़कर सेक्स से संबंधित सभी प्रकार के कानूनों से अलग हो जाना चाहिए तथा अनुशासन का कार्य परिवार या समाज व्यवस्था पर छोड़ देना चाहिए। सहमत सेक्स प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है। यदि कोई सेक्स समाज द्वारा अस्वीकृत भी हो, तो उसे सिर्फ अनुशासित ही किया जा सकता है, शासित नहीं।

5603. हमारे अनेक आश्रम या धर्म स्थान सिर्फ महिलाओं के लिए ही सुरक्षित होते थे, जहां या तो विधवाएं गुप्त रूप से अपनी भूख मिटा लेती थीं अथवा वे महिलाएं वहां जाने का प्रयास करती थीं, जिनके पति संतान पैदा करने में अक्षम होते थे, अथवा यदा-कदा ऐसी महिलाएं भी इनका उपयोग कर लेती थीं, जो अपने पति से अतृप्त रहती थीं। ये महिलाएं ऐसे धर्म स्थानों में बेरोक-टोक आती जाती थीं, क्योंकि किसी तरह की रोक-टोक संदेह का वातावरण पैदा कर सकती थी। ऐसे स्थान धार्मिक आवरण भी ओढ़े रहते थे, जिससे यह व्यवस्था व्यभिचार या व्यवसाय का रूप न ले ले।

5604. सवर्णों या धनवानों में यौन शुचिता को आर्थिक प्रगति की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाता है, जबकि गरीबों और अवर्णों में आर्थिक आवश्यकता को यौन शुचिता से अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। यौन शुचिता के आधार पर ही समाज में यह धारणा विकसित हुई कि उच्च वर्ग की महिलाओं को बिना किसी सुरक्षा के अकेले में बाहर नहीं निकलना चाहिए।

5605. सेक्स की इच्छा स्त्री और पुरुष दोनों में समान होती है, कम या अधिक नहीं। स्त्री और पुरुष के बीच आकर्षण इतना अधिक तीव्र

होता है कि उसकी गति प्रकाश या बिजली की गति से भी अधिक मानी जाती है। इस आकर्षण को कभी बलपूर्वक नहीं रोका जा सकता।

5606. स्त्री और पुरुष के बीच शारीरिक संबंध बनाने की स्थिति में प्राकृतिक रूप से पुरुष आक्रामक तथा महिला आकर्षक दिखनी चाहिए।

5607. मेरा प्रारंभ से ही यह मानना रहा है कि सेक्स प्रत्येक व्यक्ति का प्राकृतिक अधिकार है। सहमत सेक्स को अनुशासन से ही रोका जा सकता है, शासन या कानून से नहीं, किन्तु मैं इस कार्य को प्रारंभ से ही अनैतिक कार्य मानता हूं, जिससे प्रत्येक व्यक्ति को बचना चाहिए।

5608. किसी महिला ने सरकार द्वारा घोषित उम्र से कम उम्र के बालक को बहला-फुसला कर या लोभ-लालच देकर शारीरिक संबंध बनाने के लिए सहमत किया। विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या उक्त महिला का यह कृत्य आजीवन कारावास जैसे दण्ड योग्य है? यदि यह दण्ड कानून के अनुसार है, तो क्या ऐसे कानून उचित हैं? क्या ऐसे कानून बनाने और ऐसे कानूनों को लागू कराने वालों को सामाजिक अदालत में दण्डित नहीं होना चाहिए?

5609. कामवासना पूर्ति के मामले में महिला और पुरुष एक-दूसरे के समान रूप से पूरक हैं। यह कहना बिल्कुल गलत है कि महिला या पुरुष में से कोई एक-दूसरे का उपभोग करता हो।

5610. काम इच्छा मानवीय कमजोरी या कोई विकृति नहीं है, बल्कि एक स्वाभाविक भूख है, जिसे बलपूर्वक नहीं रोका जा सकता। काम इच्छा पूर्ति प्रत्येक व्यक्ति की मौलिक स्वतंत्रता है और उसमें

किसी तरह की बाधा पहुंचाना तब तक अपराध है, जब तक उसने किसी अन्य की वैसी ही स्वतंत्रता में बाधा पैदा न की हो। परन्तु सहजीवन की सीमाओं के साथ तालमेल भी आवश्यक है।

5611. मैं पहले से ही मानता हूं कि सेक्स व्यक्ति का मौलिक अधिकार है, जिसमें उसकी सहमति से ही कोई अनुशासन निर्धारित किया जा सकता है। फिर भी सेक्स की असीम स्वतंत्रता नहीं दी जा सकती और समाज का कर्तव्य है कि वह विवाह-पद्धति के माध्यम से सेक्स को व्यवस्थित और अनुशासित करे। सेक्स के मामले में हो रही अधिकांश आपराधिक घटनाएं राज्य की गलतियों का परिणाम मात्र है।

5612. सेक्स सिर्फ इच्छाएं ही नहीं, बल्कि आवश्यकता भी है। एक तरफ तो सामाजिक वातावरण के कारण इच्छाएं बढ़ रही हैं, तो दूसरी ओर आवश्यकता की पूर्ति घट रही है। विवाह की उम्र मनमाने तरीके से बढ़ाई जा रही है, जबकि आवश्यकताओं की उम्र घट रही है। सेक्स की प्राकृतिक भूख रोकी नहीं जा सकेगी तो उसके दुष्परिणाम होंगे ही, चाहे बलात्कार के रूप में हो अथवा हत्या के रूप में।

561 प्रेम विवाह

5613. विवाह सिर्फ और सिर्फ व्यक्ति, परिवार और समाज तक का ही सीमित विषय होता है, उसमें राज्य की भूमिका कहीं होती ही नहीं, जब तक बलात्कार न हो। प्रेम विवाहों को प्रतिष्ठा का प्रश्न मानकर उनका विरोध करना जितना घातक है, उससे अधिक घातक है उनका प्रोत्साहन। क्योंकि ऐसे विवाह परिवार व्यवस्था को गंभीर क्षति पहुंचाते हैं। प्रेम विवाह का प्रोत्साहन बंद होना चाहिए।

5614. मैं तो अब भी पारंपरिक विवाह प्रणाली को प्रेम विवाह प्रणाली की अपेक्षा वरीयता देने का पक्षधर हूं। मेरे विचार से प्रेम विवाह दो सहमत स्त्री-पुरुषों का विशेषाधिकार है। किन्तु वह आदर्श स्थिति नहीं है।

5615. एक तरफ समाज में हिंसा का वातावरण बढ़ रहा है, तो दूसरी तरफ कानून में प्रेम विवाहों को महिमा मंडित किया जा रहा है। बीच में वे अनेक निर्दोष लोग मारे जा रहे हैं, जो किसी शारीरिक मजबूरी में कुछ गलत तो कर रहे हैं, किन्तु कोई अपराध नहीं।

5616. किसी भी व्यक्ति को प्रेम विवाह करने का पूरा-पूरा स्वतंत्र अधिकार है, चाहे वह सगोत्र ही क्यों न हो। परिवार या समाज ऐसे विवाह को अमान्य और बहिष्कृत तो कर सकता है, किन्तु दण्डित नहीं। आज की राजनैतिक व्यवस्था प्रेम विवाहों को प्रोत्साहित करने का जो प्रयास कर रही है, उनसे निःसंदेह परिवार व्यवस्था को गंभीर क्षति पहुंची है। समाज में अनुशासन आवश्यक है। विवाह प्रणाली को परिवार और समाज के साथ अनुशासित होना चाहिए।

5617. एक परिवार अपने बच्चों को प्रेम विवाह नहीं करने देता। उस परिवार को समझाने की जगह बच्चों को उकसाना गलत है। यदि उन बच्चों की हत्या होती है, तो हत्या करने वालों के साथ आप दोषी क्यों नहीं? क्या इसलिए कि आप समाज व्यवस्था, परिवार व्यवस्था को गुलाम बनाने वालों में शामिल हैं?

562 विवाह और कानून

5620. विवाह या तो पारिवारिक व्यवस्था है या सामाजिक, किन्तु इसे भी अनावश्यक रूप से संवैधानिक व्यवस्था मान लिया गया। विवाह

के सम्बन्ध में सरकार को किसी भी स्थिति में कोई कानून नहीं बनाना चाहिए।

5621. एक समय था, जब बहुविवाह का अर्थ एक पुरुष की कई पत्नियों के साथ माना जाता था। अब भविष्य में ऐसा भी समय आने वाला है, जब बहु विवाह का अर्थ एक महिला के साथ कई पुरुषों के विवाह से माना जाने लगेगा। न पहले वाली व्यवस्था विकृति थी और न ही भविष्य की व्यवस्था विकृति मानी जायेगी। विवाह, तलाक आदि व्यवस्थाएं आपसी सहमति से तथा सामाजिक मान्यताओं से चलती है, कानून से नहीं। नासमझ लोगों ने अनावश्यक इन परम्पराओं में कानून को घुसा दिया।

5622. वैसे तो विवाह जैसे मामलों में सरकार को कोई कानून बनाना ही नहीं चाहिए और सारा काम परिवार और समाज पर छोड़ देना चाहिए किन्तु सरकार को कानून बनाना ज्यादा ही जरूरी लगे, तो विवाह की न्यूनतम उम्र 12 वर्ष तय कर देनी चाहिए।

5623. कोई दो लोग आपसी सहमति से प्रतिबंधित रिश्तों में भी सम्बन्ध बनाते हैं, तो कानून को हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है। समाज उसे अनुशासित कर सकता है।

5624. स्त्री-पुरुष के व्यक्तिगत संबंधों तथा विवाह प्रणाली में परिवार और समाज का किसी तरह का हस्तक्षेप समाप्त करके व्यक्ति और राज्य का सीधा हस्तक्षेप बढ़ता गया, तो बलात्कार और हत्याएं बढ़ेगी ही और राज्य की जेलें या फांसी के फंदे ऐसी बढ़ती घटनाओं को नहीं रोक पायेंगे।

5625. किसी भी व्यक्ति को उसकी सहमति तक ही साथ रखा जा सकता है। कोई व्यवस्था उसे एक मिनट के लिए भी बिना सहमति के साथ

रहने के लिए बाध्य नहीं कर सकती। तलाक के कानून बाध्य करते हैं। तलाक संबंधी कानून समाज के लिए समस्या है, समाधान नहीं।

563 विवाह

5630. चार उद्देश्य के संयुक्त लाभ के लिए विवाह व्यवस्था बनाई गई है – (1) इच्छा पूर्ति, (2) संतानोत्पत्ति, (3) सहजीवन की ट्रेनिंग, (4) वृद्ध माता पिता की कर्ज मुक्ति। भिन्न परिवारों के स्त्री-पुरुषों को एक साथ जीने की व्यवस्था ही विवाह पद्धति है। हिन्दुओं में विवाह को जन्म जन्मांतर का सम्बन्ध माना गया है, तो इसाइयों में स्त्री-पुरुष के बीच आपसी समझौता और मुसलमानों में पुरुष द्वारा महिलाओं का उपयोग।

5631. विवाह के समय वर पक्ष के लोग वर की अपेक्षा कम उम्र, कम योग्यता की लड़की खोजते हैं। दूसरी ओर कन्या पक्ष के लोग इसके ठीक विपरीत अधिक योग्य वर यह व्यवस्था है। यह सामाजिक व्यवस्था ही स्पष्ट करती है कि समाज पुरुष प्रधान परिवार व्यवस्था की स्वीकृति देता है। महिलाओं के पक्ष में आवाज उठाने वाले पुरुष या महिलाओं द्वारा अपनी लड़कियों के विवाह में भी ऐसी ही प्रणाली अपनाई जाती है। आज के बाद या तो ऐसे लोगों को इस प्रणाली को उलट देना चाहिए या महिला अधिकारों की आवाज उठानी बन्द कर देनी चाहिए।

5632. विवाह पद्धति एक ऐसी सामाजिक प्रथा है, जिसमें वर-वधु की स्वीकृति, परिवार की सहमति तथा समाज की अनुमति आवश्यक होती है। यदि इन तीनों में से किसी एक का अभाव है, तो वह आदर्श विवाह नहीं माना जा सकता।

5633. प्रत्येक महिला और पुरुष के बीच एक प्राकृतिक आकर्षण होता है। यदि आकर्षण सहमति से हो, तो उसे किसी परिस्थिति में बाधित नहीं किया जा सकता, अनुशासित किया जा सकता है। इस अनुशासन का नाम विवाह है।

5634. प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता असीम होती है। उसकी सहमति के बिना उसकी कोई सीमा नहीं बनाई जा सकती। विवाह ऐसी सीमा बनाने का एक सहमत प्रयास है।

5635. स्त्री-पुरुष के अनियंत्रित सम्बन्ध समाज में अव्यवस्था पैदा करते रहे हैं और भविष्य में भी करते रहेंगे। ये सम्बन्ध सिर्फ शारीरिक सम्बन्ध मात्र तक सीमित नहीं होते। इनका जन्म से मृत्यु तक पारिवारिक और सामाजिक सम्बन्ध भी है।

5636. विवाह में वर-वधु की स्वीकृति, परिवार की सहमति और समाज की अनुमति आवश्यक है। किसी एक की कमी आदर्श विवाह नहीं है। लिव इन रिलेशनशिप या प्रेम विवाह को बल पूर्वक नहीं रोक सकते, किन्तु इन्हें प्रोत्साहित करना घातक है।

5637. किसी भी महिला या पुरुष के लिए काम संतुष्टि भी उतनी ही महत्वपूर्ण है, जितना अनुशासन। हमारी परम्परागत परिवार व्यवस्था में दोनों का संतुलन रखा गया। ज्येष्ठ भाई से दूरी और देवर से निकटता संतुलन का ही प्रयास है। मंदिर, धर्मस्थान तथा आश्रमों को भी पवित्र माना जाता है। ऐसी जगहों पर अनुशासित व्याभिचार की अनदेखी की जाती है। नियोग प्रथा भी मान्य है।

5638. संतान श्रेष्ठता के उद्देश्य से प्राचीन समय में अनुलोम-प्रतिलोम विवाह प्रथा थी। उच्च वर्ण का लड़का एवं निम्न वर्ण की लड़की का विवाह मान्य था, तो उच्च वर्ण की लड़की एवं निम्न वर्ण के

लड़के का विवाह प्रतिबंधित। प्रतिलोम विवाह असामाजिक कार्य माना जाता था, किन्तु अपराध नहीं। समाज ऐसे असामाजिक कार्यों में दण्ड नहीं दे सकता, किन्तु बहिष्कृत कर सकता है। संभवतः उसी आधार पर अछूत की प्रणाली विकसित हुई हो।

564 विवाह पारंपरिक अथवा स्वैच्छिक

5640. नव विवाहित कन्याओं को कुछ दिनों तक ससुराल में इस प्रकार रहना चाहिए कि पारिवारिक सामंजस्य बढ़े। मेरा सुझाव है कि लड़की के माता-पिता को भी लड़की के ससुराल के आंतरिक मामलों में विशेष स्थिति में ही हस्तक्षेप करना चाहिए। लड़की के माता-पिता का हस्तक्षेप बहुत घातक होता है, जो आजकल आमतौर पर हो रहा है।

5641. अंग्रेजों के पूर्व तो विवाह पूरी तरह परिवार और समाज व्यवस्था के विषय थे। राज्य की उसमें कोई भूमिका नहीं होती थी। प्रेम विवाह भी होते थे और ऐसे परिवार या समाज से असहमत विवाहों में भी सामाजिक बहिष्कार से आगे कोई दण्ड संभव नहीं था।

564 वेश्यालय एवं वेश्यावृति

5642. यदि नासमझ कानून निर्माता वेश्यावृत्ति पर भी रोक लगा दे, तो बलात्कारों में वृद्धि उसका स्वाभाविक परिणाम है। बलात्कार वृद्धि के कारणों में युवा शक्ति में सेक्स इच्छाओं का समय पूर्व विकसित होना भी एक कारण है, किन्तु विवाह की उम्र को लगातार बढ़ाते जाना तथा चोरी से पूर्ति के माध्यम अर्थात् वेश्यालयों पर प्रतिबंध भी महत्वपूर्ण कारण है। वेश्यावृत्ति पर अधिक कठोर नियंत्रण बलात्कार वृद्धि में सहायक होते हैं।

5643. मैं वेश्यावृत्ति का समर्थक भी नहीं हूं और उसे रोकने के लिए सरकारी हस्तक्षेप के भी विरुद्ध हूं। जो सरकार बलात्कार नहीं रोक पा रही है, उसे वेश्यावृत्ति रोकने में अपनी शक्ति नहीं गंवानी चाहिए। वेश्यावृत्ति जितनी समस्याओं का कारण है, उससे ज्यादा समस्याओं का समाधान भी है।

5644. वेश्यावृत्ति अनैतिक कार्य है, प्रतिबंधित कार्य नहीं। वेश्यावृत्ति को निरूत्साहित कर सकते हैं, किन्तु रोक नहीं सकते। विवाह की उम्र बढ़ाना, वेश्यावृत्ति को रोकना, महिला-पुरुष के बीच दूरी घटाने का प्रयत्न करना बलात्कार वृद्धि में सहायक होते हैं।

5645. सेक्स दो विपरीत लिंगियों के बीच आपसी सहमति का मुद्दा है। विवाह व्यवस्था इस स्वतंत्रता को नियमित करती है, बाधित नहीं। यह एक प्राकृतिक भूख होती है, जिसे खुद को समझाकर, विवाह द्वारा पूरी करके, महिला-पुरुष के बीच दूरी बढ़ाकर, समाज की आलोचना के डर से या वेश्यावृत्ति द्वारा ही नियंत्रित किया जा सकता है।

565 लिव इन रिलेशनशिप

5650. लिव इन रिलेशनशिप व्यक्ति की स्वतंत्रता तो है, किन्तु उसे सामाजिक मान्यता नहीं दी जा सकती। अन्यथा यह विवाह जैसी बहुउद्देश्यीय व्यवस्था को खत्म करके स्वच्छंदता और अव्यवस्था को बढ़ायेगी।

570 परम्परा

5700. व्यवस्था दो प्रकार की है :- (1) परम्परागत, (2) संशोधित या आधुनिक। परम्परागत व्यवस्था आमतौर पर रुढ़ हो जाया करती

है और उसमें देशकाल परिस्थिति के अनुसार संशोधन बहुत कठिन होता है। दूसरी ओर आधुनिक व्यवस्था धूर्तों तथा राज्य के तालमेल से बिना जन स्वीकृति के ही स्थापित करने का प्रयास होता है, जो अंततः घातक परिणाम देती है। परिवार व्यवस्था दो विचारधाराओं के बीच टकराती रहती है – (1) आधुनिक परिवार, (2) परम्परागत परिवार। मैं मानता हूं कि जो कुछ पुराना है, वह सब आंख मूंदकर मानने योग्य नहीं है। लेकिन साथ ही मैं यह भी मानता हूं कि जो कुछ पुराना है, वह आंख मूंदकर बदलने योग्य भी नहीं है। जब तक हम अपनी परम्परागत परिवार व्यवस्था को परिस्थिति अनुसार संशोधित करके लोकतांत्रिक पद्धति में नहीं बदल लेते, तब तक समस्याएं बनी रहेंगी।

5701. मैं परम्परागत व्यवस्था के पक्ष में नहीं, किन्तु मैं आधुनिक परिवार व्यवस्था को बढ़ावा देने के पक्ष में भी नहीं हूं। मैं तो मानता हूं कि भारत की वर्तमान परिवार व्यवस्था एक संक्रमण काल से गुजर रही है। इसे न परम्परागत के असफल सिद्धांत से चिपके रहना चाहिए और न ही आधुनिकता की चाशनी में लपेट कर उसे विकृत करना चाहिए।

5702. परम्परागत परिवार व्यवस्था में परिवार का मुखिया जन्म से ही बन जाता है, जबकि आधुनिक परिवार व्यवस्था में कोई मुखिया होता ही नहीं। परम्परागत परिवार व्यवस्था में घुटन होती है, तो आधुनिक परिवार व्यवस्था में टूटन। लोकतांत्रिक परिवार व्यवस्था में न घुटन होती है, न टूटन होती है। ऐसी व्यवस्था में शासन या उच्छृंखलता की जगह अनुशासन होता है।

5703. आदर्श परिवार प्रणाली में पारंपारिक परिवार व्यवस्था को कानूनी

हस्तक्षेप से मुक्त करते हुए कम्यून प्रणाली के साथ परिवार प्रणाली का इस तरह सामंजस्य बिठाया गया है कि परिवारों की संरचना को संवैधानिक मान्यता प्राप्त हो जाये। जब परिवार के सभी सदस्यों को मौलिक अधिकार प्राप्त है, तो किसी को भी उसकी सहमति के बिना एक सेकंड भी किसी के साथ रहने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। तलाक के कानून अप्रत्यक्ष रूप से अपराध माने जाने चाहिए।

5704. आदर्श स्थिति में भारत को परिवारों का संघ होना चाहिए था, नागरिकता परिवार की होनी चाहिए थी किन्तु परिवार की न होकर नागरिकता देश की मान ली गयी। परिवार एक स्वतंत्र इकाई माना जाना चाहिए था। परिवार का अपना एक आंतरिक संविधान होना चाहिए था। परिवार से जुड़ने वाले व्यक्ति नागरिक माना जाना चाहिए था, लेकिन वैसा नहीं हुआ।

5705. मैं परिवार को संवैधानिक मान्यता देने का पक्षधर हूं, लेकिन किसी को यह अधिकार नहीं है कि वह बिना स्वीकृति के किसी को अपना सास-ससुर चुन ले। इसका आशय यह है कि परिवार के पारिवारिक मामलो में सरकार कोई कानून नहीं बना सकती। किसी परिवार में रहने के लिए उस परिवार की सहमति या स्वीकृति अनिवार्य होती है।

5706. परिवार आपस में किस प्रकार रहता है, वह परिवार तय करे। संविधान तो सिर्फ इतना ही ध्यान रखेगा कि किसी व्यक्ति और परिवार की इच्छा और सहमति के बिना उसे परिवार में नहीं रखा जा सकता।

5707. यदि कानून को वकीलों के व्यावसायिक हितों से दूर हटकर, सीधा

सरल सपाट बनाया जाता तथा परिवार व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता देकर व्यक्ति को परिवार का तथा परिवार को समाज का हिस्सा मान लिया जाता, तो सम्भवतः अनेक समस्याएं स्वतः कम हो गयी होतीं। परिवार व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता देकर तथा अनावश्यक कानूनों से मुक्त करके अनेक समस्याओं को रोका जा सकता है।

5708. संविधान निर्माताओं के प्रमुखों को परिवार व्यवस्था के प्रति या तो ज्ञान नहीं था या पश्चिम की नकल करने की धुन में उनसे भूल हुई। परिवार की कोई स्पष्ट परिभाषा बनाई ही नहीं गयी। व्यक्तिगत सम्पति के अधिकार समाप्त करके परिवार को पहली इकाई बनाना चाहिए था। अपराध नियंत्रण में भी व्यक्ति की जगह परिवार को पहली जिम्मेदारी देनी चाहिए।

5709. माता-पिता, पति-पत्नी, बच्चे आदि के सम्बन्ध परिवार तक सीमित हों। कानून में इन शब्दों का कोई महत्व नहीं होना चाहिए। विवाह, तलाक, सन्तानोत्पत्ति आदि की व्यवस्था आन्तरिक रहे। कोई अन्य तब तक हस्तक्षेप नहीं कर सकता, जब तक किसी के मूल अधिकारों का उल्लंघन न हो।

571 पारंपरिक या आधुनिक

5710. पारंपरिक और आधुनिक का सर्वाधिक प्रभाव परिवार व्यवस्था पर होता है, यही टकराव आगे बढ़कर ऊपर की इकाइयों में जाता है। भारतीय व्यवस्था त्रिस्तरीय रही है, जिसमें व्यक्ति, परिवार और समाज की समान भूमिका रही है। पश्चिम के देशों में व्यक्ति, सरकार और समाज की त्रिस्तरीय व्यवस्था रही है। इसमें इन तीनों को

समान अधिकार प्राप्त है। इस्लाम में व्यक्ति, परिवार और धर्म की भूमिका रही है, इसमें व्यक्ति की भी भूमिका नगण्य ही होती है और समाज तो होता ही नहीं। साम्यवाद में न व्यक्ति होता है, न परिवार, न धर्म, न समाज। वहां तो सिर्फ सरकार ही अकेली सबकुछ है। परिणाम हुआ कि भारत की पारंपरिक परिवार व्यवस्था धीरे-धीरे कमजोर होकर आधुनिक व्यक्ति केन्द्रित व्यवस्था की ओर जाने लगी।

5711. पारंपरिक पद्धति में व्यक्ति पर परिवार का तथा परिवार पर समाज का अनुशासन था। आधुनिक प्रणाली में चरित्र की जगह धन महत्वपूर्ण हो गया। अब सारा अनुशासन समाप्त होकर व्यक्ति और सरकार के बीच शासन के रूप में तब्दील हो गया।

5712. परिवार व्यवस्था की पारंपरिक प्रणाली को कमजोर करके आधुनिक व्यक्ति केन्द्रित प्रणाली का आधुनिक परिवारों को भौतिक लाभ बहुत हो रहा है। जहां संसद में पहले पांच सौ परिवारों का प्रतिनिधित्व था, वहीं अब धीरे-धीरे तीन-साढ़े तीन सौ परिवारों तक सिमट गया है। महिला आरक्षण के बाद यह संख्या और घट जायेगी।

5713. स्वार्थी तत्व अतिवादी भावनात्मक मुद्दे उछालकर आपकी परंपरावादी या आधुनिक भावनाओं का लगातार लाभ उठाने का प्रयत्न भी करते रहते हैं और सफल भी हो जाते हैं। यह आपकी सतर्कता होगी कि आप ऐसे संगठनों से दूरी बनाकर रखें।

5714. समाज में न तो सभी प्राचीन परंपराएं त्याज्य और नई अनुकरणीय होती हैं, न ही सभी प्राचीन परंपराएं अनुकरणीय और नई विरोध करने योग्य। देश काल परिस्थिति अनुसार परंपराओं में संशोधन,

परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया होती है। आम तौर पर पुरानी पीढ़ी का बहुमत पुरानी परंपराओं के साथ चिपके रहना चाहता है और नई पीढ़ी का बहुमत उन्हें बदलने के लिए उतावला रहता है।

5715. भारतीय दर्शन के अनुसार असीम समान स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति का एकमात्र प्रकृति प्रदत्त अधिकार होता है। यह स्वतंत्रता असीम भी होती है और समान भी। सहजीवन का प्रशिक्षण देना प्रत्येक व्यक्ति का एकमात्र कर्तव्य होता है। प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता की सुरक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्य और दायित्व पूरे करने के लिए परिवार, गांव से लेकर तंत्र तक की व्यवस्था के साथ सहयोग करता है। इस सम्पूर्ण व्यवस्था का सर्वोच्च संचालन समाज रूपी अदृश्य इकाई के पास होता है। विदेशी दर्शन के अनुसार समाज एक काल्पनिक इकाई है और तंत्र ही समाज की अंतिम इकाई है। तंत्र व्यक्ति की स्वतंत्रता की सीमा तय कर सकता है। तंत्र ही व्यक्ति के कर्तव्य और दायित्व को परिभाषित और कार्यान्वित कर सकता है।

5716. भारतीय दर्शन के अनुसार समाज की बुराई समाज ही दूर कर सकता है। समाज इसके लिए परिवार, गांव से लेकर राष्ट्र तक सक्रिय है। समाज की शक्ति असीमित है और तंत्र की शक्ति मात्र वहीं तक है, जहां तक समाज ने उसे दिया है।

572 परिवार में महिलाएं

5720. अब तक भारत की परंपरागत परिवार व्यवस्था को दुनिया में सर्वाधिक सफल माना गया, किन्तु धीरे-धीरे उसमें आयी कुछ विकृतियों के कारण अब उसका स्थान पाश्चात्य परिवार व्यवस्था

लेती जा रही है। महिलाओं की भूमिका परिवार व्यवस्था के सफल संचालन में बहुत महत्वपूर्ण होती है और वर्तमान समय में महिलाओं में परंपरागत परिवार की अपेक्षा आधुनिक परिवार की ओर तेजी से कदम बढ़ रहे हैं। इसलिए इसके कारण, लक्षण, परिणाम और समाधान पर चर्चा आवश्यक है।

5721. परिवार का टूटना उतना घातक नहीं है, जितना कि अलग-अलग रहकर सरकारी अनुमति की प्रतीक्षा करना। इसलिए तलाक के सम्बन्ध में सरकार का कानून अनावश्यक है।

5722. आज परिवार व्यवस्था में महिला-पुरुष के बीच भेदभाव का एकमात्र कारण पुरुष प्रधान व्यवस्था है। सबको व्यवस्था में समान अधिकार होना चाहिए। हजारों वर्ष पूर्व समाज में आरक्षण व्यवस्था शुरू हुई जिसमें ब्राह्मण का बेटा पंडित और वैश्य का बेटा व्यापारी बनेगा। इस आरक्षण व्यवस्था के परिणाम स्वरूप योग्यता पिछड़ती जा रही है।

5723. परिवार की किसी लड़की को यह अधिकार है कि वह अपने किसी प्रेमी को अपना पति चुन ले। परिवार को यह अधिकार है कि बिना बल प्रयोग किये अपनी लड़की को ऐसे प्रेम विवाह से रोकने का प्रयास करे और न मानने पर उस लड़की से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर ले।

573 परंपरागत आधुनिक महिलाएं

5730. आधुनिक परिवार, समाज को वर्गों में बांटकर वर्ग विद्वेष का ऐसा नाटक करते हैं कि तीन चौथाई परिवार इन एक चौथाई को ही अपना मार्गदर्शक मानकर इनके मार्गदर्शन के अनुसार वर्ग विद्वेष

में उलझ जाये। समाज आपस में टकराता रहे और ये एक चौथाई परिवार चुपचाप सारा मजा लूटते रहें।

5731. आधुनिक परिवारों का उद्देश्य न समाज हित है, न वर्ग हित। इनका एकमात्र उद्देश्य है स्व-परिवार हित। इन हजारों महिलाओं का सिर्फ इतना ही उद्देश्य है, जिसे ये नारी हित के आवरण में लपेट कर समाज को दिन-रात परोसती रहती हैं। सच्चाई यह है कि नारी हित का आवरण एक मीठा जहर है, जो समाज को निरंतर खोखला कर रहा है, किन्तु इन सभ्रान्त महिलाओं को इसकी कोई चिन्ता नहीं।

5732. ये किरण बेदी, सलमा अंसारी, मैत्रेयी, पुष्पा आदि स्वयं के लिए चिन्तित हैं या उन तीन चौथाई परिवारों की महिलाओं के लिए, जो आज भी तीस रूपये दैनिक से भी कम पर ही अपना गुजर-बसर करती हैं। निश्चित रूप से इनका महिला सशक्तिकरण का रोना, उन महिलाओं के लिए तो नहीं ही है। संसद में एक तिहाई महिला आरक्षण हो या आधा या पूरा, इन तीन चौथाई परिवारों की रोजी-रोटी पर कोई फर्क नहीं पड़ने वाला।

5733. ये आधुनिक परिवार की महिलाएं पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था के विरूद्ध दिन-रात बोलने का उपक्रम करती रहती हैं। यह पुरुष प्रधान व्यवस्था किसी महिला के लिए बाध्यकारी नहीं। आप स्वतंत्र हैं, अपना पति चुनने के लिए।

5734 परंपरागत परिवारों में आयी विकृतियों के कारण महिलाएं पारंपरिक व्यवस्था की अपेक्षा आधुनिकता की ओर तेजी से बढ़ रही हैं।

5735. परंपरागत परिवारों की महिलाओं में घुटन अधिक है, टूटन कम। आधुनिक महिलाओं में परिवार के प्रति टूटन अधिक है, घुटन कम। दोनों स्थितियां ठीक नहीं। अनुशासन और नियंत्रण अलग-

अलग होते हैं। परंपरागत परिवारों में अनुशासन की जगह नियंत्रण बढ़ा और आधुनिक परिवारों में अनुशासन की जगह उच्छृंखलता।

5736. परंपरागत महिलाएं परिवार के सुचारू संचालन, सन्तानोत्पत्ति तथा बच्चों के नैतिक विकास को अधिक महत्वपूर्ण मानती हैं, तो आधुनिक महिलाएं स्वतंत्रता, सेक्स तथा बच्चों के भौतिक विकास को अधिक महत्तवपूर्ण मानती हैं। परंपरागत महिलाएं सहजीवन को भौतिक विकास की तुलना में अधिक महत्व देती हैं, तो आधुनिक महिलाएं भौतिक विकास को सहजीवन की तुलना में अधिक महत्व देती हैं। परंपरागत महिलाएं कर्तव्य प्रधान होती हैं। वे कभी समान अधिकार की भी मांग नहीं करतीं। वे परिवार में होने वाले अपने शोषण के विरूद्ध चुप रहती हैं। आधुनिक महिलाएं समान अधिकार से भी संतुष्ट नहीं होतीं। उन्हें समान अधिकार भी चाहिए तथा विशेष अधिकार भी। परंपरागत महिलाएं त्याग प्रधान होती हैं, आधुनिक महिलाएं संग्रह प्रधान होती हैं। परंपरागत महिलाएं सेक्स की तुलना में सन्तानोत्पत्ति को अधिक महत्व देती हैं। आधुनिक महिलाओं में सन्तानोत्पत्ति के प्रति अरूचि और सेक्स के प्रति अधिक आकर्षण होता है। परंपरागत महिलाएं सहजीवन को अधिक महत्वपूर्ण मानकर संयुक्त परिवार को अधिक महत्व देती हैं। आधुनिक महिलाएं व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अधिक महत्व देकर परिवारों को छोटे-से-छोटा करने को महत्वपूर्ण मानती हैं। परंपरागत महिलाएं भावना प्रधान अधिक होती हैं, बुद्धि प्रधान कम। आधुनिक महिलाएं बुद्धि प्रधान अधिक होती हैं, भावना प्रधान कम। परंपरागत महिलाएं नैतिकता को भौतिकता की तुलना में अधिक महत्व देती हैं।

आधुनिक महिलाएं भौतिक उन्नति के लिए नैतिकता से जल्दी समझौता करने को तैयार रहती हैं। परंपरागत महिलाएं अन्य पुरुषों से आवश्यकता से अधिक दूरी बना कर रखती हैं। यदि इनके साथ कोई साधारण छेड़छाड़ की आपराधिक घटना हो तो या तो छिपाती हैं या सामाजिक स्तर से निपटाना चाहती हैं। आधुनिक महिलाएं अन्य पुरुषों के साथ कम से कम दूरी बनाने की कोशिश करती हैं तथा मामूली छेड़छाड़ की घटना में आसमान सर पर उठा लेती हैं। परंपरागत महिलाएं परिवार या रिश्तेदारी तक आकर्षक तथा बाहर में अनाकर्षक पोशाक, हावभाव, बोलचाल का प्रयोग करती हैं। आधुनिक महिलाएं परिवार में अनाकर्षक तथा बाहर में आकर्षक पोशाक, हावभाव तथा बोलचाल का व्यवहार करती हैं। परंपरागत परिवार व्यवस्था में सुधार तथा आधुनिक परिवार व्यवस्था पर अंकुश आवश्यक है। परंपरागत या आधुनिक परिवार की जगह लोकतांत्रिक परिवार व्यवस्था एकमात्र समाधान है।

5737. परम्परागत परिवारों की महिलाएं अनुशासन, संतानोत्पत्ति, नैतिक उन्नति और सहजीवन को अधिक महत्व देती हैं, तो आधुनिक महिलाएं स्वतंत्रता, सेक्स, भौतिक उन्नति तथा अधिकारों को अधिक महत्व देती हैं। परम्परागत परिवारों में घुटन है, तो आधुनिक में टूटन। टूटन से घुटन अधिक घातक है।

5738. भारत की मुट्ठी भर आधुनिक महिलाओं ने सम्पूर्ण समाज को उनकी आवाज सुनने को मजबूर कर दिया। सारा देश जानता है कि ये महिलाएं सिर्फ 2% आधुनिक महिलाओं का ही प्रतिनिधित्व करती हैं। शेष 98% परंपरागत महिलाएं इनसे नफरत ही अधिक करती हैं, प्रेम कम। सारा देश जानता है कि इन 2% आधुनिक

महिलाओं ने ही बलात्कार की समस्या को विकराल बनाया, अन्यथा परंपरागत समाज व्यवस्था में तो बलात्कार बहुत कम थे।

5739. आधुनिक महिलाओं ने ही आंदोलन चलाकर एक ओर तो महिला और पुरुष के बीच की परंपरागत दूरी को घटाते जाने की मुहिम चलाई, तो दूसरी ओर विवाह की उम्र बढ़ाकर अथवा वेश्यालय, बारबाला आदि पर रोक लगवाकर आवश्यकता और पूर्ति के बीच का अन्तर भी बढ़वा दिया।

5740. आधुनिक महिलाओं ने सारे समाज को ब्लैक मेल करके पारिवारिक अनुशासन को भी अधिक-से-अधिक कमजोर किया। इतना कमजोर कि परिवार अपनी बालिग लड़की को न प्रेम विवाह से दूर रहने की सलाह दे सकता है, न ही मोबाइल रखने से ही रोक सकता है। न पारिवारिक अनुशासन रहा और न ही सामाजिक अनुशासन। ऊपर से लगातार सम्पूर्ण पुरुष समूह को अत्याचारी, अपराधी घोषित करने की मुहिम चलाई गयी।

5741. इन मुट्ठी भर आधुनिक महिलाओं की संगठित शक्ति का ही प्रभाव है कि सभी राजनैतिक दल इनके समक्ष झुककर इनकी बात मानने को तैयार हैं। इनके कथन में न कोई तर्क है, न ही चरित्र। इनके पास सिर्फ एक ही शक्ति है कि ये 2 % आधुनिक महिलाएं एकजुट हैं, संगठित हैं, जबकि अन्य महिलाएं किसी भी रूप में संगठित नहीं। इन संगठित समूहों से सभी राजनैतिक दल भयभीत रहते हैं, चाहे वे सत्ता में हो या विपक्ष में। आधुनिक महिलाओं के संगठित हो, हल्ला से सभी दल इस सीमा तक भयभीत हैं कि सबमें उनका समर्थन प्राप्त करने की होड़ लग गयी।

5742. आधुनिक महिलाएं कई मामलों में पारंपरिक महिलाओं से

भिन्न होती हैं। ये व्यक्ति तो होती हैं, किन्तु स्वयं को पारिवारिक अनुशासन से भी अलग मानती हैं और सामाजिक अनुशासन से भी।

5743. प्राचीन समय में महिलाओं को विशेषाधिकार प्राप्त थे समान अधिकार नहीं। नई व्यवस्था में महिलाओं को समान अधिकार दे रहे हैं। ऐसी स्थितियों में उन्हें विशेषाधिकार छोड़ने होंगे। कुछ आधुनिक महिलाएं समान अधिकार की बात करती हैं और विशेषाधिकार की भी। ऐसी महिलाएं समाज तोड़ने का काम करती हैं।

574 महिला और पुरुष

5744. महिला और पुरुष का अनुपात लगातार महिलाओं के पक्ष में गिर रहा है। अनेक परिवारों में लड़के कुंवारे रह रहे हैं। सम्पन्न परिवारों के लोग पैसे देकर लड़कियां ला रहे हैं। आर्थिक दृष्टि से गरीब घरों की लड़कियां सम्पन्न घरों में जा रही हैं। फिर भी पाखंडी लोग दहेज का हल्ला कर रहे हैं। यदि आप बासमती चावल खाना चाहते हैं, तो बासमती चावल का मूल्य देने में आपको कष्ट क्यों हो रहा है ?

5745. महिला और पुरुष के बीच समाज में दूरी घटाना या बढ़ाना उनकी परिवारिक सहमति पर निर्भर करता है, किसी सिद्धान्त पर नहीं। नासमझ लोग एक ओर तो सहशिक्षा या साथ में नौकरी को प्रोत्साहन देकर इस दूरी को घटाते रहने में निरन्तर लगे रहते हैं, तो दूसरी ओर यही लोग वेश्यावृत्ति रोकने, बार बालाओं को रोकने, शादी की उम्र बढ़ाने, सहमत सेक्स पर भी प्रतिबंध लगाने जैसे दूरी

बढ़ाने वाले कार्य भी करते रहते हैं। यदि इनकी दूरी घटेगी और उसके कोई अन्य मार्ग उपलब्ध नहीं होंगे, तो बलात्कार बढ़ेंगे ही, जैसा कि अभी हो रहा है। यदि भूख जल्दी लगेगी और भोजन देर से मिलेगा, तो छिपकर होटल जाने को नहीं रोका जा सकता। वर्तमान व्यवस्था दोनों काम एक साथ कर रही है और होटल जाने वालों को मृत्यु दण्ड तक की मांग कर रही है। दूरी घटाना है या बढ़ाना, यह परिवार की स्वतंत्रता होनी चाहिए, न कि कोई कानून।

5746. समाज को महिला और पुरुष के बीच बांटकर अपनी दुकानदारी चलाने वाले महिला-पुरुष को यह बात समझनी चाहिए कि वर्ग विद्वेष एक दुधारी तलवार है, जो प्रारंभ में भले ही किसी एक वर्ग को प्रसन्न करती हो, किन्तु उसका अंत दुखदायी होता है।

5747. वेश्याएं दो कारणों से धन्धा करती हैं – (1) पेट की भूख, (2) सेक्स की भूख। समाज का कर्तव्य है कि वेश्यावृत्ति के विरूद्ध कोई विचार देने के पूर्व उनकी इन दोनों मजबूरियों का भी आकलन कर ले।

5748. विवाह लड़के और लड़की की स्वीकृति, परिवार की सहमति तथा समाज की अनुमति से होते हैं। इसमें लड़के और लड़की की स्वीकृति अनिवार्य तत्व है, परिवार की स्वीकृति और समाज की अनुमति अनिवार्य नहीं है। किन्तु परिवार को अधिकार है कि वह अपने उच्छृंखल सदस्य को अलग कर दे। समाज को भी अधिकार है कि ऐसे उच्छृंखल परिवार को समाज व्यवस्था से अलग कर दे। किन्तु परिवार या समाज किसी भी परिस्थिति में ऐसे सदस्य के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन नहीं कर सकता।

5749. सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी पुरुषों से कम तथा

सम्मान सुरक्षा पुरुषों से अधिक होती है। पुरुष प्रधान व्यवस्था विकृति नहीं बल्कि व्यवस्था है, किन्तु परिवार का प्रमुख, परिवार प्रमुख तक सीमित रहना चाहिए, मालिक नहीं। वर्तमान पारंपरिक परिवारों में मुखिया मालिक बन गये, जो एक मुख्य विकृति है। वर्तमान परिस्थितियों में परिवार में भी सबको समान अधिकार दे देना चाहिए जो सबके संयुक्त हों।

5750. सेक्स एक प्राकृतिक भूख है, उस पर किसी भी प्रकार का कोई अंकुश मूल अधिकारों का उल्लंघन है। सहमत सेक्स को अनुशासन से ही रोका जा सकता है, शासन से नहीं। नासमझ पुरातनपंथी जो या तो शिथिल इंन्द्रिय हो गये हैं या किसी अन्य आधार पर दकियानूसी सोच रखते हैं, वे लोग सहमत सेक्स को भी अनावश्यक कानून बनाकर रोकने का प्रयास करते हैं।

5751. सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत परिवार में पुरुष प्रधान होता है, क्योंकि आमतौर पर महिला पति परिवार में जाकर शामिल होती है। आमतौर पर पुरुष बाहर काम अधिक देखते हैं और महिलाएं घर का। प्राकृतिक रुप से भी पति-पत्नी के संबंधों में पति आक्रामक और पत्नी का आकर्षक होना आवश्यक है।

5752. महिला, पुरुष, बालक, वृद्ध के आधार पर कोई वर्ग नहीं बन सकता, क्योंकि परिवार रुपी संगठन में सब समाहित होते हैं।

5753. कोई महिला और पुरुष कितने लोगों से साथ आपसी सम्बन्ध बनाते हैं, इसकी गिनती और चौकीदारी करना राज्य का काम नहीं है, क्योंकि यह तो सामाजिक व्यवस्था का विषय है।

5754. समाज व्यवस्था है कि महिला और पुरुष एक परिवार में शामिल होकर अपना स्वतंत्र अस्तित्व सीमित कर लेते हैं। या तो वे विवाह

पूर्व के माता-पिता के अनुशासन से बंधे हैं या विवाह के बाद पति-पत्नी के आपसी अनुशासन से। इस परिवार व्यवस्था को कमजोर करके स्त्री-पुरुष का वर्ग भेद मजबूत करना समाज के लिए हानिकारक है।

5755. यदि किसी व्यक्ति ने किसी अन्य के साथ उसकी सहमति से संभोग किया है, तो वह न तो अपराध है, न ही समाज विरोधी कार्य। सम्भोग किसी भी व्यक्ति का मूल अधिकार है, जिसे कोई अन्य बलपूर्वक तब तक नहीं रोक सकता, जब तक दोनों की सहमति है।

5756. समाज विस्तार के लिए महिला और पुरुष की एकाकार जीवन सहभागिता अनिवार्य होती है, जिसे परिवार कहते हैं।

5757. महिला-पुरुष के बीच दूरी कम करना भी एक समाज सुधार का कार्य माना जाता है। आज तक यह निश्चित नहीं हो सका कि सैद्धान्तिक रूप से महिला और पुरुष के बीच दूरी घटनी चाहिए या बढ़नी चाहिए। दूरी का घटना-बढ़ना व्यक्ति की शारीरिक आवश्यकता, पारिवारिक वातावरण तथा सामाजिक व्यवस्था के सम्मिलित मापदंड पर निर्भर करता है।

5758. सहमत सेक्स एक व्यक्तिगत, पारिवारिक या सामाजिक विषय है, और ऐसे मामलों में सरकारों को कोई कानूनी हस्तक्षेप तब तक नहीं करना चाहिए जब तक कोई अपराध न हो।

5759. महिलाओं के साथ होने वाले भेदभाव को दूर करने के नाम पर परिवारों के बीच अविश्वास समाज के लिए गंभीर समस्या पैदा करेगा।

5760. संपूर्ण मनुष्य जाति में महिला और पुरुष की जन्म दर लगभग

बराबर होती है। किसी प्रकार का असंतुलन होने पर प्रकृति स्वयं संतुलन बना लेती है।

5761. प्रत्येक महिला और पुरुष के बीच एक प्राकृतिक आकर्षण होता है, जिसकी तुलना लोहा और चुम्बक से होती है। प्रत्येक व्यक्ति में लोहा और चुम्बक दोनों की मात्रा अवश्य होती है, भले ही वह अलग-अलग और असमान होती है, चाहे महिला हो या पुरुष।

5762. महिला या पुरुष या तो व्यक्ति होते हैं अथवा परिवार के सदस्य। इनका कभी महिला-पुरुष के रुप में कोई पृथक अस्तित्व नहीं होता। समाज महिला और पुरुष नामक दो वर्गों का संघ न है, न होना चाहिए जैसा कि अभी हो रहा है। समाज अनेक परिवारों का संघ है, जिसमें महिला और पुरुष दोनों शामिल हैं। वर्तमान पुरुष प्रधान व्यवस्था की जितनी हानियां हैं, महिला जागृति के प्रयत्नों से उससे अधिक हानि होगी, क्योंकि महिलाओं और पुरुषों को दो वर्ग के रूप में ध्रुवीकृत करना समाज के लिए हानिकारक होगा।

576 महिला सशक्तिकरण

5763. महिला सशक्तिकरण का विचार परिवार तोड़ने वाला तथा बुरी नीयत से बढ़ाया जा रहा है। मुट्ठी भर धूर्त और आधुनिक महिलाएं राजनेताओं के साथ षड्यंत्र करके यह नारा लगा रही हैं। परिवारों में महिलाओं के साथ भेदभाव है। उस भेदभाव का दुरूपयोग करना गलत कार्य है। आज तक किसी महिला ने कभी यह बात स्पष्ट नहीं की कि वे महिलाएं समान अधिकार चाहती हैं या विशेष अधिकार। इन आधुनिक महिलाओं को समान अधिकार भी चाहिए और विशेष अधिकार भी। महिलाओं के सम्बन्ध में

सरकार द्वारा बनाये गये कानून अस्पष्ट हैं। सरकार यह स्पष्ट नहीं कर रही है कि महिला और पुरुष के बीच की दूरी घटनी उचित है या बढ़ानी।

5764. हमारे संविधान निर्माताओं की नासमझी या बुरी नीयत ने इस समस्या को उलझा दिया है। हमारी वर्तमान व्यवस्था में महिलाओं को परिवार में कम और समाज में कुछ अधिक अधिकार प्राप्त हैं। अब व्यवस्था में सारे भेद समाप्त करके सबके समान अधिकार कर देने चाहिए।

5765. परिवार एक कबड्डी मैच की प्रतिस्पर्धा है, जिसमें आगे बढ़ने के लिए टीम भावना चाहिए। इसे तीन पैर की दौड़ भी कह सकते हैं, जिसमें पति-पत्नी के एक-एक पैर बंधे हैं। दोनों में कौन मजबूत हो और कौन कमजोर यह अन्तिम निर्णय सिर्फ वही परिवार कर सकता है, कोई बाहर का प्रतिस्पर्धी नहीं। मोदी या रामदेव जी अनावश्यक महिला सशक्तिकरण के लिए परेशान हैं। परिवार सशक्तिकरण का नारा लगाइए और सबके विशेषाधिकार समाप्त करके समान अधिकार घोषित कर दीजिए।

5766. परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति में सबका हिस्सा तथा अधिकार बराबर हो ऐसा निर्णय नेता लोग करेंगे नहीं, क्योंकि उनका उद्देश्य महिला सशक्तिकरण न होकर समाज में वर्ग विद्वेष को बढ़ाना है। इसीलिए इस समस्या का समाधान सामाजिक जागृति से ही संभव है।

5767. वर्तमान राजनैतिक वातावरण के समाज में महिलाओं के पक्ष में जो घड़ियाली आंसू बहा रहे हैं, वह अंग्रेजी कूटनीति का भाग है। समाज पर नये-नये कानून थोपकर समाज की जगह राज्य सशक्तिकरण के घातक प्रयास से अधिक और कुछ नहीं। महिला

सशक्तिकरण का नारा समाज में इस प्रकार स्थापित कर दिया गया है कि इस विषय पर कोई तर्कसंगत चर्चा करना ही बहुत कठिन हो गया है। धूर्त महिलाएं वर्ग संघर्ष के लिए इस नारे को बहुत उपयोगी मान रही हैं।

5768. महिला सशक्तिकरण शब्द ही समाज तोड़क है। महिला सशक्तिकरण का नाटक सिर्फ 2 % आधुनिक महिलाएं ही खड़ा करती हैं, जिन्हें न पारिवारिक अनुशासन चाहिए, न सामाजिक। महिला सशक्तिकरण के लिए जो स्त्री-पुरुष ज्यादा जोर मारते हैं, उनमें महिला सशक्तिकरण की आदर्श स्थिति मानने वालों की संख्या औसत से बहुत कम तथा सुविधाजनक मानने वालों की संख्या औसत से बहुत ज्यादा दिखती है।

5769. सामाजिक व्यवस्था में भारतीय परिवारों में पुरुष प्रधान व्यवस्था है, जो समानता के सिद्धांतों के विरुद्ध है। यह अन्तर कहीं भी कानून में नहीं है। यह भेदभाव परिवार में है। लेकिन प्रत्येक महिला को परिवार बनाने न बनाने की स्वतंत्रता है। वह बालिग होने के बाद विवाह न करे या विवाह अपनी शर्तों पर करे, तो कहां सामाजिक दबाव है?

5770. व्यक्ति परिवार और समाज की अपनी-अपनी स्वतंत्रता और सीमा है। यदि आप पूर्ण स्वतंत्रता के इच्छुक हैं, तो आप दूसरों की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। अनेक पुरुष राजनेता तथा अनेक आधुनिक महिलाएं पारिवारिक सामाजिक अनुशासन को अपनी स्वतंत्र इच्छा पूर्ति में बाधक मानते हैं, जो मेरे विचार में एक षड्यंत्र है।

5771. महिला सशक्तिकरण के प्रयत्नों का उद्देश्य वर्ग निर्माण मात्र होता

है। लिंग भेद के आधार पर महिला या पुरुष का संगठन बनना हमेशा घातक होता है। संस्था बनाई जा सकती है। आजकल महिला सशक्तिकरण के नाम पर परम्परा और समाज व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करने का पूरे देश में एक फैशन चल पड़ा है। महिला सशक्तिकरण के नाम पर वर्ग विद्वेष फैलाने का जो प्रयत्न हो रहा है उसपर गंभीर विचार मंथन की आवश्यकता है।

5772. परिवार में पति-पत्नि के बीच अविश्वास की दीवार खड़ी की जा रही है। यह दीवार कितनी लाभदायक होगी, यह तो भविष्य बतायेगा, किन्तु यह दीवार परिवार व्यवस्था को अवश्य तोड़ेगी। छोटे बच्चों के संस्कार खराब होंगे। लाभ होना तो संदेहास्पद है, किन्तु नुकसान होना निश्चित है।

5773. विचारणीय यह है कि यदि सशक्त होना है, तो महिला या पुरुष को होना चाहिए या परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था को। मैं मानता हूं कि पुरुष प्रधान व्यवस्था को परिवार की सहमति से हटकर रुढ़ हो जाने से कुछ विकृतियां आयी हैं, किन्तु महिला सशक्तिकरण उसका किसी भी रुप में कोई समाधान न होकर, बल्कि एक बड़ी परिवार तोड़क, समाज तोड़क समस्या के रुप में विस्तार पा रही है।

5774. परिवार व्यवस्था लोकतांत्रिक हो, इसमें हमारे संत महात्माओं को बुराई दिखती है, तो दूसरी ओर महिला सशक्तिकरण जैसी घातक बीमारी में उन्हें कोई बुराई नहीं दिखती। यहां तक कि अनेक संत, गुरु तो अन्य सामाजिक कार्य छोड़कर बेटी बचाओ जैसे नारे के प्रचार में ही लग गये हैं। चाहे गांधीवादी हों या वामपंथी चाहे कोई नेता हो अथवा धर्म गुरु। सभी चाहे नासमझी में या षड्यंत्र के अन्तर्गत महिला सशक्तिकरण जैसे असामाजिक प्रयत्न को

सामाजिक कार्य घोषित करने में गर्व महसूस करते हैं।

5775. किसी भी व्यक्ति को यदि विशेष शक्ति दी जाती है, तो उसके दुरुपयोग की संभावना भी बनी रहती है और उस पर नियंत्रण के लिए भी विशेष प्रयास करने पड़ते हैं, किन्तु यदि किसी वर्ग को विशेष अधिकार दिये जायें, तो उस वर्ग के धूर्त लोग समाज के अन्य शरीफ लोगों का भरपूर शोषण करते हैं। परिणामस्वरुप धूर्तों की शक्ति मजबूत होती जाती है। आज यदि भारत में धूर्तता अधिक शक्तिशाली हो रही है, तो उसका एकमात्र कारण है विभिन्न वर्गों को विशेष अधिकार दिया जाना।

5776. भारत का महिला सशक्तिकरण का नारा धूर्त महिलाओं के लिए एक हथियार का काम करता है। धूर्तों का सशक्तिकरण हमेशा अन्यायपूर्ण होता है और इसलिए किसी वर्ग को कभी भी विशेषाधिकार नहीं देना चाहिए। किसी भी प्रकार का महिला सशक्तिकरण अथवा महिला आरक्षण या तो परिवार या समाज व्यवस्था में विखण्डन पैदा करता है अथवा शोषण।

5777. कन्या-भ्रूण हत्या या महिला सशक्तिकरण का प्रचार हानिकारक है तथा समाज को महिला-पुरुष में तोड़कर समस्याओं का विस्तार करेगा। भ्रूण-हत्या रोकने या सभी बच्चों को बिना भेदभाव के शिक्षा देने की योजना बनाई जा सकती है।

5778. भारत में महिला सशक्तिकरण या पुरुष सशक्तिकरण जैसे कार्य असामाजिक कार्य हैं। इसके विपरीत परिवार सशक्तिकरण, ग्राम सशक्तिकरण जैसे कार्य सामाजिक हैं। महिला सशक्तिकरण का नारा लगाने वाले लोगों का षड्यंत्र विफल कर देना चाहिए। किसी भी प्रकार का आरक्षण घातक है।

5779. नारी स्वातंत्र्य या महिला सशक्तिकरण का विचार ही समाज तोड़क है। इसकी जगह व्यक्ति सशक्तिकरण, परिवार सशक्तिकरण, समाज सशक्तिकरण या शराफत सशक्तिकरण होना चाहिए।

5780. गरीबी या श्रम प्रधान रोजगार के विरूद्ध राजनैतिक शक्ति या सरकारी नौकरियों की छीना-झपटी में महिला आरक्षण के नाम पर अपने परिवार के लिए कुछ अधिक बटोर लेने का नाम ही महिला सशक्तिकरण हो गया है।

5781. परिवार व्यवस्था को संवैधानिक व्यवस्था में अमान्य और कमजोर करके महिला को एक वर्ग के रूप में खड़ा करना घातक कदम है।

5782. नर-नारी एक-दूसरे के पूरक नहीं होते, बल्कि परिवार व्यवस्था में दोनों ही सहभागी होते हैं, सहयोगी नहीं।

578 महिला उत्पीड़न

5783. परिवार में महिला और पुरुष का भेद है, जो सम्पूर्ण भारत के हर वर्ग, हर क्षेत्र में लगभग एक समान दिखता है। किन्तु यह भेद पुरुषों की अत्याचार की प्रवृत्ति के कारण न होकर पुरुष प्रधान व्यवस्था के कारण है।

5784. महिलाओं पर होने वाले अत्याचार को व्यक्ति के रूप में रोकने के प्रयत्नों की अपेक्षा वर्ग के रूप में रोकने के प्रयत्नों के घातक परिणाम निश्चित हैं।

5785. महिला-पुरुष सम्बन्ध और पुरुष प्रधान व्यवस्था पर विचार करते समय हमेशा ही भूल हुई है। समाज में महिला भी वैसी ही एक स्वतंत्र और समान अधिकारों वाली इकाई है, जैसे पुरुष। आदर्श परिवार प्रणाली में परिवार में पुरुष प्रधान व्यवस्था होने के कारण भेदभाव अवश्य है और इसका प्रमुख कारण है महिलाओं को

परिवार व्यवस्था में सहयोगी मानना। यदि परिवार में सबको समान अधिकार दे दिया जाये, तो महिलाएं सहयोगी न होकर, सहभागी बन जाएंगी और सारी समस्या अपने आप खत्म हो जाएगी।

5786. महिलाओं को परिवार में समानता से वंचित रखना समाज के लिए घातक होगा। किन्तु महिला न्याय और समानता के लिए विघटनकारी कानूनों की अपेक्षा परिवार संसद का प्रयोग अधिक उपयोगी होगा।

5787. महिला उत्पीड़न कोई पुरुष अत्याचार न होकर एक सामाजिक कुरीति मात्र है, जो समान नागरिक संहिता को संवैधानिक मान्यता देने मात्र से महत्वहीन हो सकती है। राजनैतिक दल अपने वर्ग संघर्ष के स्वार्थ के कारण इस समान नागरिक संहिता को लागू नहीं करना चाहते।

5788. स्त्री-पुरुष प्रकृति की दो भिन्न-भिन्न इकाइयां हैं, जिनके गुण और प्रभाव भिन्न-भिन्न होते हैं।

5789. महिलाओं पर पुरुषों का अत्याचार शब्द असत्य और घातक है। समाज में महिलाओं का पिछड़ना पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था में समयानुसार परिवर्तन न करने की भूल मात्र है, अत्याचार नहीं। महिलाओं को परिवार की सम्पत्ति में समान अधिकार न मिलना तथा विवाह के समय लड़की की अपेक्षा अधिक योग्य वर की तलाश ही इसके कारण हैं।

5790. (1) महिलाओं पर अत्याचार की घटनाएं अतिरंजित और बुरी नीयत का प्रचार है।

(2) पति-पत्नी का सहमति से एकाकार होना दोनों की समान मजबूरी है।

(3) यदि सामान्यतया परिवार में महिलाओं पर अत्याचार ही होता है, तो महिलाएं ऐसी व्यवस्था के अन्तर्गत दूसरे घर में क्यों जाती हैं।

(4) हर लड़की और उसके मां-बाप लड़की की तुलना में अधिक योग्य और लड़के के मां-बाप लड़के की तुलना में कम योग्य लड़की से विवाह करना उचित समझते हैं। कलेक्टर लड़का चपरासी की योग्यता रखने वाली लड़की के साथ रहने के लिए सहमत है, किन्तु कलेक्टर लड़की चपरासी की योग्यता रखने वाले लड़के से विवाह करने के लिए सहमत नहीं होगी। विवाह के समय अधिक योग्य लड़का और परिवार तथा विवाह बाद समानता का नाटक।

(5) जब परिवार में आमतौर पर पुरुष अत्याचारी ही होता है, तो पति के मरने पर महिलाएं रोती क्यों हैं, अत्याचारी मर गया।

(6) एक कलेक्टर या बड़े उद्योगपति की पत्नी अपने सैकड़ों पुरुष कर्मचारियों को दबाकर रखती है, तो कहां है भेदभाव।

(7) यह प्राकृतिक आवश्यकता है कि पति को आक्रामक तथा पत्नी को आकर्षक मुद्रा में होना चाहिए।

(8) महिला भेदभाव का लाभ उठाने के उद्देश्य से दिल्ली में राजघाट पर सरकार ने एक बड़ा बोर्ड लगवाकर लिखा है कि महिलाओं पर अत्याचार कानूनन अपराध है। मैं आज तक नहीं समझा कि भारत में किस-किस पर अत्याचार करने की कानूनन छूट है।

(9) कोई-कोई नासमझ तो कन्या भ्रूण-हत्या के कानून की भी वकालत करता है जबकि भ्रूण हत्या अपराध हो सकता है,

किन्तु उसमें भेद करना ठीक नहीं, क्योंकि लड़कों की भ्रूण-हत्या तो प्रायः होती ही नहीं।

579 महिला और कानून

5791. महिलाओं को वर्ग के रूप में स्थापित करना राजनेताओं के लिए बहुत सुविधाजनक है और इस कार्य के लिए सामाजिक व्यवस्था के स्थान पर कानूनी व्यवस्था की स्थापना उनके लिए बहुत आसान मार्ग है।

5792. महिला और पुरुष के बीच कम होती जा रही दूरी को बढ़ाने के लिए कानून पर कानून बनते रहे, तब भी समाज को कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि वर्तमान वैश्विक वातावरण में यह दूरी कम होती ही जाएगी, बढ़ाई नहीं जा सकती और कानून से तो बिल्कुल भी संभव नहीं है।

5793. इच्छुक स्त्री-पुरुष मिलन को बलपूर्वक या कानून से रोकना स्वास्थ्य के लिए भी घातक है और अपराध वृद्धि की भी सम्भावना है। इस तरह के अनैतिक मिलन को आपसी सहमति से ही अनुशासित किया जा सकता है, कानून से नहीं।

5794. किसी महिला के साथ अत्याचार हो सकता है। उसके लिए कानून है। किन्तु सामाजिक व्यवस्था में महिलाएं और पुरुष बहुवचन होते ही नहीं, क्योंकि न उनका जन्म स्वतंत्र हुआ है, न ही स्वतंत्र जन्म दे सकते हैं। किसी प्रकार के अलग कानून बन ही नहीं सकते, क्योंकि उनका पृथक अस्तित्व ही नहीं है। जब महिला या पुरुष किसी परिवार के साथ जुड़ जाता है, तब उसकी अलग पहचान समाप्त हो जाती है। वर्तमान भारत में बहुत कम लोग ही ऐसे होंगे, जो अलग अस्तित्व रखते हैं।

5795. मेरा प्रस्ताव है कि महिला और पुरुष को कानून के अनुसार व्यक्ति ही मानकर समान मानना चाहिए। परिवार की कार्य-प्रणाली परिवार मिलकर तय करेगा, जिसमें कानून का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। जो परिवार दूरी घटाना चाहेगा, वह घटा सकता है और जो बढ़ाना चाहेगा, वह बढ़ा सकता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य परिवार के अनुशासन से बंधा होगा। परिवार का कोई सदस्य परिवार की सहमति के बिना किसी अन्य संगठन का सदस्य नहीं हो सकेगा। विवाह, तलाक, दहेज आदि में कानून का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। सहमति के अभाव में बलपूर्वक शारीरिक सम्बन्ध बनाना गंभीर अपराध होगा, किन्तु सहमति से लोभ लालच से झूठा वादा करके सम्बन्ध बनाना कोई अपराध नहीं होगा। अधिक-से-अधिक वचन भंग या संविदा उल्लंघन का अपराध हो सकता है। यौन शुचिता को अधिक संवेदनशील मुद्दा बनाना बहुत घातक है। इससे बचा जाना चाहिए। महिलाओं की संख्या घटती गई और पुरानी परिवार व्यवस्था में बदलाव नहीं हुआ जो होना चाहिए था। महिला सशक्तिकरण, कन्या-भ्रूण हत्या पर रोक, वेश्यावृत्ति पर रोक, महिला-पुरुष की दूरी घटाने तथा बढ़ाने के विपरीत प्रयत्न एक साथ, जैसे वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष के राजनैतिक प्रयास घातक परिणाम दे रहे हैं।

5796. किसी भी प्रकार के नये कानून बनाने के पूर्व चार बातों पर विचार करना आवश्यक होता है - (1) समाज में होता अन्याय, (2) प्राथमिकता के क्रम में उक्त अन्याय का महत्व, (3) प्रशासनिक क्षमता, (4) कानून के लाभ और दुष्प्रभावों की तुलना। अतिरिक्त

क्षमता विस्तार किये बिना नये कानूनों का विस्तार अधिक अव्यवस्था पैदा करेगा।

5797. जब तक कोई महिला या पुरुष किसी परिवार की इकाई है, तब तक उसकी अलग पहचान समाप्त हो जाती है। महिला तब मां, बेटी, पत्नी तो हो सकती है, किन्तु महिला नहीं रह सकती। परिवार का कौन सदस्य मजबूत हो, यह परिवार तय कर सकता है, कानून नहीं।

5798. मैं भारत को एक सौ चालीस करोड़ व्यक्तियों या तीस करोड़ परिवारों का देश मानता हूं इसमें मैं लिंगभेद के आधार पर कोई अलग कानून बनाने का पक्षधर नहीं हूं। परिवार, व्यक्ति के बाद व्यवस्था की दूसरी इकाई है।

5799. जब तक बलात्कार न हो, तब तक राज्य को महिला-पुरुष के बीच आपसी संबंधों के मामले में किसी भी प्रकार का कोई कानून नहीं बनना चाहिए।

580 महिला

5800. महिलाओं को समान अधिकार भी चाहिए और विशेष अधिकार भी, यह टकराव दूरगामी नुकसान कर सकता है। कन्या-भ्रूण हत्या को महिला अत्याचार से अलग हटकर देखने की जरूरत है। मेरे विचार से महिलाओं के विशेषाधिकार समाप्त करके समान अधिकार दे देना चाहिए।

5801. महिला जागृति आंदोलनों से महिलाओं पर पुरुषों का अत्याचार कम हुआ। किन्तु समाज व्यवस्था भी कमजोर हुई और परिवार व्यवस्था भी। सबसे बड़ा खतरा यह पैदा हुआ कि समाज व्यवस्था

में राजनीतिक व्यवस्था का हस्तक्षेप बढ़ने लगा और बढ़ते-बढ़ते उसने एक समस्या का रूप ले लिया। इसलिए महिला जागृति आन्दोलनों से महिआओं को दूर रहना चाहिए।

5802. स्त्री और पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं, विकल्प नहीं। इन्हें वर्ग के रूप में खड़ा मत कीजिए। इनके अधिकारों की भूख को अनावश्यक मत जगाइये। महिलाओं को समान अधिकार और समान स्वतंत्रता दे दी जाए। परिवार व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता देकर मजबूत होने का अवसर दीजिए, तो संभव है कि यह समस्या कुछ सीमा तक सुलझ जाये।

5803. स्त्री और पुरुष न एक-दूसरे के प्रतिद्वंदी हैं न प्रतिस्पर्धी। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। इन्हें पूरक के स्थान पर प्रतिद्वंदी बनाना कोई समाधान न होकर एक समस्या ही है। ऐसे मार्ग तलाशने चाहिए कि सांप भी मरे और लाठी भी न टूटे। अर्थात् महिलाओं को समानता तो मिले, किन्तु परिवार व्यवस्था न टूटे।

5804. हजारों वर्ष पूर्व परिवार में पुरुष प्रधानता आरक्षण के रूप में स्थापित हुई तथा उस प्रधानता ने समाज में भी पुरुष प्रधान व्यवस्था का स्वरूप ग्रहण कर लिया। महिला और पुरुष दो वर्ग के रूप में स्थापित होने लगे। महिलाओं की क्षमता और योग्यता की सीमाएं निर्धारित हुईं जो पुरुषों द्वारा अपने पक्ष में बनाई गई। इसका दुष्परिणाम आज दिख रहा है। दुष्ट प्रवृत्ति के पुरुषों ने इसका लाभ भी खूब उठाया। इस्लाम में तो ऐसे एकपक्षीय नियम ही बना दिये गये कि परिवार में मालिक पति होगा, किन्तु हिन्दुत्व में भी पुरुष मुखिया की व्यवस्था मालिक से कोई बहुत कम नहीं रही। पुरुष प्रधानता धीरे-धीरे कम हो और परिवार व्यवस्था, समाज व्यवस्था

कमजोर न हो, यह अधिक सुरक्षित मार्ग होगा।

5805. महिला आरक्षण विधेयक की समीक्षा में हमें प्राथमिकताएं तय करनी होंगी कि हम भारत में मिलावट चरित्र-पतन, भ्रष्टाचार आदि को पहली प्राथमिकता मानते हैं या महिला-पुरुष असमानता को।

5806. जो कुछ अभी तक महिलाओं के विषय में समाज में चल रहा है, वह कोई अच्छी स्थिति नहीं है। महिलाओं को पारिवारिक संपत्ति में किसी न किसी तरह का समान अधिकार तो मिलना ही चाहिए।

5807. यदि किसी महिला को पुरुष प्रधान व्यवस्था अमान्य है, तो वह क्यों नहीं किसी बहुत कम योग्य लड़के को जीवन साथी चुन लेती है? उसका निरक्षर पति उसकी सेवा करेगा और वह परिवार का भरण-पोषण करेगी। किसने रोका उसे?

5808. महिला अधिकार के लिए संघर्ष करने की परम्परा कुछ महिलाओं द्वारा अपने परिवार के लिए अधिक-से-अधिक लाभ लूटने की योजना के अतिरिक्त कुछ नहीं।

5809. पुरुष प्रधान व्यवस्था का मूल आधार कम योग्य महिला द्वारा अधिक योग्य पुरुष के साथ विवाह करके परिवार की प्रथा से जुड़ा है, महिला समानता की पक्षधर महिलाओं को सबसे पहले अपनी लड़कियों को कम योग्य लड़कों के साथ जोड़कर पहल करनी चाहिए। अधिकांश महिला उत्पीड़न तो यहीं से रूक जायेगा।

5810. मेरे विचार में महिला और पुरुष दो वर्ग नहीं हैं न होने चाहिए। महिला को विशेष अधिकार घोषित करना घातक परंपरा है, क्योंकि न सभी महिलाएं एक जैसी हैं, न सभी पुरुष। महिला और पुरुष दो अलग-अलग व्यक्तिगत इकाइयां हैं, जो कि परिवार के साथ जुड़ते ही व्यक्तिगत इकाई का स्वरूप खोकर परिवार रूपी

इकाई में रूपान्तरित हो जाती हैं। समाज में पुरुष और महिला को वर्ग रूप में खड़ा करना घातक है।

5811. महिला और पुरुष कोई अलग-अलग वर्ग न हैं, न हो सकते हैं। परिवार एक संगठन है। परिवार का कोई सदस्य परिवार की सहमति के बिना किसी अन्य संगठन का सदस्य नहीं बन सकता। महिला और पुरुष का परिवार की स्वीकृति के बिना किसी संगठन में शामिल होना पूरी तरह असामाजिक कार्य है। अपने राजनैतिक स्वार्थ के लिए महिला और पुरुष को वर्ग के रूप में खड़ा मत करिये। समाज के सामाजिक संबंधों के साथ छेड़छाड़ न करें तो समाज की अनेक समस्याएं अपने आप सुलझा लेगा।

5812. जो महिलाएं परिवार का सदस्य होती हैं, उनका तो स्वतंत्र अस्तित्व होता ही नहीं हैं। उन्हें तो मौलिक अधिकार ही व्यक्तिगत रूप से प्राप्त होता है। संवैधानिक तथा सामाजिक अधिकार व्यक्तिगत होते नहीं, वे पूरे परिवार में संयुक्त होते हैं।

5813. महिलाओं को समाज का आधा भाग कहने की प्रथा तो पश्चिम से आई है, जहां परिवार एक स्वतंत्र इकाई न होकर कुछ लोगों की एक पार्टनरशिप है, जहां उनसे पैदा हुई संतान परिवार की इकाई न मानकर समाज की इकाई बन जाती हैं।

5814. जब समाज में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक होती है, तो महिलाओं का सम्मान घटता है और जब महिलाओं की संख्या कम होती है, तो महिलाओं का सम्मान बढ़ता है। यदि महिलाओं की मांग बढ़ेगी, तो उनकी शक्ति अपने आप बढ़ेगी और यदि महिलाओं की आवश्यकता कम होगी, तो शक्ति पर बुरा प्रभाव पड़ेगा किन्तु राजनेताओं को इस बात की कोई चिन्ता नहीं। वर्तमान

समय में दो विपरीत बातें एक साथ समाज में कही जा रही है - (1) महिलाओं को परिवार और समाज में सशक्त होना चाहिए, उन्हें स्वावलम्बी होना चाहिए। (2) महिलाओं की संख्या निरंतर बढ़ाने का प्रयास होना चाहिए।

5815. महिलाओं का अनुपात बदलने से समाज में महिला और पुरुष के बीच की असमानता घटी है और महिलाएं परिवार में भी कुछ सशक्त हुई हैं। यदि यह अनुपात थोड़ा-सा और गिर जाये, तो महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया अपने आप पूरी हो जाएगी। लड़कियों की घटती जनसंख्या ने जाति प्रथा को भी चूर-चूर करना शुरू कर दिया है।

5816. महिला और पुरुष के बीच की दूरी जितनी ही घटेगी, उतना ही विस्फोट का खतरा अधिक बढ़ेगा। क्योंकि महिला और पुरुष की तुलना आग और बारूद से की जाती है। दूरी घटना, विध्वंस का कारण बन सकता है और दूरी बढ़ना सृजन में बाधा पैदा करेगा। दूरी घटने या बढ़ने का निर्णय व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक हो सकता है। विशेष परिस्थितियों में समाज भी ऐसे निर्णय को अनुशासित कर सकता है, किन्तु सरकार को इस सम्बन्ध में तब तक कोई कानून नहीं बनाना चाहिए, जब तक कोई अपराध न हो।

5817. महिलाएं परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था के सुचारू संचालन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। यह भी स्पष्ट है कि वर्तमान परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था के टूटने में आधुनिक महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है, किन्तु यह भी मानना होगा कि परम्परागत परिवार व्यवस्था में सुधार नहीं किया गया तो आधुनिक परिवार व्यवस्था को न रोका जा सकता है, न

सुधारा जा सकता है, क्योंकि महिलाएं अब इतनी जागरूक हैं कि वे घुटन की अपेक्षा टूटन को अधिक महत्व दे रही हैं।

5818. कुछ गिनी-चुनी महिलाओं को छोड़कर बाकी महिलाएं परिवार का अंग होती हैं और परिवार में सम्मिलित होने के बाद उनके सभी प्रकार के सामाजिक अथवा संवैधानिक अधिकार संयुक्त हो जाते हैं। मूल अधिकारों को छोड़कर अन्य कोई भी अधिकार व्यक्तिगत नहीं होता। प्राचीन समय में महिलाओं को कुछ विशेषाधिकार देकर उनके समान अधिकारों में कटौती की जाती थी, जिसका उस समय दुरूपयोग हुआ और उस दुरूपयोग की प्रकृति को आज ठीक करने की आवश्यकता है।

5819. धूर्त महिलाओं ने महिला आरक्षण का नारा इसलिए बुलंद किया है कि वे पति-पत्नी मिलकर सारी राजनैतिक अथवा सरकारी नौकरी की माल-मलाई अपने परिवार तक समेट लें। इस महिला आरक्षण का श्रम प्रधान महिलाओं को क्या लाभ होगा? क्यों नहीं आरक्षण के साथ एक और धारा जोड़ दी जाये कि आरक्षण का लाभ उन्हीं महिलाओं को मिलेगा, जिन परिवारों का कोई सदस्य किसी राजनैतिक या सरकारी नौकरी में नहीं होगा।

5820. महिलाओं के सम्बन्ध में परिवार और समाज में दो प्रकार की व्यवस्था प्रचलित है। एक बंद समाज व्यवस्था और दूसरी खुली समाज व्यवस्था। बंद समाज व्यवस्था पुरातन पंथी और खुली समाज व्यवस्था को आधुनिक कहा जाता है।

5821. किसी पुरुष द्वारा किसी महिला के विषय में टिप्पणी करते ही कुछ पेशेवर महिलाओं की भावनाएं भड़कने लगती हैं। ऐसी महिलाओं के पास कोई पारिवारिक या रचनात्मक काम तो होता नहीं,

भावनाओं का व्यवसाय करके ही तो उन्हें राजनीति में, मीडिया में या समाज में अपनी प्रतिष्ठा और सम्मान बनाये रखना पड़ता है। ऐसी महिलाओं की कुल संख्या 2 % से भी कम होती है, किन्तु ये ऐसे ही घावों को खोजकर इतनी मोटी हो जाती हैं कि आम लोग इनसे भयभीत लगते हैं। ऐसी परजीवी महिलाओं की भी संख्या और महत्व में विस्तार, चिन्ता का विषय है।

583 महिला या परिवार

5830. महिला और पुरुष दो अलग-अलग व्यक्तिगत इकाइयां हैं, जो कि परिवार के साथ जुड़ते ही व्यक्तिगत इकाई का स्वरूप खोकर परिवार रूपी इकाई में रूपान्तरित हो जाती हैं। समाज में पुरुष और महिला को वर्ग रूप में खड़ा करना घातक है।

5831. स्त्री हो या पुरुष व्यक्ति के रूप में ये एक स्वतंत्र इकाई के रूप में होते हैं किन्तु सामाजिक संरचना में ये दोनों एक-दूसरे के पूरक होते हैं। वर्तमान में महिलाओं को पीड़ित, शोषित तथा अन्याय भोक्ता के रूप में प्रचारित किया जा रहा है। महिला और पुरुष की समाज में भूमिका प्रारंभ से अब तक लगभग एक समान है, किन्तु कभी दृष्टिकोण भेद से या कभी स्वार्थ वश इनकी भिन्न-भिन्न स्थिति का चित्रण किया जाता है। न तो पुरुषों का कोई भिन्न परिवार है, न ही महिलाओं का। परिवार दोनों की संयुक्त भूमिका से ही अस्तित्व में आते हैं।

5832. संपूर्ण समाज में वर के पिता की तुलना बाघ और कन्या के पिता की तुलना गाय से की जाती रही है। अब महिलाओं की घटती संख्या के कारण कन्या के पिता बहुत मजबूत हो रहे हैं, जो अच्छा है।

5833. मेरे विचार में सामाजिक समस्या का कानूनी या राजनैतिक हल निकालने की कोशिश या तो घातक होती है या अनावश्यक। महिलाओं को समान अधिकार और महिलाओं को विशेषाधिकार ये दोनों विचार एक साथ विचारणीय हो सकते हैं, किन्तु पृथक-पृथक नहीं। परिवार के पारिवारिक सामंजस्य को न्यूनतम क्षति हो और महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त हों, ऐसे प्रयास होने चाहिए।

590 राष्ट्रीयकरण

5900. सरकारीकरण से हमारा पिंड छूट रहा है। किन्तु हमारी लड़ाई खतम नहीं हुई है। क्योंकि समाज को गुलाम बनाकर रखने की राज्य-पूंजीपतियों की संयुक्त मुहिम से भी तो समाज को ही लड़ना होगा।

5901. निजीकरण, सरकारीकरण की अपेक्षा एक वैसा ही अच्छा विकल्प है, जैसा तानाशाही की जगह लोकतंत्र। यह विकल्प तो हो सकता है, किन्तु सामाधान नहीं है। इसका सामाधान समाज नियंत्रित अर्थव्यवस्था है। सरकारीकरण का सबसे अच्छा विकल्प तो समाजीकरण ही है, किन्तु जब तक समाजीकरण न हो, तब तक निजीकरण या बाजारीकरण का समर्थन करना चाहिए।

5902. हम सब प्रकार के सरकारीकरण का विरोध करते हैं, क्योंकि सरकारीकरण भ्रष्टाचार बढ़ाता है, यह राज्य पर अनावश्यक बोझ है, सुरक्षा और न्याय को कमजोर करता है तथा समाज के सामाजिक कार्यों में हस्तक्षेप करके उसे गुलाम बनाता है।

591 कर्तव्य, अधिकार और दायित्व

5910. प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता की सुरक्षा करना समाज का दायित्व होता है। समाज इस कार्य का दायित्व जिसे देता है, उसे राज्य

कहते हैं। राज्य का सिर्फ एक ही दायित्व होता है, सुरक्षा और न्याय। अन्य सभी कार्य राज्य के कर्तव्य होते हैं, दायित्व नहीं। दायित्व बाध्यकारी होता है और कर्तव्य स्वैच्छिक। राज्य दायित्व और कर्तव्य का अंतर न समझने के कारण जनहित को दायित्व मान लेता है, तो सुरक्षा और न्याय को कर्तव्य।

5911. अधिकार और शक्ति अलग-अलग होते हैं। अधिकार को अंग्रेजी में (Right) तथा शक्ति को (Power) कहा जाता है। कोई व्यक्ति जब अपने अधिकार किसी अन्य को देता है, तब वह अधिकार शक्ति के रूप में बदल जाता है। ऐसी शक्ति हमेशा दाता की अमानत होती है, प्राप्तकर्ता का अधिकार नहीं।

5912. किसी व्यक्ति के दायित्व किसी दूसरे के अधिकार बन जाते हैं। अधिकारों की पूर्ति तब तक संभव नहीं जब तक कोई दूसरा अपना दायित्व पूरा न करे। कमजोरों की मदद करना मजबूतों का कर्तव्य होता है, कमजोरों का अधिकार नहीं, क्योंकि यह मद्द किसी का दायित्व नहीं है। राजनैतिक व्यवस्था ने इसे कमजोरों का अधिकार घोषित करके भूल की है।

5913. दायित्व पूरे करने के लिए व्यक्ति उत्तरदायी होता है, कर्तव्य के लिए नहीं। कर्तव्य के लिए प्रशंसा या धन्यवाद पर्याप्त होता है।

592 इकाई

5920. प्रत्येक इकाई को अपने इकाईगत निर्णय की स्वतंत्रता होनी चाहिए। समाज में व्यक्ति एक मूल और सम्प्रभुता सम्पन्न स्वतंत्र इकाई माना जाती है। इसी तरह परिवार, गांव, जिला, प्रदेश और देश भी अलग-अलग इकाई माने जाते हैं।

5921. देश या राष्ट्र व्यवस्था की अंतिम इकाई नहीं होते हैं, क्योंकि संपूर्ण

विश्व-समाज ही व्यवस्था की अंतिम इकाई होता है। वर्तमान समय में विश्व व्यवस्था के छिन्न-भिन्न होने से राष्ट्र को संप्रभुता संपन्न इकाई मान लिया गया है।

5922. किसी भी इकाई में सम्पूर्ण समर्पण के बाद भी व्यक्ति की इकाई से अलग होने की स्वतंत्रता हमेशा सुरक्षित रहती है। किसी भी परिस्थिति में किसी समझौते के अंतर्गत सम्बन्ध-विच्छेद की स्वतंत्रता में कटौती नहीं की जा सकती।

5923. परिवार, गांव, राष्ट्र आदि इकाई समाज व्यवस्था की इकाई मानी जाती है। किसी भी व्यक्ति की उसकी सहमति के बिना राज्य भी अपने साथ जुड़कर रहने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।

5924. कोई भी इकाई जब अपनी सीमा तोड़ती है, तो उसे सीमा तोड़ने में आनंद तो आता है, किन्तु यह आनन्द भविष्य में बहुत खतरनाक रूप ले लेता है।

5925. कोई भी अन्य इकाई चाहे वह व्यक्ति हो, राष्ट्र अथवा समाज, किसी भी इकाई की स्वतंत्रता में तब तक कोई बाधा उत्पन्न नहीं कर सकता, जब तक उस इकाई ने कोई अपराध न किया हो।

5926. राज्य का दायित्व है कि वह प्रत्येक इकाई को अपनी इकाईगत स्वतंत्रता से बाहर जाकर दूसरे की स्वतंत्रता पर आक्रमण करने से रोके। प्रत्येक व्यक्ति तथा प्रत्येक व्यक्ति से अन्य इकाइयों की स्वतंत्रता की सुरक्षा करना राज्य का कर्तव्य न होकर दायित्व ही है।

5927. राष्ट्र एक कृत्रिम इकाई है, जो व्यक्तियों की सहमति से तथा समाज की स्वीकृति से बनती है। राष्ट्र की कोई न कोई भौगोलिक सीमा अवश्य होती है, जबकि समाज की कोई भौगोलिक सीमा नहीं हुआ करती।

5928. कुल इकाइयां तीन ही होती हैं – (1) व्यक्ति, (2) परिवार, (3)

समाज। ये तीन इकाइयां सिर्फ भारत में ही अपना अस्तित्व रखती हैं अन्यथा पश्चिमी जगत व्यक्ति और समाज रूपी स्वतंत्र इकाइयों का दो का ही अस्तित्व मानता है, तो इस्लाम अकेले धर्म का तथा साम्यवाद राज्य का।

5929. समाज की मूल इकाई है व्यक्ति और व्यवस्था की पहली इकाई परिवार, दूसरी गांव या वार्ड, तीसरी देश और चौथी विश्व हो सकती है। गांव और देश के बीच की इकाइयों को मान भी सकते हैं और नहीं भी, क्योंकि ये सर्वदा चलायमान होती हैं। समाज स्वयं में अमूर्त इकाई है। परिवार से लेकर विश्व तक की प्रत्येक इकाई अपने से ऊपर की इकाई की पूरक तथा नीचे वाली इकाई की संरक्षक होती हैं। इसका अर्थ हुआ कि हर इकाई अपने से ऊपर की इकाई को शक्ति देती है और नीचे की इकाई को सुरक्षा की गारंटी।

5930. अपनी इकाइयों को निश्चित सुरक्षा और न्याय के लिए समाज का एक विशेष सेल होता है, जिसे राज्य कहते हैं। अब तक सम्पूर्ण विश्व की कोई एक राज्य व्यवस्था नहीं बनी है, इसलिए पूरा विश्व कई सौ स्वतंत्र राज्य व्यवस्थाओं में बंटा हुआ है।

5931. समाज की एकजुटता के खतरे से बचाव के लिए राज्य दो तरीके से सक्रिय रहता है – (1) समाज की प्राथमिक इकाई परिवार और ग्राम या वार्ड को हमेशा कमजोर करते जाना, (2) समाज को किसी एक या एक से अधिक आधारों पर वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष तथा वर्ग संघर्ष की दिशा में लगातार प्रोत्साहित करना। भारत की तो आज यह स्थिति हो गई है कि यहां अनेक वर्ग ही स्वयं को समाज घोषित करने लगे हैं। वर्ग संघर्ष ही इनकी सामाजिक एकता मान ली जाती है। ऐसी वर्ग विभाजन की स्थिति भारत में निरंतर बढ़ती जा रही है।

5932. कानून व्यवस्था प्रत्यक्ष भी होती है और प्रक्रिया बद्ध भी। समाज व्यवस्था किसी प्रकिया से बंधी नहीं है, अप्रत्यक्ष होती है, किन्तु होती अवश्य है। समाज व्यवस्था का प्रत्यक्ष स्वरूप न होते हुए भी वह कानून व्यवस्था से अधिक प्रभावी मानी जाती है।

5933. समाज व्यवस्था की पहली इकाई परिवार और दूसरी गांव मानी गई है, जो बढ़ते-बढ़ते विश्व तक चली जाती है। पंचायत में निपटारा किसी इकाई का इकाईगत मामला है, जिसमें कोई अन्य इकाई को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। समाज व्यवस्था की पहली इकाई परिवार को माना गया है। कोई अपील होने पर ऊपर की इकाई विचार करके निर्णय दे सकती है।

5934. जनहित के अन्य मामलों में शासन का हस्तक्षेप तब तक स्वाभाविक अधिकार नहीं, जब तक समाज की निचली इकाइयां शासन से वैसा कोई विशेष निवेदन न करे।

5935. समाज ने किसी सम्पूर्ण व्यवस्था को अपना भाग्य विधाता चुना है, व्यवस्था की किसी एक इकाई को नहीं। यदि किसी एक इकाई की कमजोरी से अपराधी छूटता है, तो यह सम्पूर्ण व्यवस्था की आस्था पर संकट आयेगा, एक इकाई पर नहीं।

5936. इकाइयों में अन्य इकाइयों के हस्तक्षेप समाप्त करने के लिए यह प्रावधान किया जाना चाहिए कि व्यक्ति, परिवार, गांव, जिला, प्रान्त तथा राष्ट्र अपनी अपनी चुनाव पद्धति तथा कार्य प्रणाली स्वयं तय करे।

5937. समाज एक अदृश्य इकाई है, जिसमें दुनिया के सभी व्यक्ति समान रुप से शामिल होते हैं, चाहे वे कहीं के नागरिक हों या न भी हों। समाज की व्यवस्था करने वाले वर्ग को सरकार कहते हैं। समाज शब्द पूरे विश्व का प्रतिनिधित्व करता है। अतः सरकार भी पूरे

विश्व की एक ही होनी चाहिए। संपूर्ण विश्व का समाज एक होता है। समाज राष्ट्रों या समूहों का संघ नहीं हो सकता। समाज सिर्फ व्यक्तियों का समूह होता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति के मौलिक अधिकार समान होते हैं।

5938. समाज एक सार्वभौम और सम्पूर्ण इकाई है और राष्ट्र समाज का अंग। सरकार, समाज के अंग राष्ट्र की व्यवस्थापिका इकाई है। राजनीति, अर्थव्यवस्था, श्रम व्यवस्था, समाज के सहायक होते है।

5939. समाज में दो प्रकार के वर्ग बन गये हैं। एक बंद समाज का समर्थक है तो दूसरा खुले समाज का। हिंदुत्व खुला समाज का उदाहरण है और इस्लाम बंद समाज का।

5940. व्यवस्था की तीन इकाइयां मानी जाती है – (1) सचल, (2) आंशिक अचल, (3) अचल। सचल इकाई उसे कहते हैं, जिसका कोई भी सदस्य बिना उस इकाई की सहमति या अनुमति के बाहर निकल सकता है या निकाला जा सकता है। परिवार समाज की सचल इकाई है, गांव और देश आंशिक अचल है। समाज एक अचल इकाई है।

5941. समाज व्यवस्था की अन्तिम इकाई है। समाज एक अमूर्त संगठन है। स्वयं विकसित दीर्घकालिक नियम पालन से प्रतिबद्ध व्यक्तियों के समूह को समाज कहते हैं। समाज विरोधी घोषित व्यक्तियों को छोड़कर विश्व के सभी व्यक्ति समाज के अंग होते हैं। समाज की एक अन्य परिभाषा अधिक मान्य है, जिसके अनुसार सर्व व्यक्ति समूह को समाज कहते हैं। वर्तमान समय में मैं दूसरी परिभाषा को अधिक ठीक मानता हूं। किसी मौलिक इकाई की समीक्षा गुण दोषों के आधार पर पूरी तरह की जा सकती है। व्यक्ति और समाज मौलिक इकाइयां मानी जाती है।

595 मूल इकाई

5950. आदर्श स्थिति में व्यक्ति और समाज को मौलिक इकाई माना जाता है। न तो व्यक्ति से नीचे कोई इकाई है, न ही समाज से ऊपर। परिवार, गांव, जिला, प्रदेश और देश व्यवस्था की इकाइयां है। किसी भी इकाई में सम्मिलित होने के लिए उस इकाई की सहमति आवश्यक है, चाहे वह इकाई परिवार हो, गांव हो अथवा देश। व्यक्ति के कभी किसी भी परिस्थिति में भाग नहीं किये जा सकते तथा समाज हमेशा बहुवचन होता है, एक वचन नहीं। समाज का बहुवचन नहीं हो सकता। व्यक्ति एक प्रत्यक्ष इकाई है, तो समाज अप्रत्यक्ष।

5951. किसी भी इकाई को अपने पास अधिकार केन्द्रित करना तात्कालिक रुप से भले ही अच्छा हो, किन्तु दीर्घकालिक रुप से घातक है। जो इकाई संविधान के अन्तर्गत काम करने के लिए बाध्य है, उसे संविधान की व्याख्या या समीक्षा करने के स्वतंत्र और असीमित अधिकार नहीं हो सकते।

596 प्रकृति के रहस्य

5960. प्रकृति के रहस्य असीम हैं, प्रकृति के अनसुलझे रहस्यों को भूत और सुलझ गये रहस्यों को विज्ञान कहते है। पुराने रहस्यों पर विज्ञान पर्दा उठाता है, तो नये रहस्य उसके सामने आ जाते हैं।

❒

3

धार्मिक

600 धर्म

6000. हिन्दू व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण को धर्म मानता है और इस्लाम संगठन से मिलने वाली ताकत को धर्म मानता है। इसलिए हिन्दू धर्म अपने अनुयायियों से चरित्र की, इसाई धर्म त्याग की और इस्लाम संगठन की अपेक्षा करता है। तीनों धर्मों में ही आचरण को भरपूर मान्यता है, किन्तु सिर्फ प्राथमिकताओं का अन्तर है। हिन्दू धर्म आचरण को सर्वोच्च प्राथमिकता देता है।

6001. धर्म हमेशा गुण प्रधान होता है, उपासना या संगठन प्रधान नहीं। समाज की मान्यताएं और व्यवस्थाएं परिवर्तनशील होती हैं किन्तु धर्म की नहीं। विशेषकर उस समय, जब धर्म गुण प्रधानता से हटकर कर्मकांड प्रधान हो जाये।

6002. धर्म, राष्ट्र और समाज बिल्कुल पृथक-पृथक अर्थ रखते हैं। हिन्दू का राष्ट्रीयता से कोई संबंध है ही नहीं। धर्म व्यक्ति को कर्त्तव्य की प्रेरणा देता है। इसका सामान्यकाल में अच्छा और आपत्तिकाल

में विपरीत प्रभाव होता है। आपातकालीन धर्म का हस्तक्षेप अल्पकालिक तथा विशेष प्रयोजन तक के लिए होता है। प्रयोजन पूरा होते ही धर्म अपने क्षेत्र में वापस हो जाता है। अब धर्म कर्तव्य प्रधान की जगह अधिकार प्रधान बन रहा है।

6003. व्यक्ति के दूसरों के प्रति किये गये कर्तव्यों को धर्म कहते हैं। धर्म का कभी सांगठनिक स्वरूप नहीं रहा। समाज का ढांचा बिल्कुल भिन्न होता है। समाज का एक संगठित स्वरूप होता है और उसका अनुशासन भी होता है, किन्तु धर्म में यह सब गुण नहीं होते। धर्म की व्यवस्थाएं कुछ लोगों के जीवनयापन के साथ जुड़ गई हैं। अतः धर्म की अपने अनुकूल व्याख्या करना उनकी मजबूरी भी है।

6004. धर्म की व्यक्तिगत आचरण की वैदिक परिभाषा में विकृति आनी शुरू हुई। ऐसे समय में कार्ल मार्क्स ने महसूस किया कि यदि हिंसा, संगठन और सत्ता को एक साथ जोड़ दिया जावे तो सारी दुनिया को गुलाम बनाया जा सकता है। उन्होंने समझा कि धर्म शब्द इस योजना में बाधक होगा। अतः उन्होंने हिंसा, संगठन और राज्य को एक साथ जोड़कर धर्म को अफीम घोषित कर दिया।

6005. भारत में ढाई हजार वर्ष पूर्व के मार्ग से लेकर बाद में हुए सभी परिवर्तनों के प्रयोग हुए। जैन और बौद्ध तो भारत में रहे ही, इस्लाम की तलवार और इसाइयत की करूणा ने भी भारत पर कई सौ वर्षों तक शासन किया। अर्ध साम्यवादी नेहरू जी ने भी छिपे रूप में सारा जोर लगा लिया, किन्तु ये सब मिलकर भी हिन्दुत्व को भारत से समाप्त नहीं कर सके, क्योंकि भारत एकमात्र ऐसी व्यवस्था से प्रेरित है, जिसमें धर्म, सामाज और राज्य का बिल्कुल अलग-अलग अस्तित्व है। तीनों का अलग-अलग कार्य क्षेत्र है तथा

अलग-अलग सीमाएं भी हैं। न कभी संगठन को धर्म का आधार बनाया गया, न ही समाज व्यवस्था का आधार। समाज में हिंसा का समर्थन तो सामाजिक आपातकाल को छोड़कर पूरी तरह निषिद्ध ही था।

6006. धर्म का आधुनिक स्वरूप हिन्दुत्व को नहीं बदल सका। मूर्ति-पूजा, अन्धविश्वास सरीखे अवैज्ञानिक पुरातन पंथी विचार हिन्दुओं को छोड़ने चाहिए थे, किन्तु वह पारंपरिक धार्मिक विचारों से इस सीमा तक चिपका रहा कि उसने धर्म में आधुनिक हानिकर विचारों के साथ-साथ लाभदायक आधुनिक विचारों की भी राह नहीं पकड़ी।

6007. स्वतंत्रता के बाद लगातार सिखों ने अपने को सम्पूर्ण समाज का अंग न मानकर हमेशा असंतोष ही व्यक्त किया। धर्म यदि संस्था का स्वरूप छोड़कर संगठन का रूप लेने लगता है, तब ऐसे दुष्परिणाम स्वाभाविक हैं। सन् 1984 के हत्याकांड के बाद भी सिख लोग हत्याकांड के कारणों पर विचार न करके सिर्फ अपराधियों को दंडित कराने का प्रयत्न करें, तो यह उनकी भूल है। सबसे पहले तो उन्हें अपना संगठनात्मक स्वरूप भंग करना चाहिए। प्रत्येक सिख धार्मिक मान्यता तक ही सिख है, किन्तु सामाजिक आधार पर सम्पूर्ण समाज के सुख-दु:ख में बराबर का भागीदार है, संगठन के रूप में नहीं।

6008. धर्म व्यक्ति को अच्छे कार्यों के लिए प्रेरित करता है, समाज व्यक्ति को अनुशासित करता है तथा राज्य शासित। धर्म व्यक्तिगत आचरण तक सीमित होता है, तो संस्कृति सामूहिक आचरण तक। धर्म में विचार अधिक होता है, भावना कम, किन्तु संस्कृति भावनात्मक ही अधिक होती है।

6009. फ्रांस या म्यांमार में घटी घटना में भारत के मुसलमानों और भारत में दिखाई गई फिल्म पीके में भारत के हिन्दुओं की भूमिका यह फर्क करने के लिए पर्याप्त है कि इस्लाम अपने आचरण से सम्प्रदाय की दिशा में बढ़ रहा है और हिन्दुत्व अपने आचरण से धर्म की ओर।

6010. जो धर्म वैचारिक धरातल पर दूसरे धर्मों से प्रतिस्पर्धा नहीं करता और न ही भौतिक धरातल पर कर सकता, वह धर्म नहीं, संगठन है। इस मामले में हिन्दुत्व सबसे ऊपर और इस्लाम सबसे कमजोर है।

6011. सभी धर्मों के मूल में मानव मात्र की एकता के सूत्र खोजे जा सकते हैं, किन्तु सभी धर्मों के बीच टकराव के भी सूत्र कम नहीं होते। यदि ऐसे टकराव के सूत्र एकता के सूत्र की अपेक्षा अधिक नहीं होते, तो आज धर्म के नाम पर हो रहे टकराव इतने व्यापक नहीं होते।

6012. धर्म के दो स्वरुप होते हैं – (1) गुण प्रधान, (2) पहचान प्रधान। गुण प्रधान धर्म व्यक्तिगत आचरण तक सीमित होता है, कर्तव्य प्रधान होता है, संस्थागत चरित्र होता है। जबकि पहचान प्रधान धर्म संख्या की छीना-झपटी में लगा रहता है, अधिकार प्रधान होता है, संगठन प्रिय होता है। हमें गुण प्रधान धर्म की प्रशंसा करनी चाहिए और पहचान प्रधान धर्म की आलोचना। प्रशंसा भी दो आधारों पर होती है – (1) सिद्धांत रुप में, (2) तात्कालिक नीतियों के अन्तर्गत। हिन्दुत्व गुण प्रधान धर्म की श्रेणी में आता है और इस्लाम पहचान प्रधान श्रेणी में।

601 धर्मनिरपेक्षता

6013. स्वतंत्रता के बाद भारत में धर्मनिरपेक्ष व्यक्तियों की विश्वसनीयता संदिग्ध रही है। अधिकांश धर्मनिरपेक्ष, व्यक्तियों तथा संगठनों

ने हिन्दू साम्प्रदायिकता का विरोध किया, किन्तु मुस्लिम साम्प्रदायिकता का समर्थन किया या मौन रहे। आज असम या बंगाल में मुस्लिम आबादी बढ़ाने का षडयंत्र एक नये विभाजन की स्थिति का भय पैदा करता है। धर्मनिरपेक्ष लोग इसके प्रति मौन रहते हैं।

6014. ईसाई चर्च और ईसाई व्यक्ति के बीच ईसाई राज्य रहा है, जिसने संगठित चर्च के दबदबे से इसाई व्यक्ति के स्वतंत्र रहने के अधिकार की गारंटी दी। उसने कभी विभिन्न धर्म-विश्वासों की समानता को मान्यता नहीं दी। अमेरिका या ब्रिटेन सेकुलर राज्य हैं, किन्तु वे अपने ईसाई मिशनरी संगठनों को एशिया, अफ्रीका में आक्रामक अभियान चलाने के लिए आर्थिक, कूटनीतिक सहायता नियमित देते हैं। ये राज्य सेकुलर रहकर भी हिन्दुओं के विरूद्ध अब्राहमी मतावलंबियों के खुले आक्रमण का मूक दर्शक रहा। वह छद्म सेकुलर होकर आक्रमणकारियों को राजनीतिक, आर्थिक, वैचारिक सहायता पहुँचाने वाले राज्य हो गये हैं। वे अपने देश में तो सेकुलर है, किन्तु अन्य देशों में अप्रत्यक्ष रूप से अपने धर्म के पक्ष में रहते हैं।

6015. वर्तमान समय में धर्म का शब्दार्थ है गुणप्रधान और भावार्थ है पहचान प्रधान। गुणप्रधान धर्म राजनीतिक धारणा को न अपनायेगा न उसे संरक्षण देगा। धर्म को सामाजिक, लौकिक जीवन में हस्तक्षेप करने से रोकेगा और खुद किसी व्यक्ति के धार्मिक विश्वासों में दखल नहीं देगा। वास्तव में धर्म के सांगठनिक स्वरूप को पंथ या सम्प्रदाय कहा जाना चाहिए था।

6016. धर्म के विस्तार के तीन मार्ग पाये जाते हैं - (1) विचार-प्रसार, (2)

लोभ-लालच, (3) छल-कपट या शक्ति। विचार-प्रसार द्वारा धर्म-प्रचार आदर्श स्थिति है, जिसमें धर्मनिरपेक्षता उचित है। इसलिए भारत को पूरी तरह धर्मनिरपेक्ष ही होना चाहिए।

6017. धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद भारत की समस्याओं की वृद्धि के मूल आधार बने। धर्मनिरपेक्षता समाज का विषय है, राज्य का नहीं। राज्य को चाहिए था कि वह व्यक्ति को इकाई मानकर स्वयं को धार्मिक मामलों से दूर कर लेता। किन्तु धर्मनिरपेक्षता के चक्कर में मुस्लिम राजनेताओं के एक गुट ने मुस्लिम साम्प्रदायिकता का लगातार समर्थन किया और दूसरे गुट ने हिन्दू साम्प्रदायिकता का। नकली धर्मनिरपेक्षता के चक्कर में भारत साम्प्रदायिक संघर्ष में फंस गया।

6018. समाज में वर्तमान धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, गरीब-अमीर, उत्पादक-उपभोक्ता जैसे विषयों पर आधारित संगठन कमजोर होकर परिवार, गांव, जिला, प्रदेश-देश और विश्व जैसे संगठन मजबूत होना चाहिए।

6019. धर्मनिरपेक्ष हिन्दुओं का भी कर्तव्य है कि वे सावरकरवादियों को साम्प्रदायिक आधार पर शक्तिशाली न होने दें तथा धर्मनिरपेक्ष मुसलमानों का भी कर्तव्य है कि वे साम्प्रदायिक मुसलमानों के हाथों का खिलौना न बने। यदि इस्लाम के संगठनवादी अन्यायों का समाज में ऐसा ही व्यवहार रहा तो समाज में धर्मनिरपेक्षता का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा।

6020. धर्मनिरपेक्षता किसी धर्म के लेबल लगने से नहीं आती और न ही किसी लेबल के हटने से आती है। चाहे किसी भी धर्म का व्यक्ति हो, यदि वह दूसरे धर्म की स्वतंत्रता में बाधक नहीं तो उसे धर्मनिरपेक्ष

माना जा सकता है, भले ही वह कितना ही धार्मिक कट्टर क्यों न हो। सच्चाई यह है कि स्थाई समाधान तो धर्मनिरपेक्षता ही है और यदि धर्मनिरपेक्षता की पहल मुसलमानों की ओर से शुरु हो जाये, तो यह सर्वश्रेष्ठ समाधान हो सकता है।

6021. यदि हम लोग नीति की बात करें, तो कांग्रेस पार्टी अघोषित रूप से तुष्टीकरण की राह पर चल रही है। और सावरकरवाद अपने जन्म से ही साम्प्रदायिक तुष्टीकरण की नीति को आधार बनाकर काम करता है। इस तरह यदि धर्मनिरपेक्षता और साम्प्रदायिकता के बीच तुलना की जाए तो दोनों ही दल खरे नहीं उतरते हैं। धर्मनिरपेक्षता संबंधी पुरानी यथा स्थितिवादी घिसी-पिटी लाइन में आमूलचूल बदलाव लाकर परिवर्तनवादी धर्मनिरपेक्ष लाइन पकड़ने की जरूरत है। जिस दिन सावरकरवादियों के साथ-साथ कट्टरवादी मुसलमान भी आपका डटकर विरोध करना शुरू कर दें, तो आप मान लें कि अब खतरा टल रहा है।

6022. भारत में स्वतंत्रता के तत्काल बाद से ही तथाकथित धर्मनिरपेक्ष दल मुसलमानों की तुलना में आम हिन्दुओं को दूसरे दर्जे के नागरिक सरीखा व्यवहार करते थे। मैं अब तक यह नहीं समझ सका कि यदि बहुसंख्यक के वर्चस्व से भारत में जनतंत्र को खतरा है, तो क्या अल्पसंख्यक के वर्चस्व से जनतंत्र खत्म नहीं होता क्यों?

6023. धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र में बहुमत अल्पमत के अधिकारों पर आक्रमण न करने लगे, इसके लिए अल्पमत को कुछ सुरक्षात्मक प्रावधान अलग से दिये जाते हैं। इन्हें विशेषाधिकार कहते हैं। किन्तु जिस देश में लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता होती है, वहां कोई अल्पमत

नहीं होता। बल्कि प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार होते हैं। इसलिए भारत में अल्पमत को विशेष अधिकार उचित नहीं है।

6024. यदि धर्म का अर्थ गुण प्रधान है, तो कोई भी राजनीतिक व्यवस्था धर्मनिरपेक्ष नहीं हो सकती। किन्तु यदि धर्म का अर्थ साम्प्रदायिक संगठन से जुड़ा हो, पूजा-पद्धति अथवा किसी संस्कृति को आधार मानता हो तो उस आधार पर राज्य व्यवस्था को पूरी तरह ही धर्मनिरपेक्ष होना चाहिए। धर्म के दोनों विपरीत अर्थ यह निष्कर्ष नहीं निकलने देते कि राज्य को धर्मप्रधान होना चाहिए अथवा धर्मनिरपेक्ष।

6025. धर्मनिरपेक्षता के दो रूप दिख रहे हैं – (1) संघ परिवार का, जो मुस्लिम साम्प्रदायिकता के विरोध को ही धर्मनिरपेक्षता समझता है। (2) संघ रहित शेष लोग, जो संघ विरोध को ही धर्मनिरपेक्षता मानकर अपनी योजना बना रहे हैं। इसलिए अब नकली धर्म निरपेक्षता का कांग्रेस कम्युनिस्ट मुखौटा उतारकर वास्तविक धर्म निरपेक्षता को आगे करने की जरूरत है।

6026. भारत और पाकिस्तान के मुसलमानों के पूर्वज हिन्दू होने के कारण उनमें धर्मनिरपेक्षता समझाना अधिक आसान है, लेकिन यदि बहुत लम्बा समय बीत गया, तो उनके कट्टरवादी संस्कार अधिक मजबूत हो जायेंगे।

602 दर्शन और धर्म

6026. दर्शन और धर्म के बीच गंभीर अंतर-विरोध है। धर्म जहां बुद्धि के बजाय भावना पर बल देता है, साम्प्रदायिक निष्ठा की मांग करता है। वहां दर्शन बुद्धि पर बल देता है, मानवीय चेतना को स्वतंत्र चिन्तन की दिशा में ले जाता है।

603 समाज और धर्म

6030. भारतीय समाज व्यवस्था चार प्रकार के संतुलन का परिणाम है– (1) बुद्धि अर्थात् ब्राम्हण, (2) शक्ति अर्थात् क्षत्रीय, (3) धन अर्थात् वैश्य, (4) श्रम अर्थात् शूद्र। समाज की मान्यताएं और व्यवस्थाएं परिवर्तनशील होती हैं, किन्तु धर्म की नहीं। विशेषकर उस समय, जब धर्म गुण प्रधानता से हटकर कर्मकांड प्रधान हो जाये।

6031. समाज का स्थान परजीवी या भीड़ तथा प्राकृतिक न्याय का स्थान कानून ले ले, तब परिस्थिति अनुसार मानवता की परिभाषाएं बदलना मजबूरी हो जाया करती है।

6032. समाज में शराफत कमजोर हो रही है। चालाक, धूर्त, अपराधी का मनोबल बढ़ रहा है और शरीफ, सीधे, समझदार का मनोबल घट रहा है। शिक्षा बढ़ रही है और ज्ञान घट रहा है। भौतिक उन्नति हो रही है और चरित्र नीचे जा रहा है। अधिकांश धर्म गुरू स्वयं तो प्रपंच करके अथाह धन संग्रह में जुटे हैं, तो दूसरी ओर समाज को चरित्र-निर्माण का उपदेश दिन-रात दे रहे हैं, जिसका एक ही अर्थ है कि धक्का देने वालों का मार्ग छोड़ देना ही धर्म है। दूसरी ओर भारत का हर नेता अपने लोगों को तो अधिकारों की शिक्षा दे रहा है, जबकि शेष समाज को कर्तव्य का मार्ग बता रहा है। यह परिस्थिति घातक है।

6033. हिन्दू कुछ अंशों में ही धर्म है। हिन्दू वास्तव में समाज है, जिसमें अनेक धर्मों के लोग सम्मिलित हैं। साम्प्रदायिकता में हिन्दू समाज का लेश मात्र का भी योगदान नहीं है। इसके विपरीत सच्चाई यह है कि हिन्दुओं की सहनशक्ति और सामाजिक भावना कुछ हद तक

साम्प्रदायिक शक्तियों का मनोबल बढ़ाने में दोषी कही जा सकती है।

6034. मुसलमान राजनीति से अपना धार्मिक उद्देश्य पूरा करना चाहते हैं तथा सावरकरवादी धर्म से अपना राजनैतिक उद्देश्य को पूरा करना चहता है। मुसलमान अपने संगठित वोटों के आधार पर राजनैतिक दलों को अपने इशारे पर नचाता रहता है तथा सावरकरवादी मुसलमानों का नाम लेकर अपना वोट बैंक मजबूत करता रहता है।

6035. हिन्दुओं की सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए हिन्दू कोड बिल को भले ही लागू किया जाय, किन्तु मुसलमानों की आन्तरिक बुराइयों में हस्तक्षेप उनके धर्म का उल्लंघन है। धर्मनिरपेक्षता के इस अतिवादी तथा एक पक्षीय सोच ने इन सब धर्मनिरपेक्षों को हिन्दू समाज में अविश्वसनीय बना दिया। भारत में धर्मनिरपेक्षता का अस्तित्व खतरे में है। यदि भारत का आम हिन्दू साम्प्रदायिक हो गया, तो भविष्य में धर्मनिरपेक्षता किसके सहारे जीवित रहेगी?

6036. साम्प्रदायिकता को कुचला जा सकता है, किन्तु संतुष्ट नहीं किया जा सकता। महात्मा गांधी सरीखे महापुरुष भी मुस्लिम साम्प्रदायिकता को न संतुष्ट कर सके, न ही समझौता। अंत में मुस्लिम साम्प्रदायिकता ने भारत विभाजन कराकर ही दम लिया।

6037. साम्प्रदायिक तत्वों के झगड़े में मैं किसी एक का पक्ष लेकर धर्मनिरपेक्ष होने का अपना अहं तुष्ट नहीं कर सकता था और वास्तविक धर्मनिरपेक्षता का गुजरात में कोई अस्तित्व नहीं था। इसलिए 2002 में गोधरा नरसंहार में मैंने नरेन्द्र मोदी का खुलकर समर्थन किया था। मैंने उसी समय घोषित किया था की नरेन्द्र मोदी को भारत का प्रधानमंत्री बनना चाहिए।

6038. शासन के समक्ष कोई अल्पसंख्यक हो ही नहीं सकता। ये सभी समस्याएं यद्यपि काल्पनिक तथा अस्तित्वहीन हैं, किन्तु इनका लगातार सर्वोच्च प्राथमिकता के आधार पर समाधान हो रहा है, जबकि अस्तित्वहीन होने से सभी समाधान भी हवा में लाठी चलाने के समान है।

6039. कांग्रेस पार्टी सत्तर वर्षों से मुस्लिम तुष्टीकरण तथा भारतीय जनता पार्टी का संघ सावरकरवाद समर्थित खेमा, जो संघ में मजबूत है, हिन्दू तुष्टीकरण को ही आधार बनाकर चल रहा है। नरेन्द्र मोदी, मोहन भागवत बहुत अच्छा संतुलन बनाकर चल रहे हैं।

6040. हमने समाज को धर्म और राज्य से अलग और ऊपर माना। स्वतंत्रता के पूर्व से ही गांधी जी इसी मार्ग की कल्पना कर रहे थे, किन्तु राज्य की भूख ने धर्म के नाम पर गांधी को रास्ते से हटा दिया और लोकस्वराज्य की अवधारणा आधे रास्ते ही भटक गई।

605 सम्प्रदाय और धर्म

6050. धर्म की अनेक परिभाषाएं हैं। मेरी मान्यता है कि किसी अन्य के हित में किया गया निःस्वार्थ कार्य धर्म होता है। धर्म का संबंध कर्तव्य तक सीमित है। समाज का उचित मार्गदर्शन करने वाली प्रणाली भी धर्म कही जाती है। धर्म व्यक्तिगत होता है, सामूहिक नहीं। धर्म का उपासना से कोई संबंध नहीं है। धर्म के दस लक्षणों में भी ईश्वर या पूजा शामिल नहीं है। किसी उपासना पद्धति के आधार पर बने संगठन को सम्प्रदाय कहते हैं। हिन्दू, विचार और तर्क से बढ़ा है, ईसाई, प्रेम और सेवा से तथा इस्लाम, संगठन शक्ति से। कुछ कट्टरवादी हिन्दू संगठनों को यदि अलग कर दें, तो हिन्दू मूल रूप से कट्टर नहीं होता, ईसाइयत में कैथोलिकों का वर्तमान

स्वरूप कुछ कट्टरवाद की तरफ झुका हुआ है। दुनिया में मुसलमान धार्मिक मामलों में सर्वाधिक असहिष्णु और कट्टर होता है।

6051. धर्म गुण-प्रधान जीवन-पद्धति है तो सम्प्रदाय संख्या विस्तार प्रधान संगठन होता है। साम्प्रदायिक संगठन एक-दूसरे के पूरक होते हैं। हिन्दू साम्प्रदायिकता मुस्लिम साम्प्रदायिकता को तथा मुस्लिम साम्प्रदायिकता हिन्दू साम्प्रदायिकता को बढ़ती है।

6052. साम्प्रदायिक हिन्दू और साम्प्रदायिक मुसलमान दो विपरीत ध्रुवों पर खड़े होकर एक-दूसरे पर आक्रमण करते हैं। बीच में शान्ति प्रिय लोग रहते हैं, जो इनके आक्रमण में मारे जाते हैं। किसी भी साम्प्रदायिक दंगे में न कट्टरवादी हिन्दू मरता है और न ही कट्टरवादी मुसलमान। सारा नुकसान शान्ति प्रिय लोगों का ही होता है। धर्म संकट में है, धर्म की रक्षा करना हमारा प्रथम कर्तव्य है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख सभी धर्म प्रेमियों को एकजुट होकर अधर्म के विरूद्ध संघर्ष शुरू कर देना चाहिए।

6053. रूढ़िवादिता हमारे स्वतंत्र चिन्तन को एक पक्षीय प्रभावित करती है। चाहे वह रूढ़िवाद धार्मिक हो या राजनीतिक। जब समाज पर समाज-विरोधी तत्वों का खतरा मंडरा रहा हो, तब मंदिर, मस्जिद, आरक्षण अथवा राष्ट्र भाषा जैसे मुद्दे उठाना प्राथमिकता की दृष्टि से गलत कार्य है।

6054. बनारस के मंदिर को देखकर यह आभास होता है कि मुसलमानों ने अनेक मंदिरों को तोड़कर मस्जिदें बनवाई होंगी।

6055. आध्यात्म, धर्म, समाज और राज्य के संतुलित समन्वय से व्यवस्था बनती है। किसी एक का कमजोर या मजबूत होना अव्यवस्था को बढ़ता है। (क) आध्यात्म व्यक्ति को आत्म केन्द्रित तथा चिन्तन

प्रधान बनाता है। (ख) धर्म दूसरों के प्रति कर्तव्य की प्रेरणा देता है। (ग) समाज अनुशासित करता है। (घ) राज्य शासित एवं नियंत्रित करता है।

6056. दुनिया में जिस शब्द को अधिक प्रतिष्ठा मिलती है, उस शब्द की नकल करके उसका वास्तविक अर्थ विकृत करने की परंपरा रही है। धर्म शब्द के साथ भी यही हुआ है। अनेक धूर्त गेरुआ वस्त्र पहनकर राजनीति, व्यापार और यहां तक की अनेक अपराध भी कर रहे हैं।

6057. धर्म जीवन-पद्धति है और सम्प्रदाय संख्या विस्तार। धर्म न्याय प्रधान होता है, तो सम्प्रदाय अपनत्व प्रधान। धर्म का चरित्र संस्थात्मक होता है, तो सम्प्रदाय का संगठनात्मक। धर्म कर्तव्य प्रधान होता है, तो सम्प्रदाय अधिकार प्रधान, धर्म समाज व्यवस्था का सहयोगी होता है और सम्प्रदाय समाज का सहभागी। धर्म किसी विचार अथवा धर्मग्रंथ को अंतिम सत्य नहीं मानता, इसमें देश-काल परिस्थिति के अनुसार संशोधन सम्भव है। सम्प्रदाय में संशोधन सम्भव नहीं है। धर्म का न कोई प्रारम्भकर्ता होता है, न कोई प्रारम्भिक समय। धर्म शाश्वत है। सम्प्रदाय किसी व्यक्ति अथवा किसी धर्मग्रंथ द्वारा किसी खास समय से शुरू होता है। धर्म, व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को मान्यता देता है, सम्प्रदाय ऐसी मान्यता नहीं देता। सम्प्रदाय व्यक्ति को अपनी संगठनात्मक सम्पत्ति मानता है। धर्म में अनुशासन अनिवार्य नहीं है और विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। सम्प्रदाय में अनुशासन अनिवार्य है लेकिन वैचारिक स्वतंत्रता अनिवार्य नहीं है। धर्म समाज को सर्वोच्च मानता है और राज्य का मार्गदर्शन करता है। सम्प्रदाय संगठन को सर्वोच्च मानता

है और राज्य पर नियंत्रण करता है। धर्म का मूल स्रोत दर्शन है, तो सम्प्रदाय का संस्कृति। हिन्दू धर्म अधिकांश अवसरों पर आज भी दर्शन को महत्व देता है, तो इस्लाम में दर्शन को महत्व देने वाले सूफी लगातार कमजोर किये जा रहे हैं। ईसाइयत में लगभग बीच की स्थिति है। धर्म में आस्था पर विज्ञान भारी होता है। परिस्थिति अनुसार आस्था में संशोधन सम्भव है। सम्प्रदाय में आस्था, विज्ञान पर भारी होती है और आस्था में संशोधन सम्भव नहीं होता है।

6058. धर्म के नाम पर सम्प्रदायों ने पूरी दुनिया में जितनी हिंसा और अत्याचार किये हैं, उतना अपराधियों ने भी नहीं किये।

6059. धार्मिक एकीकरण किसी भी सामाजिक समस्या का समाधान नहीं है। भारत के सभी लोग हिन्दू, मुसलमान या ईसाई होकर किसी एक ही धर्म के हो जायें, तब भी चोरी, डकैती, बलात्कार, आतंकवाद, मिलावट आदि में से किसी समस्या का कोई समाधान सम्भव नहीं है। धर्म संकट में है। धर्म की रक्षा करना हमारा प्रथम कर्तव्य है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख सभी धर्म प्रेमियों को एकजुट होकर अधर्म के विरूद्ध संघर्ष शुरू कर देना चाहिए। यदि भगवान राम का पृथ्वी पर अवतरण हो जाये, तो वे सर्वप्रथम आसुरी शक्तियों से संघर्ष शुरू कर देंगे, चाहे ऐसे तत्व किसी भी धर्म (सम्प्रदाय) के हों।

6060. यह पूरी दुनिया के लिए आश्चर्यजनक विषय है कि भारत का बहुसंख्यक जन समुदाय तो समान नागरिक संहिता की बात करे और अल्पसंख्यक धर्म परिवर्तन की छूट की बात करे। पूरे विश्व में इसके विपरीत होता है।

6061. धार्मिक आधार पर चार सम्प्रदाय होते हैं - (1) जो मान्यता में

कट्टरवादी हैं तथा आचरण में भी कट्टरवादी हैं और दूसरों के मूल अधिकारों का हनन करते हैं। (2) जो मान्यता में शांतिप्रिय हैं और आचरण में कट्टरवादी। (3) जो मान्यता में कट्टरवादी हैं परन्तु आचरण में शांतिप्रिय। (4) जो मान्यता तथा आचरण दोनों में शान्तिप्रिय हैं। कट्टरवादी मुसलमान पहली श्रेणी में, कट्टरवादी हिन्दू दूसरी श्रेणी में, शांतिप्रिय मुसलमान तीसरी श्रेणी में और शांतिप्रिय हिन्दू चौथी श्रेणी में आते हैं। हमें पहली श्रेणी को तत्काल नष्ट कर देना चाहिए तथा दूसरी को भी नियंत्रित करने का प्रयास करना चाहिए। तीसरी श्रेणी का हृदय परिवर्तन और चौथी श्रेणी का अनुकरण उपयुक्त मार्ग है। वर्तमान स्थितियों में पहली और दूसरी श्रेणी के विरूद्ध तीसरी और चौथी श्रेणी को एकजुट हो जाना चाहिए। कट्टरवादी हिन्दू और कट्टरवादी मुसलमान ऐसा ध्रुवीकरण पसन्द नहीं करेंगे।

6062. वर्तमान दुनिया में इस्लाम सर्वाधिक खतरनाक सम्प्रदाय के रूप में चिन्हित हो रहा है। सूफी सरीखे धार्मिक मान्यता वाले संत किनारे किये जा रहे हैं। इस्लाम की धार्मिक पांच प्रतिबद्धताओं तौहीद, रोजा, हज, नमाज और जकात की जगह विवादास्पद साम्प्रदायिक प्राथमिकताएं मजबूत हो रही हैं।

6063. कोई भी धर्म राजनैतिक सत्ता से निरपेक्ष होता है और कोई भी सम्प्रदाय कभी सत्ता निरपेक्ष नहीं रह सकता। धर्म राजनैतिक सत्ता के मार्गदर्शन तक सीमित रहता है, जबकि सम्प्रदाय राजनैतिक सत्ता को निर्देशित करता है।

6064. अब तक हिन्दू पहचान प्रधान धर्म को सम्प्रदाय ही मानता था और यदि कोई अन्य सम्प्रदाय का व्यक्ति भी गुणप्रधान है, तो

उसे अलग नहीं मानता था। यदि हमें कोई लाभ भी न हो और हमारी पहचान भी गिरने लगे, तो अन्य सम्प्रदायों की देखादेखी आत्मसंतोष के लिए अपना स्तर नीचे गिराना कोई बुद्धिमानी नहीं है। हिन्दुओं को इस मामले में विशेष सावधानी रखनी चाहिए।

6065. धर्म की व्याख्या बहुत कठिन है। धर्म के अनेक अर्थ हैं। धर्म के अर्थ परम्परागत भी होते हैं और शास्त्र सम्मत भी। धर्म का अर्थ व्यक्तिगत, पारिवारिक या राष्ट्र के लिए किये जाने वाले कर्तव्य से भी जुड़ सकता है तो सम्पूर्ण मानव समाज से भी। धर्म वर्ण आश्रम व्यवस्था के परिपालन से भी जुड़ सकता है। यही कारण है कि धर्म का कोई निश्चित अर्थ नहीं निकल पाता और सम्प्रदाय भी धर्म शब्द के साथ स्वयं को जोड़ने में सफल हो जाता है।

6066. पिछले तीन हजार वर्षों की समीक्षा करें तो दो ही धर्म सनातन दिखते हैं- पहला आर्य सनातन हिन्दू जीवन-पद्धति दूसरा, पाश्चात्य व यहूदी जीवन-पद्धति। हिन्दू जीवन पद्धति से कुछ संगठन निकलकर तेजी से बढ़े, जो प्रारम्भ में संगठन रहे, जब उनका विस्तार कई वर्षों तक जारी रहा, तब वे सम्प्रदाय कहे जाने लगे और ऐसे सम्प्रदाय जब कई हजार वर्षों तक विस्तार करते रहे, तो उन्होंने अपने को धर्म कहना शुरू कर दिया। ऐसे सम्प्रदायों में ही जैन, बौद्ध अथवा सिख माने जाते हैं। इसी तरह की प्रक्रिया यहूदियों में भी दोहरायी गयी और कालांतर से उसी तरह ईसाई और इस्लाम नामक सम्प्रदाय धर्म के रूप में आगे आये।

6067. हिन्दू और यहूदी मान्यताएं अलग-अलग प्रवृत्तियों में समन्वय को महत्व देती थी और सम्प्रदाय समन्वय की जगह किसी एक दिशा को अधिक महत्व देने लगे। जैन और बौद्ध ने अहिंसा को

अधिक महत्व दिया, तो सिखों ने हिंसा को, उसी तरह ईसाइयों ने अंहिसा को अधिक महत्व दिया तो इस्लाम ने हिंसा को। इन विपरित विचारधाराओं के वैचारिक टकराव ने हिन्दू और यहूदियों की धार्मिक समन्वय की नीतियों को गंभीर क्षति पहुंचाई। गुण प्रधान धर्म कमजोर होता गया और संगठन प्रधान धर्म मजबूत होता रहा।

6068. धर्म के दस लक्षणों धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इंद्रिय निग्रह, धीर, विद्या, सत्य और अक्रोध में ईश्वर अथवा कोई पूजा-पद्धति शामिल नहीं है। धर्म गुण प्रधान जीवन-पद्धति है, तो सम्प्रदाय संख्या विस्तार प्रधान संगठन होता है।

607 धर्म और राजनीति

6070. धर्म और राजनीति एक-दूसरे के पूरक होते हैं। धर्म हृदय परिवर्तन का कार्य करता है और राजनीति व्यक्ति की उच्छृंखलता पर अंकुश लगाती है। धर्म और राज्य दोनों मिलकर समाज की सहायता करते हैं। धर्म मार्गदर्शन तक सीमित होता है और राजनीति क्रियात्मक स्वरूप में। धर्म सिद्धान्त प्रधान होता है और राजनीति व्यवहार प्रधान। धर्म में नैतिकता प्रमुख होती है, तो राजनीति में कूटनीति प्रमुख होती है।

6071. धर्म के नाम पर तो सिर्फ व्यक्ति ठगे जाते हैं, समाज नहीं। किन्तु राजनीति सम्पूर्ण समाज को ही गुलाम बना लेती है। इसलिए वर्तमान विश्व में राजनीति को सबसे अधिक घातक माना जा रहा है।

6072. धर्म, राष्ट्र और समाज रुपी तीन इकाइयों के संतुलन से व्यवस्था

ठीक चलती है। यदि इन तीनों में से कोई भी एक खींचतान करने लगे, तो अपराध का बढ़ना स्वाभाविक है। धर्म का स्थान सम्प्रदाय ने, राष्ट्र का राज्य ने, और समाज का संगठित वर्गों ने ले लिया है।

6073. न तो सरकार, विवाह, दहेज, छुआछूत, तलाक, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की सीमा, सम्पत्ति की सीमा जैसा कोई कानून बना सकती है, न ही उसे बनाना चाहिए। ऐसे सारे कानून व्यक्ति के व्यक्तिगत और सामाजिक अधिकारों के उल्लंघन के अंतर्गत आते हैं।

608 धार्मिक कट्टरवाद

6080. जब कोई व्यक्ति विचार की अपेक्षा भावनाओं के आधार पर निर्णय करने लगे तथा उसके कार्य उसके संस्कारों से प्रभावित होने लगे, तो उस व्यक्ति को कट्टर कहते हैं, कट्टरवादी नहीं। कट्टरवादी हिन्दू कट्टरवादी मुसलमानों का उदाहरण देकर शांति प्रिय हिन्दुओं को भड़काते हैं, दूसरी ओर कट्टरवादी मुसलमान कट्टरवादी हिन्दुओं के कथन का उदाहरण देकर शान्तिप्रिय मुसलमानों को भड़काते हैं।

6081. कट्टर हिन्दुत्व सर्वधर्म समभाव, वसुधैव कुटुम्बकम, वर्ण आश्रम व्यवस्था से परिभाषित होता है। कट्टर हिन्दू सत्य और न्याय की दिशा में झुका हुआ होता है। वह या तो किसी संगठन से नहीं जुड़ता अथवा जुड़ता भी है तो अपनी पहचान के विपरीत नहीं जाता। कट्टरवादी किसी-न-किसी संगठन से जुड़ जाता है। कट्टरता गुण प्रधान संस्कारों तक सीमित होती है और कट्टरवाद संगठन के साथ जुड़ जाता है। कट्टरता का प्रभाव स्वयं तक सीमित होता है,

जबकि कट्टरवाद का प्रभाव दूसरों पर पड़ता है। कट्टरता विचारों तक सीमित होती है और कट्टरवाद क्रिया के रूप में बदल जाता है।

6082. इस्लाम के प्रति दुनिया भर के शांतिप्रिय लोगों का मोहभंग हो रहा है। इसका अर्थ हुआ कि मुस्लिम देश शांति के लिए खतरा नहीं है, बल्कि इस्लामिक कट्टरवाद ही विश्व शांति के लिए खतरा है। वर्तमान समय में भारत के हिन्दुत्व की सुरक्षा की चिन्ता हमारी पहली प्राथमिकता नहीं है, बल्कि पहली प्राथमिकता है कुछ जेहादी मुसलमानों से संपूर्ण विश्व की विश्वव्यवस्था पर मंडराता खतरा।

6083. देश के सभी अच्छे लोगों को एकजुट होना समय की मांग है। संकीर्णता इस सोच में बहुत बाधक है। सबके बीच संकीर्णता कम हो, यही मार्ग है।

609 हिन्दुत्व

6090. हिन्दुत्व एक समाज व्यवस्था है, जिसमें सभी धर्मों के लोग एक साथ शान्ति और स्वतंत्रतापूर्वक रह सकते हैं।

6091. हिन्दुत्व कभी न धर्म रहा न संगठन। हिन्दुत्व या तो व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण से जुड़ा रहा या समाज व्यवस्था से। हिन्दुत्व में न्याय और तर्क महत्वपूर्ण होता है। जो समाज का गुण है, किन्तु विस्तार और शक्ति में कमजोर होता है, जिसने उसे कई सौ वर्षों तक गुलाम बनाकर रखा।

6092. हिन्दुत्व की विचारधारा इस्लाम की विचारधारा से हजारों गुना अधिक सहिष्णु और धर्मनिरपेक्ष है। हिन्दुओं ने हिन्दुओं पर अत्याचार किये, इस बुराई के कारण इस्लामिक विचारधारा के

पाप नहीं धुल सकते। क्योंकि इस्लाम ने अपनों के साथ-साथ दूसरों पर अत्याचार किये।

6093. हिन्दुत्व में परिवार व्यवस्था भी है और समाज व्यवस्था भी। इस्लाम और साम्यवाद व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकारों की गारंटी नहीं देते किन्तु हिन्दुत्व देता है।

6094. मेरा अब भी यह मानना है कि कुछ मुट्ठी भर उच्च विचारवान लोगों को यह अवश्य घोषणा करनी चाहिए कि हम मृत महापुरुषों के विचारों की देश-काल परिस्थिति अनुसार समीक्षा करने की अपनी स्वतंत्रता नहीं छोड़ सकते। यही वास्तविक हिन्दुत्व है और यही इस्लाम और ईसाइयत से हिन्दुत्व का अंतर है, जिसमें न मोहम्मद साहिब और कुरान अंतिम पैगम्बर हैं, न ईशु मसीह और बाइबिल।

6095. जिसने भी गुण को छोड़कर संगठन का मार्ग पकड़ा, वे सभी निरंतर लाभ में रहे और हिन्दुत्व अकेला बचा, जिसने भले ही कई सौ वर्षों की गुलामी झेल ली किन्तु गुण प्रधानता की राह नहीं छोड़ी। आज परिवर्तन का समय है। संगठन लगातार अविश्वसनीय हो रहे हैं। गुणों का सम्मान बढ़ रहा है। हिन्दुत्व के आगे आने की बारी है। हिन्दुत्व को अपनी गुण प्रधानता पर गर्व है।

6096. आज हिन्दुत्व गुण विस्तार को आधार बनाकर दुनिया में अधिक तेजी से विस्तार कर सकता है, क्योंकि हिन्दुओं की बौद्धिक क्षमता अन्य धर्मावलम्बियों से कई गुना ज्यादा है। किन्तु संघ उसके गुण प्रधान चिन्तन विस्तार में सबसे बड़ा बाधक है और संख्या विस्तार में सहायक। हिन्दुत्व को गुण विस्तार की लाईन पर चलना चाहिए और सरकार को संख्यात्मक छीना-झपटी से सुरक्षा की गारंटी देना

चाहिए। हिन्दू जन्म से ही व्यक्तिगत आचरण को महत्वपूर्ण मानता है और इस्लाम संगठन शक्ति को।

6097. हिन्दुत्व की विचारधारा में जो अच्छाइयां हैं, उनके कारण मुझे हिन्दू होने पर गर्व है। किन्तु विश्व बंधुत्व तथा मानवता के नाम पर हिन्दुत्व को संकीर्ण टकराव की दिशा में ढकेला जाता है तो मैं ऐसे टकराव से घृणा करता हूं। हिन्दुत्व में स्वयं इतनी शक्ति है कि यदि उसे शान्त और निष्पक्ष वातावरण मिले, तो वह अपने गुणों के आधार पर ही दुनिया को प्रभावित कर सकता है।

6098. हिन्दुत्व चार के समन्वय का नाम है - (1) विचार, (2) सुरक्षा, (3) सुविधा, (4) सेवा।

6099. मैं ऐसा मानता हूं कि हिन्दुत्व एक जीवन-पद्धति है, विचारधारा है, जिसमें सहजीवन, सर्वधर्म समभाव, वसुधैव कुटुम्बकम् आदि समाहित होते हैं। हिन्दुत्व आचरण को महत्व देता है, चोटी, दाढ़ी या पूजा-पद्धति को नहीं। हिन्दुत्व व्यक्ति के व्यवहार से पहचाना जाता है और प्रत्येक हिन्दू में व्यक्तिगत रूप से हिन्दुत्व का गुण अनिवार्य है। हिन्दुत्व को इस्लाम के मार्ग पर बढ़ने से रूकना चाहिए अन्यथा पूरी ईमानदारी, मेहनत और योजना पर आगे बढ़ने के बाद भी मोदी के लिए विपक्ष खतरा बन सकता है।

6100. आदर्श हिन्दुत्व विचार प्रधान होता है, लेकिन विशेष परिस्थिति में आदर्श हिन्दुत्व तथा साम्प्रदायिक हिन्दुत्व एक-दूसरे के पूरक बन जाते हैं, फिर भी नरेन्द्र मोदी के आने के बाद आदर्श हिन्दुत्व के समक्ष खतरा कम हो रहा है। यदि हिन्दू भी अन्य सम्प्रदायों की तरह संख्या बल की छीना-झपटी में लग गया, तो हिन्दुत्व की वह

विशेषता समाप्त हो जायेगी, जो हिन्दुत्व को अन्य सम्प्रदायों से कुछ अलग सिद्ध करती है।

6101. हिन्दुत्व का चिन्तन, कार्यप्रणाली तथा समस्याओं के समाधान की प्रणाली में ब्राह्मण सोच अधिक पाई जाती है। जिसका अर्थ होता है तर्क और विचार मंथन को आधार बनाकर निर्णय लेना।

610 वैचारिक हिन्दुत्व

6102. गुलामी के कालखंड में हिन्दू विचारधारा अवरूद्ध हुई और स्वतंत्र चिंतन बंद हो गया। विचारधारा के स्थान पर संस्कार अधिक महत्वपूर्ण होने लगे। नये-नये पंथ और सम्प्रदाय स्वयं को धर्म कहने लगे। किसी साम्प्रदायिक संगठन से जुड़ने के बाद भी वे लोग अपने को हिन्दू कहने लगे और तथाकथित हिन्दुओं के मन में दुनिया पर शासन करने की वैसी ही इच्छा बलवती होने लगी, जैसे सांम्प्रदायिक मुसलमानों और ईसाइयों की है। मैं समझता हूं कि हिन्दू विचारधारा साम्प्रदायिकता को परास्त कर सकती है, दुनिया में साम्प्रदायिकता को अलग-थलग कर सकती है। जब भारत गुलाम था अथवा स्वतंत्रता के बाद साम्प्रदायिक शक्तियां एकजुट होकर हिन्दुत्व पर आक्रमण कर रही थीं, उस समय हिन्दुओं का संगठित होना मजबूरी मानी जा सकती है, किन्तु नरेन्द्र मोदी के बाद सत्ता संघर्ष के अतिरिक्त अन्य मामलों में हिन्दुओं को संगठित करना उचित नहीं है।

6103. स्वतंत्रता के बाद कुछ हिन्दुओं ने मुस्लिम साम्प्रदायिकता से कमजोर पड़ने का कारण विचार प्रधानता और संगठन के अभाव को घोषित कर दिया और उन्होंने साम्प्रदायिकता से लड़ने के

लिए अपना अलग से साम्प्रदायिक संगठन बना लिया। मैंने इस विषय पर बहुत सोचा है और मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि कुछ विचारवान लोग भी हिन्दुत्व को विचार के रूप में प्रस्तुत करने लगे तो कोई कारण नहीं है कि इस्लाम या ईसाइयत इस विचारधारा का मुकाबला कर सके। संस्कारवान होना बुरा नहीं है।

6104. वैदिक धर्मावलम्बी विचार-मंथन को सर्वोच्च महत्व देते थे। उनके स्थान पर ईसाइयों ने धन को सर्वोच्च महत्व देना शुरू किया। धन और संगठन एक साथ जुड़े और धीरे-धीरे एक साथ जुड़कर ज्ञान और विचार-मंथन पर भारी पड़ने लगे।

611 हिन्दू साम्प्रदायिकता

6110. हिन्दू के महत्वपूर्ण गुण धर्मनिरपेक्षता को अस्थाई तात्कालिक परिस्थितिवश साम्प्रदायिक स्वरूप देना तो एक प्रकार से हिन्दू के इस्लामीकरण के अतिरिक्त और कुछ नहीं, जो भारत के हिन्दुओं ने कभी स्वीकार नहीं किया।

6111. भारत का हिन्दू कभी साम्प्रदायिक नहीं रहा है। उसे तो समान व्यवहार से ही पूरा संतोष है।

6112. मैं मानता हूं कि हिन्दू साम्प्रदायिक तर्कों के उभार के प्रति हमें अधिक सतर्कता दिखानी होगी, क्योंकि जिस तरह हिन्दुओं को 67 वर्षों तक अपमान झेलना पड़ा है, उसका लाभ उठाकर कुछ प्रतिक्रियावादी तत्व बदला लेने का प्रयास करेंगे। हमें उससे बचना होगा और यह सिद्ध करना होगा कि हम मुसलमानों के खिलाफ नहीं हैं, बल्कि हम तो साम्प्रदायिक सदभाव के पक्षधर हैं।

6113. हिन्दू धर्म अपने अनुयायियों से चरित्र की अपेक्षा करता है। ईसाई धर्म त्याग की और इस्लाम संगठन की।

6114. साम्प्रदायिकता मुख्य रूप से इस्लाम, ईसाइयत और हिन्दुत्व के बीच संख्या बल वृद्धि की प्रतिस्पर्धा है, तो जातिवाद हिन्दू धर्मावलम्बियों के बीच स्वतंत्रता के पूर्व लाभ उठा रहे सवर्णों और स्वतंत्रता के बाद उस लाभ की स्थिति में हिस्सा बांटने के लिए प्रयत्नशील अवर्णों के बीच की प्रतिस्पर्धा है।

6115. वैसे तो साम्प्रदायिकता की नींव उसी दिन पड़ गई थी, जब हिन्दू धर्म से असंतुष्ट अम्बेडकर ने नेहरू को आगे करके हिन्दुओं की छाती में हिन्दू कोड बिल का कील ठोक दिया था। स्वभाविक रूप से हिन्दू साम्प्रदायिक हो ही नहीं सकता, चाहे वह कांग्रेसी ही क्यों न हो।

6116. भारत में साम्प्रदायिकता स्वतंत्रता के पूर्व मुसलमानों ने और स्वतंत्रता के बाद हिन्दू संगठनों ने शुरू की। गांधी हत्या इसका स्पष्ट उदाहरण है। भारत का अधिकांश हिन्दू न स्वतंत्रता के पूर्व साम्प्रदायिक रहा न स्वतंत्रता के बाद।

6117. पंजाब में सिख समुदाय के कुछ लोग पूरे भारत को अपनी साम्प्रदायिक सोच के कारण परेशान कर रहे थे। संपूर्ण समाज परेशानी अनुभव कर रहा था और इंदिरा गांधी की हत्या ने उस अनुभव को विस्फोट का स्वरूप दे दिया, जिसमें अनेक निर्दोष मारे गये।

6118. भारत का हिन्दू बहुमत संघ समर्थक नहीं है, जबकि भारत का मुस्लिम बहुमत साम्प्रदायिक इस्लाम से या तो सहानुभूति रखता है या डरता है। वर्तमान समय में अपनी सुरक्षा के आधार पर अल्पकाल के लिए हिन्दू एकजुट हुए हैं।

612 साम्प्रदायिकता

6120. साम्प्रदायिकता के मामले में इस्लामिक ताकतों को विश्व इस्लामिक कट्टरवाद का भी पूरा-पूरा सहयोग मिल रहा है और कुछ वामपंथी गांधीवादी हिन्दुओं का भी, जबकि साम्प्रदायिक हिन्दुवादी ताकतों को न विदेशी समर्थन प्राप्त है, न पूरा का पूरा हिन्दू समाज ही उसके साथ है। इस्लामिक साम्प्रदायिकता हिन्दू साम्प्रदायिकता की अपेक्षा अधिक खतरनाक है।

6121. हिन्दू और मुसलमान व्यक्तिगत व्यवहार में तो प्रेम से रह सकते हैं, किन्तु सामाजिक व्यवहार में सम्भव नहीं।

6122. हमने देखा है कि जब मुस्लिम साम्प्रदायिकता उफान पर थी और गुजरात में साम्प्रदायिक मुसलमानों ने पहल करके गोधरा में कुछ क्रिया की तो उसकी प्रतिक्रिया में पूरे गुजरात में ऐसा नरसंहार हुआ कि अब वहां का साम्प्रदायिक मुसलमान भी समाज के साथ चलने के लिए सहमत दिखता है।

6123. यदि भारत में हिन्दू साम्प्रदायिकता को भी संतुष्ट करने का प्रयत्न जारी रहा तो फिर किसी गांधी की हत्या यदि हो जाये तो कोई आश्चर्य नहीं माना जायेगा।

6124. मुज्जफ्फरनगर में जो पलायन हुआ, उसका कारण साम्प्रदायिक हिन्दुओं का मुसलमानों पर कोई अत्याचार नहीं था, बल्कि साम्प्रदायिक मुसलमानों का बढ़ा हुआ मनोबल था। क्योंकि वहाँ शक्ति प्रदर्शन की पहल साम्प्रदायिक मुसलमानों ने ही की थी। यद्यपि इसका परिणाम वहां के शान्तिप्रिय मुसलमानों को झेलना पड़ा। दूसरी ओर कश्मीरी पंडितों का पलायन भी साम्प्रदायिक

मुसलमानों द्वारा अपने शक्ति प्रदर्शन के रूप में तथा कश्मीर को हिन्दुओं से खाली कराने के उद्देश्य से पैदा हुआ। दोनों के परिणाम भले ही एक समान हुए, जिसमें शान्तिप्रिय हिन्दू और शांतिप्रिय मुसलमानों को भोगना पड़ा, किन्तु दोनों घटनाओं के कारण साम्प्रदायिक मुसलमान ही थे।

6125. कुछ मुट्ठी भर मुसलमानों ने सारे देश को साम्प्रदायिक आधार पर ब्लैकमेल करने का प्रयास किया, जिसके परिणामस्वरूप गुजरात की आपराधिक घटना घटी और बड़ी संख्या में मुसलमान मारे गये। जब तक कोई साम्प्रदायिक समूह मुट्ठी भर उग्रवादियों आंतकवादियों की साम्प्रदायिक घटनाओं के विरूद्ध स्वयं सामने आकर शेष जनमत को विश्वास नहीं दिलाता कि वह ऐसी आंतकवादी घटनाओं के पक्ष में नहीं है, तब तक ऐसी घटनाएं होंगी ही। ये घटनाएं किसी भी सम्प्रदाय के साथ हो सकती हैं चाहे सिख या हिन्दू ही क्यों न हो।

6126. मेरे विचार में साम्प्रदायिकता एक जहर है। इस जहर का उपयोग चाहे हिन्दू करें या मुसलमान, प्रभाव बराबर का ही होगा। साम्प्रदायिकता सिर्फ साम्प्रदायिकता होती है। न हिन्दू साम्प्रदायिकता ठीक होती है, न ही मुस्लिम साम्प्रदायिकता।

6127. भारत को दारुल इस्लाम बनाने या बनने का सपना या भय देखने वालों को नींद से जग जाना चाहिए। अब भारत कभी दारूल इस्लाम नहीं बन सकेगा।

6128. भारत का विभाजन मुसलमानों की साम्प्रदायिक सोच के कारण हुआ। मुसलमानों ने ही भारत से अलग होने की पहल की। स्वतंत्रता के बाद मुसलमानों के मन में अविश्वास पैदा करने की

पहल हिन्दुओं ने नहीं की, मुसलमानों ने भी नहीं, की बल्कि कुछ हिन्दू विचारधारा छोड़कर बने साम्प्रदायिक हिन्दू संगठनों ने की जिनका राजनीतिक स्वार्थ था।

6129. साम्प्रदायिक तत्व भारत में हिन्दू-मुसलमान के बीच ध्रुवीकरण कराना चाहते हैं और देश को गृहयुद्ध में ढकेल कर स्वयं राजनैतिक लाभ उठाना चाहते हैं। साम्प्रदायिक व्यक्ति हमेशा चाहता है कि शांतिप्रिय धर्मनिरपेक्ष प्रवृत्ति के हिन्दू मुसलमान कभी एकजूट न हों बल्कि हिन्दू-मुसलमान के नाम पर आपस में बंटे रहें। परिस्थितियों का लाभ उठाने वाले साम्प्रदायिक तत्व माने जाते हैं, जो परिस्थिति बदलने के बाद नुकसान उठाते हैं।

6130. यदि हम धर्मनिरपेक्ष लोग इस्लाम के साम्प्रदायिक विस्तार पर भारत में भी नियंत्रण में असफल हैं और एक अन्य साम्प्रदायिक संगठन इस्लाम की साम्प्रदायिक विस्तार की गति को साम्प्रदायिक माध्यमों से ही रोकने का प्रयास करता है, तो हमे क्यों कष्ट होना चाहिए?

6131. साम्प्रदायिकता का यह मूल चरित्र होता है कि उसमें अधिकांश भावना प्रधान लोग ही जुड़ते हैं। इसमें भी जो अतिभावनावादी लोग होते हैं, वे अतिवादी हो जाते हैं।

6132. साम्प्रदायिकता कभी किसी वैचारिक सीमा को नहीं मानती। साम्प्रदायिकता शुद्ध साम्प्रदायिकता होती है। जब साम्प्रदायिकता का भावनाओं और संस्कारों से तालमेल होता है, तब उसके समक्ष सारी सीमाओं के टूटने का खतरा पड़ जाता है।

6133. साम्प्रदायिक संगठन जब तक कमजोर रहते हैं, तब तक न्याय की बात करते हैं, किन्तु मजबूत होते ही तत्काल सफाई अभियान

चलाना शुरू कर देते हैं, जो अप्रत्यक्ष रूप से कमजोर के साथ अन्याय ही होता है।

6134. साम्प्रदायिकता कभी भागते हुए विरोधी का पीछा नहीं छोड़ती। वह तो तब तक पीछा करती है, जब तक विपक्ष सदा के लिए समाप्त न हो जाये।

6135. मुस्लिम साम्प्रदायिकता ने देश की हत्या कर दी और हिन्दू साम्प्रदायिकता ने गांधी की हत्या करके संतोष कर लिया।

6136. यदि प्रवृत्ति के आधार पर वर्गीकरण करें तो पूरी दुनिया में एक-दो प्रतिशत मुसलमान आतंकवादी नब्बे प्रतिशत उग्रवादी तथा पांच प्रतिशत ही शांतिप्रिय होते हैं, जबकि इसाइयों में नब्बे प्रतिशत शांतिप्रिय पांच दस प्रतिशत उग्रवादी तथा अपवाद स्वरुप ही आतंकवादी होते हैं।

614 साम्प्रदायिकता का समाधान

6140. साम्प्रदायिकता को सिर्फ कुचला जा सकता है, संतुष्ट कभी नहीं किया जा सकता। यदि साम्प्रदायिकता को कुचल दिया जाय, तो साम्प्रदायिकता धर्मनिरपेक्ष हो जाती है, जैसा कि गुजरात में हुआ किन्तु यदि साम्प्रदायिकता को संतुष्ट करने का प्रयास किया गया, तो धर्मनिरपेक्षता भी साम्प्रदायिक हो जाती है, जैसा कि उत्तर प्रदेश के मुजफफर नगर में हुआ।

6141. अब भी सब कुछ विध्वंस नहीं हुआ है, अब भी साम्प्रदायिकता का समाधान सम्भव है। यद्यपि वह समस्या अब उतनी साधारण नहीं है, जैसी गांधी हत्या के तत्काल बाद थी, किन्तु समस्या चाहे जितनी विकराल हो गई हो, उसका समाधान तो करना ही होगा।

अब शीघ्र-अतिशीघ्र दो काम करने चाहिए - राष्ट्र सर्वोच्च की जगह समाज सर्वोच्च का विचार बढ़ाने की आवश्यकता है। दूसरी आवश्यकता है कि समान नागरिक संहिता को संविधान का भाग बनाकर उसे कड़ाई से लागू कर दिया जाये। राष्ट्र सर्वोच्च की जगह समाज सर्वोच्च की बात का साम्प्रदायिक हिन्दू पुरजोर विरोध करेंगे। दूसरी ओर समान नागरिक संहिता का साम्प्रदायिक मुसलमान भी पुरजोर विरोध करेंगे और यदि दोनों बातों को एक साथ लागू कर दिया जाए तो सांम्प्रदायिक तत्व अलग-थलग पड़ जायेंगे। मुझे तो ऐसा भी लगता है कि ऐसा कदम उठाते ही साम्प्रदायिक हिन्दू और साम्प्रदायिक मुसलमान एकजुट हो जायेंगे, एक ही थाली में बैठकर खाना खाने लगेंगे, एक साथ होकर इन विचारों का विरोध करने लगेंगे और सम्भव है कि साम्प्रदायिकता का कलंक भारत से मिट जाए।

6142. यदि संगठन बनाने पर रोक लग जाये तो सम्भवतः साम्प्रदायिकता पर रोक लगनी शुरू हो जायेगी। किसी भी व्यक्ति को अपना धर्म पालन करने की स्वतंत्रता होगी, धर्म के नाम पर संगठित भी हो सकते हैं, किन्तु धर्म के नाम पर बने संगठन के सहारे किसी प्रकार की अधिकार प्राप्ति की लड़ाई नहीं लड़ सकते।

6143. मेरा ऐसा मानना है कि साम्प्रदायिकता को सिर्फ कुचला ही जा सकता है। उसे कभी संतुष्ट नहीं किया सकता, चाहे वह साम्प्रदायिकता साम्यवादी संस्कृति से आती हो अथवा इस्लामिक संस्कृति से अथवा संघ परिवार की संस्कृति से। अब तक मानवता के नाम पर साम्प्रदायिकता के खतरनाक सांपों को दूध पिलाया गया, उन्हें अब जहर देने की जरूरत है।

6144. हमें साम्प्रदायिकता के विरुद्ध शांतिप्रिय विचारों को लगातार मजबूत करने का प्रयत्न करना चाहिए। साम्प्रदायिकता की कोई सीमा नहीं होती और यदि उसे प्रारम्भ में ही नहीं रोका गया, तो वह ऑपरेशन की स्थिति तक बढ़ सकती है।

6145. समाजशास्त्र का यह एकमात्र तथा अन्तिम निष्कर्ष है कि साम्प्रदायिकता को सिर्फ दबाया ही जा सकता है, कभी संतुष्ट नहीं किया जा सकता। यदि साम्प्रदायिकता उग्रवाद की दिशा में बढ़ गई होती है, तो उसे एक खतरा समझकर उसे कुचलने का प्रयास करना चाहिए। यदि साम्प्रदायिकता आतंकवाद के साथ जुड़ जाये, तो उसे सर्वोच्च प्राथमिकता के आधार पर नष्ट कर देना चाहिए।

6146. साम्प्रदायिकता का समाधान दो तरीके से सम्भव है। - (1) समान नागरिक संहिता, (2) धर्म स्वातंत्र्य कानून।

6147. साम्प्रदायिकता को न कभी संतुष्ट किया जा सकता है, न ही पूजा-पद्धति के आधार पर बांटा जा सकता है। उसे तो जन्म के पूर्व कोख में ही मार देना सर्वाधिक सुरक्षित मार्ग है।

6148. आज मुस्लिम साम्प्रदायिकता अपनी सारी सीमाएं तोड़ने में ऊपर दिख रही है। इस समय मुस्लिम साम्प्रदायिकता से टकराव विश्व की पहली आवश्यकता है। मैं तो समझता हूं कि साम्प्रदायिकता के मुद्दे पर भारत के मुसलमानों को ज्यादा समझाने की जरुरत है और उनमें से जो न समझना चाहे उन्हें बलपूर्वक समझाना चाहिए।

6149. साम्प्रदायिकता किसी भी पक्ष की अच्छी नहीं होती। सबसे अच्छा तो यह है कि हिन्दू धर्मनिरपेक्ष लोग हिन्दू साम्प्रदायिकता का पुरजोर विरोध करें और मुस्लिम धर्मनिरपेक्ष लोग मुस्लिम साम्प्रदायिकता का।

6150. मैं चाहता हूं कि मुस्लिम साम्प्रदायिकता और हिन्दू साम्प्रदायिकता को अलग-अलग न देखकर धर्मनिरपेक्ष और साम्प्रदायिक के बीच विभाजन किया जाये। यदि यह प्रयत्न हुआ तो भले ही मुसलमानों में धर्मनिरपेक्ष लोगों की संख्या कम हो और हिन्दुओं में अधिक, किन्तु समाधान तो यही होगा अन्य नहीं। प्रवृत्ति के आधार पर ही समाज का विभाजन हो सकता है, धर्म के आधार पर नहीं।

6151. किसी गांधीवादी की समाज में न पकड़ थी, न कोई स्वतंत्र सोच। परिणाम हुआ कि कांग्रेस पार्टी ने साम्प्रदायिक मुसलमानों तथा जातीय उन्मादी अम्बेडकर के साथ समझौता कर लिया तो साम्प्रदायिक हिन्दुओं ने राष्ट्रवाद को ढाल बनाकर अपनी राजनैतिक रोटी सेंकनी शुरू कर दी। गांधीवादी ही एकमात्र थे, जो इसका विरोध कर सकते थे, किन्तु गांधीवादी इतने भोले-भाले और शरीफ थे कि वे आसानी से साम्यवादियों के चंगुल में फंस गये और वे भी मुस्लिम अम्बेडकरवादी गिरोह के सर्मथक होते चले गये।

615 भारतीय इस्लामिक साम्यवाद पश्चिम संस्कृति

6152. संघ ने इस्लामिक विस्तारवाद का भरपूर विरोध किया, जो आज भी जारी है। संघ ने हिन्दुओं की घटती संख्या की निरंतर चिन्ता की। सांस्कृतिक आधार पर भी संघ परम्परागत मान्यताओं के साथ लगातार दृढ़ रहा, जबकि पाश्चात्य जगत और साम्यवादी परम्पराओं को किसी भी परिस्थिति में तोड़कर उसे आधुनिक वातावरण में बदलने का प्रयास करते रहे। परिवार व्यवस्था में भी संघ परम्परा के साथ मजबूती से डटा रहा, जबकि स्वतंत्रता के

बाद अन्य सबने मिलकर परिवारों को छिन्न-भिन्न करने के लिए आधुनिकता का कुचक्र रचा।

6153. राष्ट्रीय सुरक्षा के मुद्दे पर भी संघ पूरी ताकत से सक्रिय रहा, जबकि इस्लाम और साम्यवाद पूरी तरह राष्ट्रीय सुरक्षा को कमजोर करने का प्रयास करते रहे। नैतिकता और चरित्र के मामले में भी संघ की अपनी एक अलग पहचान बनी हुई है। आज भी हम देख रहे हैं कि लव जेहाद, धर्म परिवर्तन या जनसंख्या वृद्धि को आधार बनाकर मुस्लिम साम्यवादी गठजोड़ का मुकाबला करने में संघ निरंतर सक्रिय है। जेएनयू संस्कृति से संघ निरंतर टकरा रहा है। वस्तुतः संघ हिन्दू संस्कृति की सुरक्षा के लिए क्षत्रिय की भूमिका निभा रहा है, जिसे हम उसकी मजबूरी भी कह सकते हैं।

6154. संख्या विस्तार की अपेक्षा गुण प्रधानता अधिक महत्वपूर्ण होती है। साम्यवाद ने गुण प्रधानता को छोड़ दिया, जिसके कारण वह समाप्ति की कगार पर है। इस्लाम ने भी संख्या विस्तार और संगठन को एकमात्र लक्ष्य बना लिया। स्पष्ट दिख रहा है कि यदि उसने बदलाव नहीं किया, तो उसकी दुर्गति निश्चित है। उचित होगा कि हिन्दुत्व उस प्रकार की भूल न करे।

6155. इस्लामिक संस्कृति का व्यक्ति सहजीवन कभी स्वीकार नहीं कर सकता। वह तो मरना या मारना जानता है। वह या तो गुलाम बनाकर रखेगा अथवा परिस्थितिवश गुलाम रहेगा। किन्तु कभी भी सहजीवन स्वीकार नहीं करेगा।

6156. इस्लाम गुलाम बनाकर रखना चाहता था और अंग्रेज राज्याश्रित। मेरे विचार से दोनों ही गलत है।

616 हिन्दू इस्लाम

6160. हिन्दुओं में आम धारणा यही बनती जा रही है कि संगठित इस्लाम को सदा-सदा के लिए समाप्त ही कर देना चाहिए भले ही कुछ अनैतिकता का सहारा क्यों न लेना पड़े।

6161. दुनिया में हिन्दू एकमात्र समूह है, जो मूलतः किसी भी रूप में संगठन पर विश्वास नहीं करता। दूसरी ओर इस्लाम अकेला समूह है, जो सिर्फ संगठन पर ही विश्वास करता है। हिन्दू कभी संगठन नहीं बनाता और यदि अन्य लोग संगठित हों, तब भी वर्ग समन्वय का प्रयत्न करता है।

6162. भारतीय मुसलमान बहुसंख्यक हिन्दू समुदाय का विश्वास प्राप्त करें। वे भूल जायें कि वे विश्व मुस्लिम बिरादरी के अंग हैं। आप महसूस करिये कि आप पूजा-पद्धति में ही अलग हैं, शेष मामलों में आप भारतीय हैं।

6163. हिन्दू और मुसलमान में सिर्फ पहचान का ही अंतर नहीं है, बल्कि कुछ मौलिक अंतर भी है। हिन्दुओं ने कभी साम्प्रदायिक हिन्दुओं को अधिक महत्व नहीं दिया, जैसा मुसलमानों ने किया। अब परिस्थितियां कुछ बदल रही हाओन, जो दोनों धर्मावलम्बियों के लिए घातक है, क्योंकि वर्तमान वातावरण में हिन्दू नाम के लोग तो बड़ी संख्या में बच जायेंगे, किन्तु हिन्दू विचारधारा को बचाना बहुत बड़ी समस्या है।

6164. मुसलमानों को यह भरोसा रखना चाहिए कि हिन्दू किसी सीमा से अधिक आपको पीछे नहीं ढकेलेंगे। हिन्दू न पहले कभी साम्प्रदायिक रहे हैं, न अब। हम हिन्दू हैं, इसलिए धर्मनिरपेक्ष हैं। आप मुसलमान, ईसाई हैं इसलिए धर्म सापेक्ष हैं। आपको तब तक

धर्म सापेक्ष रहने की छूट है, जब तक आपका वह आंतरिक मामला है, किन्तु यदि आपने अपनी सीमाओं को तोड़कर दुरूपयोग करने का प्रयास किया, तो हमारी सीमाएं नहीं टूट सकती, इसकी कोई गारंटी नहीं। (Tit for tat) एक खतरनाक स्थिति होगी, लेकिन शान्तिप्रिय मुसलमानों को भी इस विषय पर गंभीरता से सोचना चाहिए।

6165. इतिहास में धर्म के नाम पर हो रही हिंसा में हिन्दुओं का नाम शून्यवत् है। यहां तक कि हिन्दुओं ने इस्लाम या इसाइयत की गुलामी तक स्वीकार कर ली, किन्तु कभी मुकाबला नहीं किया। परिणाम यह है कि जहां एक ओर शक्ति या धन प्रधान धार्मिक संगठन लगातर सफलता के नये-नये कीर्तिमान बनाते जा रहे हैं, वहीं हिन्दुत्व का अपना प्रभाव क्षेत्र लगातार सिकुड़ता जा रहा है। सिकुड़ते-सिकुड़ते वह आकर भारत तक सिमट गया है और भारत में भी उसकी जनसंख्या का अनुपात घटता ही जा रहा है।

6166. गुलामी काल में हिन्दुओं ने दोनों धर्मावलम्बियों की गुलामी का अनुभव किया है। मुसलमानों की तुलना में ईसाइयों का व्यवहार बहुत अच्छा है।

6167. यह भारत के ही कानूनों की विचित्र समानता है कि एक व्यक्ति दूसरा विवाह करने लिए मुसलमान बनते ही पात्र बन जाता है। किसी भी मामले में न साम्यवादियों ने समान कानून की बात की, न तथाकथित धर्मनिरपेक्षों ने।

6168. इस्लाम राष्ट्र और समाज से ऊपर धर्म मानता है। साम्यवाद समाज और धर्म से ऊपर राज्य मानता है। हिन्दू धर्म और राज्य से ऊपर समाज मानता है। इसीलिए मैं इस्लाम, ईसाइयत और साम्यवाद की

तुलना में हिन्दुत्व को अच्छा मानता हूं। भारत का जो मुसलमान, समाज राष्ट्र और लोकतंत्र से ऊपर अपने धर्म और संगठन को मानता है, उसे लोकतंत्र की दुहाई क्यों देनी चाहिए। लेकिन जो मुसलमान संगठनात्मक इस्लाम से हटकर धार्मिक इस्लाम की ओर बढ़े, उन्हें सम्पूर्ण संरक्षण दिया जाना चाहिए।

6169. हिन्दू विचार, तर्क और श्रद्धा के समन्वय से आगे बढ़ता है, ईसाई प्रेम, सेवा, करूणा, सहायता सदभाव से और इस्लाम संगठन शक्ति से।

6170. किसी भी हिन्दू या मुसलमान के लिए तीन तरह की परिस्थितियां होती है – (1) निरपेक्ष, (2) तटस्थ, (3) परिस्थितियों से लाभ उठाना।

6171. धर्म के मामले में अत्याचार औरंगजेब ने ज्यादा किया और अकबर ने कम। औरंगजेब का अत्याचार भारत से इस्लामिक शासन के पतन की शुरूआत बना।

6172. हिन्दू व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण को धर्म मानता है और इस्लाम संगठन से मिलने वाली ताकत को धर्म मानता है। इसलिए हिन्दू धर्म अपने अनुयायियों से चरित्र की अपेक्षा करता है। ईसाई धर्म त्याग की और इस्लाम संगठन की। तीनों धर्मों में ही आचरण को भरपूर मान्यता है, किन्तु सिर्फ प्राथमिकताओं का अन्तर है। हिन्दू धर्म आचरण को सर्वोच्च प्राथमिकता देता है।

617 हिन्दू

6173. हिन्दुओं की तर्क शक्ति इतनी भोथरी भी नहीं हो गई है कि तर्क के मामले में वह किसी अन्य से कमजोर पड़े। वर्तमान समय में भारत

दुनिया से विचारों का आयात कर रहा है, जबकि कुछ सौ वर्ष पहले भारत विचारों का निर्यात करता था। अब हिन्दुओं को विचारों की दरिद्रता से बाहर निकलना चाहिए। इसके लिए संस्कारों में विचारों को अधिक महत्व दिया जाए। विचारों की दरिद्रता ही हमें कंगाल बनाने में प्रमुख रही है।

6174. औसत हिन्दू का यह संस्कार होता है कि वह घृणा तो कर सकता है, किन्तु आक्रमण नहीं कर सकता। वह त्याग कर सकता है, पर छीन नहीं सकता। वह स्पष्ट कह सकता है, किन्तु दुहरा व्यवहार नहीं कर सकता। औसत हिन्दू का यह संस्कार आसानी से नहीं बदलता। किन्तु वही हिन्दू जब मुसलमान, साम्यवादी सावरकरवादी या दलित बन जाता है, तो उसके संस्कार बिल्कुल विपरीत हो जाते हैं। वह अपनों से प्रेम और दूसरों से हिंसा का मार्ग पकड़ लेता है। वह न्याय की जगह अपनत्व तथा त्याग की जगह अधिकारों की छीना-झपटी पर विश्वास करने लगता है। मेरे विचार में यह मार्ग घातक है, किन्तु वर्तमान समय में हिन्दुओं के लिए यह मजबूरी बन गयी है।

6175. एक पक्षीय उदारता नीतिगत भूलों तक तो उचित हो सकती है, किन्तु यदि किसी पक्ष की नीयत ही खराब हो, तब एकपक्षीय उदारता घातक होती है।

6176. मै कट्टर हिन्दू हूं, ब्राम्हण हूं, वानप्रस्थी हूं और मेरी यह मजबूरी है कि मैं सिर्फ सत्य ही कहूं। मैं प्रयत्न करता हूं कि किसी व्यक्ति के कुछ कार्यों को लेकर उसकी सम्पूर्ण मानसिकता घोषित न करूं। हो सकता है यह मेरी कमजोरी रही हो, किन्तु मैं इसे उचित मानता हूं। आमतौर पर कोई भी व्यक्ति न अच्छा होता है न बुरा। हर व्यक्ति

अपने से अधिक अच्छे से बुरा होता है और अपने से अधिक बुरे की अपेक्षा अच्छा होता है। दूसरे से तुलना करते समय किसी व्यक्ति को अच्छा या बुरा कहा जाता है।

6177. यदि कोई हिन्दू अपनी कमजोरियों या बुराइयों के खिलाफ लिखे या बोले, तो वह भी कम प्रशंसा का पात्र नहीं होगा। लेकिन उसे यह सावधानी भी रखनी चाहिए कि अपनी कमजोरियों की चर्चा अन्य धर्मावलंबियों के लिए हथियार के रूप में न काम आये।

6178. मानवता और विश्व बंधुत्व में राष्ट्रवाद को कहीं से नहीं घुसना चाहिए। मानवता और विश्व बन्धुत्व धार्मिक विषय है, राष्ट्र से जुड़े नहीं।

6179. मेरे विचार से भारत के आम हिन्दुओं को ऐसा लगा कि इन गांधी नामधारी राजनेताओं तथा सर्व सेवा संघ वालों के नकली आचरण की अपेक्षा तो वे लोग अच्छे हैं, जो खुलकर गांधी का विरोध करते हैं। कोई ढोंग नहीं करते, समाज को कोई धोखा नहीं देते। यही कारण है कि गांधी का भारत गांधी विचारों के विपरीत जाने को मजबूर हो गया।

6180. दुनिया में हिन्दू जीवन-पद्धति अकेली है, जिसे निश्चित रुप से धर्म कहा जा सकता है, किन्तु इस्लाम सिख तथा साम्यवाद निश्चित रुप से सम्प्रदाय हैं, धर्म नहीं।

6181. गांधी, आर्यसमाज, गायत्री परिवार आदि हिन्दुत्व की पहचान जीवन-पद्धति से मानते हैं, जिसमें सहजीवन, सर्वधर्म समभाव, वसुधैव कुटुम्बकम का भाव महत्वपूर्ण रहता है। अहिंसा और सत्य को महत्वपूर्ण माना जाता है। दूसरी ओर संगठनात्मक हिन्दुत्व में चोटी, धोती, गाय, गंगा, मंदिर को अन्य गुणों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। गुणात्मक हिन्दुत्व का नेतृत्व ब्राह्मण

प्रवृत्ति प्रधान विचारकों के हाथ में होता है, तो संगठनात्मक हिन्दुत्व का नेतृत्व क्षत्रिय प्रवृत्ति प्रधान राजनेताओं के हाथ में। गुणात्मक हिन्दुत्व संख्या विस्तार को महत्वहीन मानता है, तो संगठनात्मक हिन्दुत्व संख्या विस्तार को पहली प्राथमिकता मानता है।

6182. भारत का हिन्दू बहुमत हिन्दू कोड बिल के पूरी तरह खिलाफ था और आज भी है, किन्तु पंडित नेहरू के षडयंत्र के समक्ष सब फेल हो गये।

6183. पूरी दुनिया में भी और भारत में भी आमतौर पर हिन्दुओं को शान्तिप्रिय तथा असंगठित माना जाता है।

6184. आमतौर पर धारणा है कि हिन्दू गुलामी सह सकता है, किन्तु गुलाम बना नहीं सकता। दूसरे धार्मिक संगठन में जा सकता है, किन्तु दूसरे धार्मिक संगठन को अपने साथ नहीं रख सकता। हिन्दू कायर हो सकता है, किन्तु आक्रामक नहीं। हिन्दू गुलामी सह सकता है, किन्तु गुलाम बना नहीं सकता। हिन्दू अत्याचार सह सकता है, किन्तु अत्याचार कर नहीं सकता। हिन्दू नुकसान उठाने की मूर्खता कर सकता है, किन्तु धूर्तता नहीं, अपराध नहीं। हिन्दू स्वयं को गाय के समान कहे जाने में गर्व महसूस करता है, तो सिख, मुसलमान या संघ के लोग शेर के समान तुलना में गर्व महसूस करते हैं। हिन्दू यदा-कदा अपनत्व की ओर झुकता है, अन्यथा न्याय ही उसकी प्राथमिकता होती है।

6185. आज सारी दुनिया में अत्याचार सहने वाला हिन्दू सिर उठाकर चल रहा है और अत्याचार करने वाला इस्लाम दुनिया के लिए समस्या बना हुआ है। मेरे विचार में इसी आदर्श में हिन्दुत्व का वजूद छिपा हुआ है।

6186. हिन्दू किसी पूजा-पद्धति को धर्म नहीं मानता। हिन्दू पूजा-पद्धति के साथ किसी संगठनात्मक चर्चा को धर्म का भाग नहीं मानता। शान्ति के लिए हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख आदि की पूजा-पद्धति न आज तक बाधक रही है, न रहेगी।

6187. हिन्दू धर्म, गुण प्रधान धर्म को मुख्य मानता है तथा पहचान प्रधान धर्म को धर्म न मानकर उसे सम्प्रदाय मानता है। यही कारण है कि भारत में इस्लाम के आगमन के पूर्व सबका धर्म एक ही था, सम्प्रदाय भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। यहां तक कि ईश्वर को न मानने वाला भी धार्मिक माना जाता था।

6188. दुनिया जानती है कि युद्ध प्रिय भाषा न कभी भारत की रही है और न हिन्दुत्व की। हिन्दू या भारत अत्याचार सह सकता है, परन्तु कर नहीं सकता। इसी तरह वह सिकुड़ सकता है, किन्तु विस्तार उसकी कभी प्राथमिकता नहीं रही। वह सुरक्षा के लिए कभी आक्रमण भले ही कर दे, किन्तु वह सुरक्षा के नाम पर कभी आक्रमण नहीं करता। भारत और हिन्दुत्व का यह गुण भारत की एक थाती है और इसे मुट्ठी भर युद्ध उन्मादियों के प्रभाव में आकर गंवाया नहीं जा सकता।

6189. शांति की भाषा में जो ताकत है, वह चुनौती की भाषा में नहीं है, टकराव की भाषा में भी नहीं है और युद्ध की भाषा में तो है ही नहीं। यह बात भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में भी प्रमाणित हो चुकी है तथा शंकराचार्य बौद्ध धर्म टकराव में भी।

6190. हेडगेवार जी यह भी समझते थे कि हिन्दुओं को धर्म के नाम पर संगठित करना आसान नहीं। इसलिए उन्होंने धर्म की जगह पर राष्ट्र शब्द का उपयोग किया है। संघ ऐसे भ्रम में है तो उसे यह भ्रम

निकाल देना चाहिए। हिन्दू कोई ऐसा समूह नहीं है, जो मुसलमान या ईसाई सरीखे हजार-दो हजार वर्षों का हो। वह तो सनातन है और सनातन ही रहेगा। वैसे वर्तमान कार्यकाल में संघ की नीतियां ठीक दिशा में चल रही है। मोहन भागवत और नरेन्द्र मोदी की जोड़ी बहुत ठीक दिशा में काम कर रही है।

6191. मैं अब तक समझता रहा हूं कि हिन्दू एक समाज व्यवस्था है, जीवन-पद्धति है, विचारधारा है। हिन्दू का किसी भौतिक संगठन से कोई सम्बंध नहीं है। हिन्दू की पहचान व्यक्तिगत आचरण तक सीमित है।

6192. शान्तिप्रिय हिन्दू हमारे सामाजिक आदर्श हो सकते हैं और शान्तिप्रिय मुसलमान हमारे सहयोगी। दूसरी ओर उग्रवादी हिन्दू हमारे -विरोधी माने जाने चाहिए और उग्रवादी मुसलमान शत्रु।

6193. आज तक दुनिया में कहीं ऐसा नहीं हुआ कि कोई कायर कौम कई सौ वर्षों तक गुलाम रहने के बाद भी अपना अस्तित्व बचा ले, किन्तु हिन्दुओं ने अपना अस्तित्व बचाकर दिखाया है।

6194. शक्ति प्रयोग या धन प्रयोग हिन्दुत्व की विचारधारा नहीं है। हिन्दुओं ने विचार-मंथन छोड़कर प्रत्यक्ष टकराव का मार्ग पकड़ा, तभी से लगातार यह संकट बढ़ता जा रहा है। फिर भी जो लोग इस मार्ग पर चल रहे हैं, उन्हें निरुत्साहित करना तो ठीक नहीं है, लेकिन ऐसे लोगों के पीछे चलना भी उचित नहीं है।

620 धर्मांतरण और संख्या विस्तार

6200. धर्म परिवर्तन कराने के प्रयत्नों को दण्डनीय अपराध घोषित किया जाना चाहिए लेकिन स्वेच्छा से धर्म परिवर्तन अपराध नहीं होता।

6201. यह सत्य है कि हिन्दुओं को छोड़कर अन्य सम्प्रदाय अपनी संख्या विस्तार के लिए उचित-अनुचित सब प्रकार के साधनों का उपयोग करते हैं। यह भी सच है कि भारत में पिछली सभी सरकारों में चाहे वे गुलामी काल की हो अथवा स्वाधीन भारत की, सबने किसी-न-किसी लालच में ऐसे धर्म परिवर्तन को कभी प्रत्यक्ष तो कभी अप्रत्यक्ष सहयोग किया।

6202. मेरे विचार में भारत में धर्मान्तरण कराने में कट्टरवादी मुसलमानों का हिंसक मार्ग अधिक महत्वपूर्ण रहा है और सूफी मार्ग कम। आज भी सूफी दरगाहों पर 90 प्रतिशत हिन्दुओं का जाना देखा जाता है। उसमें बल प्रयोग कहीं नहीं दिखता और यदि प्रेम से लोग मुसलमान बन रहे हैं या मजारों में जा रहे हैं, तो यह कोई गलत बात भी नहीं है।

6203. प्रत्येक व्यक्ति को कोई भी धर्म मानने की छूट होनी चाहिए किन्तु धर्म परिवर्तन कराने के प्रयत्नों पर रोक आवश्यक है। मुसलमान देश ऐसी छूट से डरते हैं, क्योंकि यदि विचार-मंथन को धर्म-प्रचार और धर्म परिवर्तन का आधार मान लिया जाए, तो इस्लाम या ईसाईयत के समक्ष खतरा उत्पन्न हो सकता है। विशेष कर इस्लाम के समक्ष, क्योंकि वहां तो विचार-मंथन के द्वारा ही अन्तिम रूप से बन्द हैं तथा कुरान ने मंथन की सीमाएं निर्धारित कर रखी है। यही कारण है कि मुस्लिम देश कानून द्वारा ऐसी स्वतंत्रता पर रोक लगाते हैं।

6204. धर्मान्तरण कार्यक्रम स्वयं ही नागरिक के धार्मिक और अभिव्यक्ति-सम्बन्धी स्वातंत्र्य पर आघात करता है और सेक्युलरिज्म का हनन करता है। धर्मान्तरण में यह भी गृहीत होता है कि अन्य सारे

धर्म, मजहब घटिया हैं, ज्ञान के प्रकाश का इनमें अभाव है और मनुष्य के उद्धार का एकमात्र साधन हमारा धर्म ही है। इस दृष्टि में मिथ्यावाद, अहंकार और द्वेष भरा है।

6205. हिन्दू, दुनिया का एकमात्र ऐसा मानव समूह है, जो संख्या विस्तार को महत्व नहीं देता। सभी सम्प्रदाय संख्या विस्तार के प्रयत्न करते रहते हैं और हिन्दू विरोध करता है। हिन्दुओं की यह प्रवृत्ति हिन्दुओं के लिए घातक है, किन्तु आज दुनिया में हिन्दू इस प्रवृत्ति के आधार पर चुनौती देता है कि दुनिया में वह अकेला धर्म है और शेष सभी सम्प्रदाय। यह प्रवृत्ति हिन्दुओं की मूर्खता तो हो सकती है, किन्तु धूर्तता नहीं।

6206. हिन्दू ब्राह्मण संस्कृति प्रधान है, इस्लाम और सिख क्षत्रिय संस्कृति प्रधान, ईसाई व यहूदी वैश्य संस्कृति प्रधान, साम्यवादी शूद्र संस्कृति प्रधान होते हैं। हिन्दू तर्क को अधिक महत्व देता है, मुसलमान संगठन शक्ति को, ईसाई धन को, साम्यवादी वर्ग संघर्ष को। हिन्दू विचार-मंथन, मुसलमान आपसी भाईचारा, ईसाई प्रेम, सेवा सद्भाव और साम्यवाद सत्ता को मुख्य आधार बनाता है।

6207. पंडित नेहरू और भीमराव अम्बेडकर ने पूरा प्रयत्न किया कि भारत में हिन्दू की संख्या घटती जाये। दोनों ने मुसलमानों , ईसाइयों तथा साम्यवादियों को संख्या विस्तार के लिए बहुत सुविधाएं दीं।

6208. यह सर्वविदित है कि हिन्दू ही एकमात्र ऐसा प्राणी है, जिसने पूरे विश्व में अकेले ही धर्म को संगठनात्मक मान्यताओं से दूर रखा है। जहां अन्य धर्मावलंबी लगातार संख्या बल विस्तार से लिए पूरी तरह के परोक्ष प्रयत्न करता रहता है, वहीं हिन्दू प्रत्यक्ष या परोक्ष संख्या विस्तार से स्वयं को दूर रखता है। हिन्दू इससे भी आगे

बढ़कर किसी अन्य धर्मावलंबी को हिन्दू बनाने को प्रतिबंधित कार्य समझता है।

6209. धर्म-प्रचार के मुख्य तीन मार्ग अपनाये जाते हैं - (1) विचार मंथन, (2) सेवा और सहायता, (3) संगठन शक्ति। हिन्दू संस्कृति पहले की पक्षधर है, ईसायत दूसरे की ओर इस्लाम तीसरे की। हिन्दुत्व शास्त्रार्थ अर्थात् विचार-मंथन को अपने विस्तार का आधार मानता है, इस्लाम शक्ति को और ईसाईयत धन को।

6210. धार्मिक एकीकरण किसी भी सामाजिक समस्या का समाधान नहीं है। यदि भारत के सभी लोग हिन्दू हो जायें तो आवश्यक नहीं कि चोरी, डकैती, बलात्कार, मिलावट, हिंसा, जालसाजी, श्रम-शोषण, जातीय टकराव, क्षेत्रीयता आदि समस्याओं में कमी आ जायेगी।

621 हिन्दू आतंकवाद

6211. लोकतांत्रिक व्यवस्था में उग्रवाद तथा आतंकवाद का कोई स्थान नहीं होता। यदि कोई हिन्दू भी उग्रवाद, आतंकवाद का समर्थन या अनुकरण करता है, तो वह गलत है।

6212. कुछ हिन्दुओं पर आतंकवाद के आरोप लगे, जो अब तक संदेह के घेरे में है। यदि वे आरोप गलत भी हों, तब भी इन आरोपों के बाद हिन्दुओं में आतंकवाद की ओर झुकने की प्रवृत्ति पर पूरी तरह रोक लग गई। हिन्दुओं के लिए यह अच्छा हुआ।

6213. गांधी के मरते ही सत्ता से जुड़े गांधीवादियों ने गांधी विचार के विपरीत चलना शुरू कर दिया। गांधी हत्या के बाद उचित होता कि कट्टरवादी हिन्दुत्व की विचारधारा को कुचल दिया, जाता किन्तु

इसके ठीक विपरीत कट्टरवादी इस्लाम को प्रोत्साहित करने की नीति लागू की गई। उदारवादी हिन्दुत्व के मन में इसकी लगातार प्रतिक्रिया हुई। यहां तक कि मनमोहन सिंह के कार्यकाल के अंत आते तक आम हिन्दू अपने को मुसलमानों की तुलना में दूसरे दर्जे का नागरिक समझने लगे। परिणाम हुआ कि भारत का आम जनमानस मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति को गांधी की नीति समझने की भूल कर बैठा, जबकि गांधी की नीति इसके ठीक विपरीत थी।

621 संघ

6214. संघ के कट्टरवाद के विरोधी हिन्दुओं में जितने प्रतिशत विद्यमान हैं, उसका दसवां प्रतिशत भी मुसलमानों में मुस्लिम कट्टरवाद का विरोध नहीं। क्योंकि हिन्दुओं के संस्कार शान्तिप्रियता से शुरू होते हैं, भले ही बाद में धीरे-धीरे कट्टरता में बदल जाये, जबकि मुसलमानों में ठीक उल्टा होता है।

6215. संघ परिवार द्वारा हिन्दुत्व के राजनैतिक उपयोग के प्रयत्नों के कारण अन्य दलों ने इस्लाम और ईसाइयत का एकपक्षीय समर्थन करना शुरू कर दिया, जिसका संगठित लाभ इस्लाम ने उठाया है। ऐसी परिस्थिति में संघ विरोधी दलों का एक पक्षीय इस्लाम समर्थन हिन्दुत्व को साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण के लिए मजबूर कर रहा है।

6216. इस्लाम की आतंकवादी या ईसाइयत की मीठी घूस की प्रतिक्रिया में ही हिंदू संघ की तरफ झुकता है अन्यथा वह एकमात्र दुनिया का ऐसा प्राणी है, जो धार्मिक मामलों में नुकसान उठा सकता है, लेकिन दुसरों का नुकसान कर नहीं सकता।

622 हिन्दू संगठन

6217. हिन्दू एक विचारधारा या जीवन-पद्धति है जिसका परिणाम हुआ हिन्दू किसी संगठन से नहीं जुड़ पाता और जुड़ जाता है, तो वह साम्यवादी हो जाता है, मुसलमान हो जाता है, सावरकरवादी हो जाता है, किन्तु हिन्दू नहीं रहता। क्योंकि हिन्दू किसी संगठन का सदस्य नहीं होता। अन्य धर्मावलम्बियों के पास न कोई विचारधारा है, न कोई जीवन-पद्धति होती है, इसीलिए वे संगठन की शक्ति पर ही विश्वास करते हैं।

6218. हिन्दुओं में से अनेक संगठन निकले और टूट-फूटकर फिर उसी में विलीन हो गये। हिन्दू को न अपने हिन्दू नाम पर गर्व है, न किसी पहचान पर। हिन्दू तो एक जीवन-पद्धति है, जो अपने को चाहे हिन्दू कहे या आर्य। चाहे वह आस्तिक हो या नास्तिक।

6219. दुनिया जानती है कि हिन्दू कभी धर्म के नाम पर संगठित नहीं हो सकता। फिर भी कुछ लोग इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। जब तक कोई व्यक्ति संगठन निरपेक्ष है अथवा किसी अन्य संगठन के साथ होते हुए भी उसने अन्तिम रूप से अपनी जीवन-पद्धति को बदल नहीं लिया, तब तक वह वास्तव में हिन्दू है।

6220. हिन्दू को छोड़कर अन्य जिन संगठनों ने स्वयं को धर्म कहना शुरू किया, उन सबका दोहरा चरित्र है – (1) दूसरों को बताने के लिए, (2) दूसरों के साथ व्यवहार के लिए।

6221. हिन्दू धर्म में अनेक कमजोरियां स्पष्ट हैं, किन्तु उन कमजोरियों से दूरी बनाकर या सुधार करने की भी स्वतंत्रता है। हिन्दू धर्म पूरी दुनिया में अकेला ऐसा है, जिसने न कभी धर्म और संगठन का

घालमेल किया, न ही कभी संख्या विस्तार की छीना-झपटी की। हिन्दू मान्यता के अनुसार धर्म का संबंध पूजा-पद्धति से न होकर व्यक्तिगत कर्म से जुड़ा है। हिन्दू धर्म ने अकेले ही यह उद्घोषणा कर रखी है कि कोई अन्य धर्मावलंबी किसी स्थिति में हिन्दू नहीं बन सकता।

6222. सिख संगठन मुसलमानों से कुछ भिन्न है। वे भारत में जहां भी रहते हैं, हिन्दुओं और मुसलमानों के साथ प्रायः मिलजुल कर रहते हैं और कभी भारत को सिख स्थान बनाने का स्वप्न नहीं देखते। किन्तु वे भी आमतौर पर पंजाब में अपनी शक्ति बढ़ाने का दांव-पेंच करते ही रहते हैं।

6223. भारत के बहुमत हिन्दुओं का समर्थन कभी हिन्दू संगठन के प्रति नहीं रहा। बहुमत हिन्दुओं ने हमेशा ही धर्मों का साथ दिया, संगठनों का नहीं। आज हिन्दुत्व खतरे में है। संख्यात्मक रुप में भी और वैचारिक धरातल पर भी।

6224. हिन्दुओं को इकट्ठा करना अन्य धर्मावलम्बियों को इकट्ठा करने की अपेक्षा बहुत कठिन है, क्योंकि अन्य धर्मावलम्बी चरित्र की अपेक्षा संगठन को महत्व देता है, जबकि हिन्दू संस्कार ही चरित्र प्रधान है।

6225. संपूर्ण विश्व में धर्म के दो अर्थ माने जाते हैं – (1) गुण प्रधान, (2) संगठन प्रधान। गुण प्रधान धर्म व्यक्ति के आचरण से जुड़ा रहता है और संगठन प्रधान पहचान से। गुण प्रधान धर्म व्यक्ति के गुण कर्म स्वभाव की अभिव्यक्ति होता है और संगठन प्रधान खानपान, वेषभूषा, पूजा-पद्धति या चोटी-दाढ़ी की विभिन्नताओं का आधार बनाता है। दो ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व भारत में धर्म की गुण प्रधान

परिभाषा ही प्रचलित थी। पहचान संबंधी भिन्नताएं संगठन प्रधान न होकर गुण प्रधान ही थी। यज्ञोपवीत या चोटी संगठन की पहचान का आधार नहीं थी। धर्म का अर्थ कर्तव्य के साथ जुड़ा था। उस समय धर्म शब्द तो प्रचलित था, किन्तु हिन्दू शब्द नहीं था। उस समय हिन्दू की जगह आर्य या सनातन शब्द अधिक प्रचलित था।

6226. धर्म से उम्मीद थी कि वह समाज को दिशा देगा, किन्तु धर्म भी समाज को मरणासन्न देखकर चील-कौए के समान उसे नोच-खाने की छीना-झपटी में लगा है, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण है धर्म के नाम पर विभिन्न संगठनों का एक-दूसरे के विरूद्ध आपसी संघर्ष।

6227. धर्म और व्यवस्था समविचारी शब्द नहीं है, क्योंकि धर्म कर्तव्य तक सीमित है, जबकि व्यवस्था किसी अधिकार प्राप्त इकाई द्वारा ही हो सकती है। धर्म कोई अधिकार प्राप्त इकाई नहीं है। अधिकार प्राप्त इकाई हो या तो परिवार और समाज है अथवा राज्य। धर्म तो सिर्फ किसी अन्य के प्रति किये जाने वाले निःस्वार्थ कार्य तक ही सीमित है। धर्म सिर्फ एक पक्षीय कर्तव्य तक ही है। धर्म के नाम पर संगठित समूह, सम्प्रदाय या संगठन तो हो सकते हैं, किन्तु धर्म नहीं। धर्म गुणवाचक क्रिया है। धर्म का कोई भौतिक स्वरूप नहीं है।

6228. धर्म लम्बे समय से कर्तव्य प्रधान रहा। हजारों वर्षों से धर्म कभी संगठन के रूप में नहीं रहा। धर्म सामाजिक व्यवस्था में सहायक रहा, बाधक नहीं। बुद्ध और इस्लाम ने सबसे पहले संगठन का स्वरूप लेकर सामाजिक एकता को नुकसान पहुंचाना शुरू किया। संगठित इस्लाम और ईसाइयत के खूनी टकराव जग-जाहिर हैं। किन्तु दोनों ही विदेशी उद्भव के होने से भारत के धार्मिक स्वरूप पर ज्यादा प्रभाव नहीं डाल सके।

6229. भारत में धर्म के आधार पर चार ही प्रमुख संगठन है – (1) मुसलमान, (2) संघ परिवार, (3) सिख, (4) ईसाई। धर्म के साथ संगठन का जुड़ना भी एक बुराई है। किसी भी पूजा-पद्धति के कारण कोई टकराव नहीं होता। टकराव होता है पूजा-पद्धति को आधार बनाकर संगठन बनाने और मजबूत करने की कोशिश के बीच।

6230. यदि कोई धर्म संगठन स्वरुप में है, तो वह सम्प्रदाय ही होगा, धर्म नहीं। धर्म में आई संगठन की बीमारी ने सात दशक से धर्म को खोखला कर दिया है। धर्म के नाम पर संगठनों का जीवित रहना धर्म प्रेमियों के लिए एक कलंक है। हम इस कलंक को सदा-सदा के लिए समाप्त करने में मिल-जुल कर खड़े हों। अब आशा की किरण जगी है। धर्म को संगठन पर अपनी निर्भरता कम करते जाना चाहिए। सभी धर्म प्रेमी व्यक्तियों को एकजुट होकर संगठनों को अलग-थलग कर देना चाहिए।

6231. वर्तमान समय में धर्म के दो अर्थ प्रचलित हैं- एक, वह जो जीवन-पद्धति से जुड़ा है और दूसरा, वह जो संगठन से जुड़ा है। धर्म किसी अन्य के साथ भेदभाव भी नहीं करता, किन्तु तथाकथित धर्म सम्प्रदाय स्वयं को धर्म कहकर इन सब दुर्गुणों का धर्म में समावेश कर देता है।

6232. किसी अन्य के हित में किये जाने वाले निःस्वार्थ कार्य को धर्म कहते हैं। धर्म न किसी पूजा-पद्धति से जुड़ा होता है, न ही धर्म कभी संगठन बन या बना सकता है। धर्म ईकाइगत कर्तव्य तक सीमित होता है। वर्तमान समय में दुनिया में धार्मिक आधार पर संगठित होकर राजनैतिक शक्ति संग्रह करने की इच्छा बलवती होती जा रही है। यह भी एक बड़ी समस्या है।

6233. प्राचीन समय में धर्म व्यक्तिगत होता था, कर्तव्य के साथ जुड़ा होता था। वर्तमान समय में धर्म संगठन के साथ भी जुड़कर विकृत हो गया है।

6234. हिन्दू विचारधारा धर्म की वास्तविक परिभाषा से जुड़ी हुई है, जबकि संघ परिवार साम्यवाद और इस्लाम संगठनात्मक परिभाषा से।

6235. दुनिया में कुल मिलाकर जितने अपराध धर्म के नाम पर होते हैं, उससे कई गुना कम अपराध वास्तविक अपराधियों द्वारा।

6236. धर्म की आदर्श परिभाषा संख्या विस्तार में बाधक होती है और संगठन प्रधान परिभाषा बहुत लाभदायक।

6237. गुण प्रधान धर्म, राज्य की विचारधारा को प्रभावित करने तक सीमित रहता है, जबकि संगठन प्रधान धर्म, राज्य की सभी गतिविधियों पर सहभागिता करना चाहता है। मुसलमान इस मामले में सबसे अधिक सक्रिय रहता है।

6238. गुण प्रधान धर्म व्यक्ति के मौलिक अधिकार को मानता है, संगठन प्रधान धर्म मौलिक अधिकार को अमान्य करके व्यक्ति को सामाजिक अधिकार तक सीमित करता है।

6239. संगठन, गुण कर्म स्वभाव अनुसार वर्ण आश्रम और जाति के आधार पर बने थे, जो धीरे-धीरे रुढ़ होकर विकृति में भी बदल रहे थे। फिर भी धर्म का अर्थ जीवन-पद्धति के साथ गहराई तक जुड़ा था।

6240. उपासना पद्धति के आधार पर बने संगठन सम्प्रदाय कहे जाते थे, धर्म नहीं। निर्णय का अन्तिम आधार वेद शास्त्र ही थे। यदि कोई विवाद होता था, तो अन्तिम निर्णय शास्त्रार्थ से होता था और ऐसा निर्णय ही सर्वमान्य था।

6241. बुद्ध ने पहली बार धर्म को संगठन का स्वरूप दिया, अन्यथा बुद्ध के पहले किसी अन्य महापुरुष ने धर्म को संगठन का रूप न देकर संगठन को सम्प्रदाय तक ही सीमित रखा था। बुद्ध ने पहली बार धम्मं शरणं गच्छामि को संघं शरणं गच्छामि के साथ जोड़ा।

6242. धर्म सिर्फ कर्तव्य की प्रेरणा मात्र देता था, किन्तु हस्तक्षेप कभी नहीं करता था। हिन्दू, मुसलमान, इसाई, सिख यदि संगठन के रूप में स्थापित हैं, तो निश्चित रूप से वे धार्मिक तो नहीं हो सकते, भले ही अधार्मिक हो या धर्म विरोधी। जब धर्म गुणों के रूप में स्थापित होता है, तब समाज को मजबूत करता है और जब संगठन के रूप में स्थापित होता है, तब समाज को तोड़ता है।

630 पुनर्जन्म

6300. पुनर्जन्म होता है या नहीं, यह अब तक प्रमाणित नहीं है। हिन्दू पुनर्जन्म को मानता है और इस्लाम नहीं मानता। सामान्यतया हिन्दू शान्तिप्रिय होता है और मुसलमान उग्रवादी। यदि कोई हिन्दू उग्रवादी है, तो संदेह होता है कि वह पिछले जन्म में मुसलमान रहा होगा। इसी तरह हो सकता है कि पिछले जन्म का हिन्दू वर्तमान में मुसलमान परिवार में जन्म लिया हो, तो ऐसा मुसलमान शांतिप्रिय हो सकता है।

6301. चाहे पुनर्जन्म होता हो या न होता हो, लेकिन समाज व्यवस्था को ठीक-ठीक चलाने के लिए पुनर्जन्म की धारणा को स्वीकार कर लेना अधिक अच्छा है।

631 वेद

6310. हिन्दुओं के अनुसार वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक है, अंतिम सत्य नहीं। वेद मार्गदर्शक हैं।

6311. वेदों का मानना एक गुण हो सकता है और न मानना अवगुण, किन्तु वेदों का न मानना कोई दुर्गुण नहीं कहा जा सकता।

632 भागवत गीता

6320. गीता को राष्ट्र या धर्म की सीमाओं में बांधना ठीक नहीं। मेरे विचार से गीता में समाजशास्त्र ज्यादा है और धर्मशास्त्र कम। राजनीति शास्त्र तो बिल्कुल है ही नहीं। स्वधर्मे निधनं श्रेयः पर धर्मों भयावहः में धर्म का वह अर्थ नहीं है, जो आज लोग कर रहे हैं।

6321. मैं तो यह समझता हूं कि गीता ने मेरे चरित्र पर प्रभाव डाला और सत्यार्थ प्रकाश ने मेरा ज्ञान बढ़ाया। मैं सत्यार्थ प्रकाश की प्रशंसा करते समय इस सत्य को कैसे छोड़ दूं कि मेरे प्रारंभिक जीवन में गीता ने बहुत प्रभाव डाला है। मैं गीता में अवगुण नहीं ढूंढ पाया।

6322. यदि पूरी दुनिया का सर्वे करें, तो पूरी दुनिया के धर्म ग्रंथ में दूसरे धर्म वालों से सम्मान पाने वाली पहली पुस्तक गीता है। दुनिया का कोई भी धर्मावलम्बी अपने धर्म ग्रंथ के बाद दूसरे नम्बर पर गीता को मानता है।

6323. गीता धर्म ग्रंथ है, किसी धर्म का ग्रंथ नहीं। गीता को हिन्दू-मुसलमान के बीच बांटकर देखना घातक है। हिन्दू यदि गीता पर अपना दावा प्रस्तुत करते हैं, तो वह उचित नहीं और मुसलमान ईसाई यदि गीता को हिन्दू धर्म ग्रंथ मानते हैं, तो वह भी ठीक नहीं।

633 मूर्ति-पूजा

6330. मूर्ति आस्था का केन्द्र होती है, यथार्थ नहीं। मूर्ति-पूजा का विरोध करना गलत है। मूर्ति-पूजा को निरर्थक तो कहा जा सकता है, किन्तु घातक या गलत कार्य नहीं।

633 पूजा-पद्धति

6331. भारत में पूजा-पद्धति के आधार पर बने संगठनों में चार ही प्रमुख हैं - (1) मुसलमान, (2) इसाई, (3) संघ परिवार, (4) सिख। ईसाई साम्प्रदायिक आधार पर कभी उग्रवाद या आतंकवाद का सहारा नहीं लेते।

634 धर्म-गुरू

6340. जब समाज व्यवस्था वर्ण आश्रम व्यवस्था के अनुसार ठीक चल रही हो, तो व्यक्ति को धर्म गुरूओं के बताये मार्ग पर चलना चाहिए और जब व्यवस्था विकृत हो जाये तब धर्म गुरूओं की बात बिना स्वयं विचार किये नहीं सुननी चाहिए। जब व्यवस्था ठीक हो, तो व्यक्ति को हमेशा शरीफ होना चाहिए और जब विकृत हो तब शराफत छोड़कर समझदार होना चाहिए। वर्तमान समय में पूरी व्यवस्था विकृत है।

6341. विकृत व्यवस्था में मृत महापुरुषों के विचार बिना विचारे कभी अनुकरण नहीं करने चाहिए। सुनिये सबकी, करिये मन की।

6342. वर्तमान समय में अधिकांश धर्म गुरू और राजनेता समाज को शराफत की ओर चलने की प्रेरणा देते हैं और स्वयं अधिक-से-अधिक चालाक बनना चाहते हैं। वह समाज को कर्तव्य, त्याग, दान का महत्व समझाते हैं, तो स्वयं अधिकार और संग्रह का महत्व समझते हैं।

640 तुष्टिकरण

6400. भारत में जातीय कटुता वृद्धि तो भारतीय संविधान की देन है, किन्तु भारत में साम्प्रदायिकता का विस्तार इस्लामिक तुष्टीकरण से जुड़ा

रहा है। जो काम विचारों से सम्भव था, उसे भावनात्मक स्वरूप से निपटाने के प्रयत्नों ने इस्लाम को सुरक्षित किया। इस्लाम की साम्प्रदायिक सोच होते हुए भी इस्लाम समाज से उतना अलग-थलग नहीं हो पाया, जितना होना चाहिए था।

6401. हम साम्प्रदायिकता की समीक्षा करें, तो पाते हैं कि कांग्रेस पार्टी के अधिकांश सदस्य आन्तरिक चर्चा में इस्लाम और ईसाइयत के पूरी तरह विरूद्ध हैं। यहां तक कि वे संघ परिवार की अपेक्षा भी अधिक विरूद्ध रहते हैं, किन्तु व्यक्तिगत स्थिति से बाहर निकलते ही वे पूरी तरह इस्लाम और ईसाइयत के बचाव में आ जाते हैं। कांग्रेस के लोग हर समय तैयार रहते हैं कि मुसलमान ईसाई चाहे जितनी भी साम्प्रदायिक बातें करे तो उनका पूरी तरह सब माफ है, किन्तु यदि हिन्दू ने आंशिक बात भी की, तो ये साम्प्रदायिकता का तुरन्त लेबल लगा देते हैं।

6402. साम्प्रदायिकता के मामले में दोनों राजनैतिक दलों का रूख स्पष्ट है। कांग्रेस संगठित साम्प्रदायिक मुसलामानों को अपने साथ जोड़कर रखना चाहती है, तो भाजपा संगठित हिन्दू संगठनों को।

6403. पंडित नेहरू ने साम्प्रदायिक हिन्दुओं को कुचलने की अपेक्षा साम्प्रदायिक मुसलमानों को प्रोत्साहन दिया, जिससे कि बैंलेंस बना रहे। सब जानते हैं कि स्वतंत्रता के पहले जब भारत का विभाजन निश्चित नहीं हुआ था, उस समय विभाजन को टालने के लिए मुसलमानों को अल्पसंख्यक संरक्षण देने की बात कही गई थी। जब इस संरक्षण से संतुष्ट न होकर मुसलमानों ने पाकिस्तान ले लिया और भारत का विभाजन हो गया, इसके बाद भी अल्पसंख्यक शब्द संविधान से नहीं हटाया गया। यदि उस समय

हिन्दू राष्ट्र और अल्पसंख्यक संरक्षण जैसे मुद्दों को हटाकर सरदार पटेल और पंडित नेहरू समान नागरिक संहिता के पक्ष में हो गये होते, तो भारत से साम्प्रदायिकता का यह कोढ़ मिट गया होता।

6404. साम्प्रदायिकता के मामले में भी नेहरू मुसलमानों की ओर अधिक झुके हुए थे और पटेल हिन्दुओं की ओर। स्वतंत्रता के पूर्व ही साम्प्रदायिकता के दो ठेकेदार मुसलमान और हिन्दू के नाम पर राजनैतिक लाभ उठाने के उद्देश्य से समाज का साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण कराने की लगातार कोशिश कर रहे थे, तो एक तीसरे ठेकेदार भीमराव अंबेडकर थे, जिन्होंने जातिवाद के नाम पर बहती गंगा में हाथ धोए।

641 मुस्लिम तुष्टीकरण साम्प्रदायिक तुष्टीकरण

6410. मुसलमानों का तुष्टीकरण समाज के लिए भी घातक है और देश के लिए भी। पूरे भारत में अल्पसंख्यक तुष्टीकरण के विरूद्ध भी जनमत प्रबल हो रहा है और आतंकवाद के विरूद्ध भी।

6411. स्वतंत्रता के शीघ्र बाद ही मध्य प्रदेश में नियोगी कमीशन बना, जिसने ईसाइयों के विरूद्ध अनेक गंभीर टिप्पणियाँ की। उस समय कांग्रेस पार्टी भी मुसलमानों के विषय में लगभग तटस्थ थी, किन्तु जैसे-जैसे वोट बैंक में हिन्दुओं का प्रतिशत संघ परिवार की ओर झुकता गया, वैसे-वैसे कांग्रेस पार्टी भी मुसलमानों की ओर झुकती चली गई और आज यह स्थिति है कि कांग्रेस पार्टी लगभग पूरी तरह मुसलमानों को प्रसन्न करने में लगी हुई है।

6412. बिलकुल साफ-साफ मुसलमानों का अत्याचार दिखने के बाद भी सभी दल येन-केन-प्रकारेण मुसलमानों के पक्ष में आंखबन्द

कर लेते हैं। सच बात तो यह है कि इसका सारा दोष संविधान निर्माताओं की नासमझी पर जाता है, जिन्होंने संविधान से समान नागरिक संहिता को तथा समाज व्यवस्था को भी निकाल दिया, परिवार व्यवस्था और गाँव व्यवस्था को भी बाहर कर दिया और इनकी जगह साम्प्रदायिकता के पोषक द्विअर्थी शब्द धर्म और जाति को डाल दिया।

6413. अल्पसंख्यक और पिछली सरकार के बीच एक ऐसा अघोषित समझौता था, जिसे हम साम्प्रदायिक हिन्दुस्तान का नाम दे सकते हैं। हम फिर से उस कालखंड की कल्पना नहीं कर सकते, जिसमें साम्प्रदायिक हिन्दुस्तान के रूप में 70 वर्ष हमने बिताये हैं। एक बार 70 वर्षों तक संविधान का दुरूपयोग करने वालों को सबक मिलना ही चाहिए। नेहरूवादी धर्मनिरपेक्षता तथा साम्यवादी समर्थन के आधार पर इन्होंने सत्तर वर्ष तक मनमाने तरीके से हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखा। स्वतंत्रता के बाद नरेन्द्र मोदी के आने के पूर्व तक साम्प्रदायिक मुसलमानों और स्वार्थी राजनेताओं ने मिलकर राजनैतिक सांठ-गांठ कर ली और आम शांतिप्रिय हिन्दुओं को दोयम दर्जे का नागरिक बनाकर रखा। कभी-कभी तो यह संदेह होता है कि नेहरू परिवार कितने प्रतिशत हिन्दू है और कितना नहीं। भविष्य में भी यह परिवार किस सम्प्रदाय से जुड़ेगा यह स्पष्ट नहीं है।

6414. अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक का विचार मूल रूप में घातक है। वास्तव में शरीफ लोगों के समक्ष अल्पसंख्यक होने का खतरा उपस्थित हो गया है।

642 अल्पसंख्यक तुष्टीकरण

6420. स्वतंत्रता के तत्काल बाद ही भारतीय राजनीति अल्पसंख्यक, बहुसंख्यक तुष्टिकरण के मार्ग पर चल पड़ी थी। बल्कि स्वतंत्रता के बाद इस काल खंड में तुष्टिकरण पूरी तरह नग्न रुप में सामने आया। अल्पसंख्यकों का अर्थ बदलकर मुसलमान तक सीमित हो गया। भारत अकेला ऐसा देश है, जहां का मुसलमान अल्पसंख्यक होते हुए भी अपने लिए विशेषाधिकार की सुविधा प्राप्त करता रहा और संवैधानिक आधार पर प्राप्त सुविधाओं से हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखा।

6421. यद्यपि मैं व्यक्तिगत रुप से किसी भी प्रकार के तुष्टीकरण के खिलाफ हूं, लेकिन यदि तुष्टीकरण करना मजबूरी हो तो अल्पसंख्यक तुष्टिकरण की अपेक्षा बहुसंख्यक तुष्टिकरण को तथा समाजवाद की अपेक्षा पूँजीवाद को कम घातक मानता हूं। क्योंकि इस्लाम, ईसाई, सिख आदि संगठन हैं, जबकि हिन्दू कोई संगठन नहीं है। अच्छी आदर्श व्यवस्था तो यह होती कि अल्पसंख्यक, बहुसंख्यक तुष्टिकरण को छोड़कर सर्वसंख्यक तुष्टिकरण का मार्ग पकड़ा जाता। अर्थात भारत धर्मों, जातियों का संघ न होकर एक सौ पैतालीस करोड़ व्यक्तियों या तीस करोड़ परिवारों का संघ होता।

6422. गांधी वर्ग सशक्तिकरण के विरुद्ध वर्ग समन्वय के पक्षधर थे। गांधी वास्तव में हिन्दू थे। भारत के विपक्षी दलों ने वर्ग सशक्तिकरण का भरपूर समर्थन किया तथा वे मोदी से भी यही अपेक्षा रखते हैं कि वे वर्ग सशक्तिकरण की गांधी विरोधी राह पर चलें। उन्होंने मुसलमानों की बहुत चिन्ता की। सच्चाई यह है कि स्वतंत्रता के

बाद आज तक भारत में सबसे ज्यादा मुसलमानों की चिन्ता की गई, यहां तक कि मुसलमानों को भारत का पहला नागरिक तक घोषित कर दिया।

6423. हिन्दू गुलामी सह सकता है, अत्याचार सह सकता है किन्तु न अत्याचार कर सकता है न ही गुलाम बना सकता है, इसका यह अर्थ नहीं कि हिन्दू अपनी शराफत के आधार पर गुलाम रहने और अत्याचार सहने की ही मुर्खता हमेशा करते रहें। किसी वर्ग के नाम पर विशेष अधिकार देना हमेशा घातक होता है। प्रवृत्ति के आधार पर विशेष सुरक्षा दी जा सकती है।

6424. जो लोग भारत को दारुल इस्लाम बनाने के उद्देश्य से भारत में घुसकर अपनी कोशिश जारी रखना चाहते हैं, ऐसे साम्प्रदायिक घुसपैठियों के मन में डर पैदा होना ही चाहिए। उनकी नीयत खराब है, उनकी नीतियां घातक है। ऐसे लोग जितनी जल्दी भारत से निकाल दिये जायें, उतना ही अच्छा है।

6425. भारत में धर्मनिरपेक्षता का मुखौटा लगाकर अल्पसंख्यक तुष्टिकरण का घातक प्रयास हुआ। 65 वर्षों तक हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखा गया। अब मोदी सरकार समान नागरिक संहिता चाहती है, तो सावरकरवादी विचारधारा मुसलमानों को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखना चाहता है। मरता हुआ विपक्ष मुसलमानों को ढाल बनाकर कुछ बचने के लिए प्रयत्नशील है। संघ परिवार को इस विपक्षी मुस्लिम एकता का लाभ मिल रहा है।

650 इस्लाम मुसलमान

6500. मुस्लिम देशों का तो कोई संविधान होता नहीं। वहां तो पन्द्रह

सौ वर्ष पूर्व बने संविधान का राज्य से समझौता करके उसकी ताकत पर कयामत तक पालन कराना ही व्यवस्था है। इस प्रकार के संविधान को ही शरिया कहा जाता है।

6501. अब तक मुसलमान लोकतंत्र के स्थान पर धर्म तंत्र को महत्व देते रहे हैं। यही कारण है कि मुस्लिम देशों के शासक धार्मिक भावना को सत्ता की पूंजी मानते रहे हैं।

6502. लोकतंत्र, मात्र इस्लामिक धर्म एवं तंत्र को ही चुनौती न होकर, सम्पूर्ण धर्म तंत्र को चुनौती है। धर्म तंत्र को लोकतंत्र के समक्ष झुकना ही होगा, चाहे मुस्लिम तंत्र हो या हिन्दू। मुस्लिम धर्म तंत्र की दुर्दशा का प्रारंभ हिन्दू कट्टरवादियों के लिए खुशी का समय न होकर सबक सीखने का समय है। आशा है कि खतरे के लक्षण आने के पूर्व सतर्क होने की कोशिश की जायेगी।

6503. मुसलमानों में विवाह एक आंतरिक समझौता है, जो कुछ शर्तों के आधार पर होता है। ये शर्तें उचित है या अनुचित, इसकी समीक्षा सरकार या कोई कानून तब तक नहीं कर सकता, जब तक दोनों के बीच सहमति है। मेरे विचार से किसी भी सरकार को इसकी समीक्षा करनी भी नहीं चाहिए, लेकिन वर्तमान में कई देशों में ऐसा हो रहा हैं।

6504. शाासन मुक्ति ही समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। भारत की सभी समस्याओं के समाधान का मार्ग यहीं से शुरू होता है। इस्लाम में तो धर्म के सांगठनिक स्वरूप का हस्तक्षेप राजनीति में सदा ही होता रहा है, किन्तु भारतीय संस्कृति में धर्म के गुणात्मक स्वरूप का ही राजनीति में समावेश हुआ है, सांगठनिक स्वरूप का नहीं।

6505. इस्लाम का समर्थन कांग्रेस की इच्छा न होकर राजनैतिक मजबूरी थी और चरित्र-पतन में समझौता संघ की इच्छा न होकर राजनैतिक मजबूरी रही। कांग्रेस ने इस्लाम के साथ समझौता किया और संघ ने सावरकरवादियों के साथ। दोनों ने सत्ता के लोभ में नीतियों को छोड़ना स्वीकार कर लिया। संघ ने तो काफी बदलाव कर लिया है, लेकिन कांग्रेस अभी दुविधा में पड़ी हुई है।

650 इस्लामिक आतंकवाद

6510. आतंकवाद के तीन चेहरे वर्तमान में दिखते हैं - (1) इस्लामिक विचारधारा को ढाल बनाकर, (2) मार्क्सवादी विचारधारा को आधार बनाकर, (3) संघ परिवार के संगठनों के साथ जुड़कर। इस्लामिक आतंकवाद अभी भी एक नम्बर पर जीवित है। यह आतंकवाद पाकिस्तान सरकार के लिए काम नहीं कर रहा बल्कि पाकिस्तान सरकार इस्लामिक आतंकवाद से दबी हुई है। इस्लाम और मुसलमान का अन्ध विरोध न करके कट्टरवाद का विरोध करे, चाहे वह साम्यवादी वामपंथी कट्टरवाद हो या संघ परिवार का चाहे इस्लामिक।

6511. कश्मीर की समस्या भी पाकिस्तानी विस्तारवाद न होकर, इस्लामिक विस्तारवाद के साथ जुड़ी है जिसके साथ पाकिस्तान है।

6512. भारत में इस्लामिक आतंकवाद के लिए सबसे बड़ा खतरा तो कांग्रेस पार्टी की सत्तर वर्षों से चली आ रही नीति में आमूलचूल बदलाव दिखता है।

6513. भारत और भारतीय संस्कृति इस्लामिक आतंकवाद से सर्वाधिक

प्रभावित है। सबसे अधिक खतरा भारत को है, इसलिए भारत को ही इस मामले में अधिक सावधान रहना है।

6514. इस्लामिक कट्टरवाद को समाप्त करने में यदि संघ परिवार कुछ अनैतिक भी करता है, तो हमें चुप रहना चाहिए क्योंकि नैतिकता की उम्मीद नैतिक लोगों के साथ ही करने का समय आ गया है। यदि अनैतिक लोगों के साथ कोई अनैतिक व्यवहार करता है, तो हमे बीच में नहीं कूदना चाहिए।

6515. विशेष परिस्थिति में शत्रु का शत्रु मित्र होता है और इस्लामिक आतंकवाद हमारा सबसे बड़ा शत्रु है।

6516. मैं मानता हूं कि यदि हम सोच समझकर आगे बढ़े, तो भारत से इस्लामिक आतंकवाद सदा-सदा के लिए समाप्त होना सम्भव है।

6517. आतंकवादी भी दो प्रकार के होते हैं – (1) संचालक, (2) संचालित। आतंकवादियों के संचालक अधिक खतरनाक होते है, क्योंकि वे अप्रत्यक्ष होते हैं। संचालित आतंकवादी ही समाज में प्रत्यक्ष दिखते हैं।

6518. पूरा भारत एकजुट होकर इस्लामिक आतंकवाद से मुक्त होने का प्रयास करे। साथ ही साथ भारत दुनिया के इस्लामिक आतंकवाद से मुक्ति में भी अपनी अच्छी भूमिका अदा करे।

651 इस्लाम में उदारता

6519. इतिहास की यह एक पहेली ही है कि इस्लाम पश्चिम में यूरोप तक गया तो वह काफी उदार और सुसंस्कृत था। लेकिन भारत का जिस इस्लाम से सामना हुआ, वह बहुत अनुदार, कट्टर और जुल्मी था।

6520. इस्लाम ने सबसे पहले हिंसा को सैद्धान्तिक आधार दिया। प्रारम्भ

से ही इस्लाम ने संगठन को शक्ति माना। गुण की अपेक्षा संख्या की चिन्ता का प्रारम्भ इस्लाम से हुआ। कुछ सूफी संतों ने इस्लाम का मार्ग बदलने की भी कोशिश की, किन्तु वे किनारे कर दिये गये। बेचारे सूफी संतों की दरगाह पर चादर के अतिरिक्त उनके विचारों का कोई उपयोग नहीं। मुसलमानों के हिंसक स्वरूप की ढाल के रूप में ही सूफी विचारों का उपयोग किया जाता है।

6521. इस्लाम जहां बहुमत में होता है वहां अधिकतम अत्याचार करता है और जहां अल्पमत में होता है, वहां न्याय, लोकतंत्र, मानवता की भीख मांगता है या अपनी संगठन शक्ति के बल पर अन्यों को ब्लैकमेल करता है। आज दुनिया का हर मुसलमान संदेह की नजर से देखा जा रहा है।

6522. मुसलमान जहां बहुमत में होता है, वहां शरीया का शासन लागू करता है और जहां अल्पमत में होता है, वहां या तो बराबरी का व्यवहार चाहता है या न्याय संगत। जो मुसलमान संगठनात्मक इस्लाम से हटकर धार्मिक इस्लाम की ओर बढ़ें, उन्हें सम्पूर्ण संरक्षण दिया जाना चाहिए।

6523. सवाल उठता है कि सभी मुसलमान तो एक जैसे नहीं। उनमें भी ऐसे लोगों की बड़ी आबादी है, जो ऐसी साम्प्रदायिकता से दूर रहना चाहते हैं, किन्तु ऐसा करते ही वे अपने मुसलमान साथियों का तो समर्थन और विश्वास खो देते हैं और हिन्दू उन पर विश्वास नहीं करते।

653 इस्लाम में कट्टरवाद

6530. इस्लाम मानवता के विरूद्ध सबसे अधिक खतरनाक माना जाता

है, तो साम्यवाद समाज व्यवस्था के विरूद्ध तानाशाही का समर्थक है। सारी दुनिया साम्यवाद को पहला खतरा मानती है, लेकिन भारत में इस्लाम को पहला खतरा माना जाता है।

6531. यह प्रश्न अवश्य विचारणीय है कि अधिकांश आतंकवादी मुसलमान ही क्यों होते हैं। भारत के आम मुसलमानों को यह साफ कहना होगा कि वे आतंकवाद विरोधी सरकारी गतिविधियों के समर्थक हैं, तटस्थ समीक्षक हैं या विरोधी?

6532. इस्लाम पर विचार करते समय ध्यान रखना होगा कि 10 प्रतिशत कट्टरवादी मुल्ला-मौलवी 80 प्रतिशत सामान्य मुसलमानों को अपने साथ जोड़े रखते हैं। जो 10 प्रतिशत आधुनिक सोच के मुसलमान हैं, उन्हें ये 90 प्रतिशत एकजुट होकर अलग-थलग कर देते हैं। इन बीच वाले 80 प्रतिशत मुसलमानों के विचार परिवर्तन की जरुरत है, जिससे वे कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवी के नियंत्रण से बाहर आ सकें। यह कार्य संबंधों के आधार पर भी हो सकता है और विचारों के आधार पर भी।

6533. यदि किसी देश में मुसलमान दस प्रतिशत तक हो तो मानवता के व्यवहार की याचना करते हैं, बीस प्रतिशत हो जाए तो बराबरी के लिए संघर्ष करते हैं और तीस प्रतिशत हो जाए तो अत्याचार शुरू कर देते हैं। यदि संख्या कम हो तो इनका आचरण दारूल अमन का होता है। संख्या बीस प्रतिशत से ऊपर हो जाए तो ये दारूल हरब का लक्ष्य बनाते हैं और संख्या तीस प्रतिशत से ऊपर होते ही इनका लक्ष्य दारूल इस्लाम बन जाता है। भारत का आम मुसलमान चाहे भारत के किसी भी कोने में रहे, किन्तु भारत को दारूल इस्लाम बनाने का लगातार प्रयत्न करता रहता है।

6534. मुसलमान दो प्रकार के हैं - (1) धार्मिक, (2) साम्प्रदायिक/संगठित। धार्मिक मुसलमान वह होते हैं, जो तौहिद (एकेश्वरवाद), रोजा, हज, नमाज और जकात को प्राथमिकता मानकर अन्य रीति-रिवाजों को गौण मानते हैं। संगठित मुसलमान संख्या विस्तार, वेषभूषा, दाढ़ी, विवाह, तलाक आदि को धार्मिकता की तुलना में अधिक महत्व देते हैं। शुक्रवार की नमाज में भी धार्मिक मुसलमान नमाज को महत्व देता है तो संगठित मुसलमान मौलाना की तकरीर को।

6535. कोरोना संकट में तबलीगियों के आचरण ने भारतीय मुसलमानों की पोल खोलकर रख दी। पहले हिन्दुओं के मन में मुसलमानों के विरूद्ध कुछ आक्रोश था, घृणा नहीं। अब आक्रोश का स्थान घृणा ने ले लिया है। जो काम संघ परिवार सत्तर वर्षों में नहीं कर सका, वह कार्य तबलीगियों की एक मूर्खता ने कर दिया। अब भारत के हर आदमी को पता चल गया कि भारतीय मुल्ला-मौलवी स्वयं संचालित नहीं हैं। ये मुल्ला-मौलवी विदेशी योजना से संचालित हैं। ये मुल्ला तो सिर्फ माध्यम हैं। वास्तव में तो भारत का मुसलमान विदेशी मुसलमानों की कठपुतली मात्र है।

6536. दुनिया में मुसलमानों की संख्या इतनी कम नहीं है कि उन्हें बिल्कुल अलग-थलग किया जा सके, और इसलिए दुनिया के मुसलमानों में शांतिप्रिय और युद्ध उन्मादी का विभाजन करना ही एकमात्र मार्ग है। इस्लाम और मुसलमान का अन्ध विरोध न करके कट्टरवाद का विरोध करना चाहिए, चाहे वह साम्यवादी वामपंथी कट्टरवाद हो या संघ परिवार का चाहे इस्लामिक। इसीलिए मैं सावरकरवादियों

से विशेष निवेदन करता हूं कि वे बदली हुई परिस्थितियों में अपनी सोच में बदलाव लायें।

6537. औसत मुसलमान न स्वयं शांति से रहना जानता है, न ही दूसरों को रहने देता है। वह मरना भी जानता है और मारना भी।

6538. इस्लामिक आतंकवाद को हौव्वा बनाकर अमेरिका ने इस्लाम के विरुद्ध विश्व जनमत जागृति करने में सफलता पाई। सारी दुनिया में मुसलमान संदेह के घेरे में आये।

6539. सभी कट्टरवादियों का एक ही चरित्र होता है, चाहे वह मुस्लिम कट्टरवादी हो या साम्यवादी या सावरकरवादी। तीनों ही स्वयं को शेष समाज का स्वयं भू-प्रतिनिधि मानते हैं और समाज के शेष समूह का प्रतिनिधित्व करना अपना अधिकार समझते हैं।

654 इस्लाम में संघर्ष

6540. इस्लाम यह जानता है कि दुनिया में कोई संस्कृति ऐसी नहीं, जो किसी-न-किसी बहाने अनन्तकाल तक लड़ सके। बहुत वर्षों के बाद कहीं-न-कहीं हार-थक कर समझौता करना उनका स्वभाव है। इसलिए इस्लाम कभी हार नहीं मानता और अंत में जीत जाता है।

6541. इस्लाम न धर्म है, न समाज। इन्हें एक संगठन से अधिक और कुछ कहना उचित नहीं, जहां भी ये कमजोर होते हैं, वहां ये न्याय की बात करते हैं और जहां मजबूत होते हैं, वहां स्वयं को सशक्त करने की।

6542. 1500 वर्षों में आम मुसलमानों के बीच यह धारणा मजबूती से स्थापित है कि वे यदि टकराते रहेंगे तो अंतिम लड़ाई वही जीतेंगे, क्योंकि खुदा उनके साथ है। न्याय-अन्याय अथवा सामाजिक

सोच उनके लिए कोई मतलब नहीं रखती। मुस्लिम समूह बर्बाद होने तक भी लड़ते रहते हैं, क्योंकि उन्हें विश्वास है कि जीतेंगे वही।

654 इस्लाम में हिंसा

6543. मुसलमान हिंसा पिपासु होता है। वह जहां भी रहेगा वहां न कभी शान्ति से रहेगा, न रहने देगा। जहां वह बहुमत में रहेगा वहां अपना शरिया कानून थोपेगा और जहां अल्पमत में रहेगा, वहां मानवता और शांति की बात करेगा।

6544. मुसलमान सपने में भी शांत नहीं रह सकता। टकराव उसकी संस्कृति बन चुकी है। जहां इस्लाम को टकराने के लिए कोई गैर इस्लामिक समूह उपलब्ध नहीं है वहां वे आपस में ही कट-मर रहे हैं।

6545. मेरे विचार में इस्लाम स्वयं में कोई बुराई नहीं है। मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूं, जो इस्लाम में आतंकवाद का कारण कुरान या अन्य मुस्लिम धर्म ग्रंथों में खोजते हैं। जिस तरह की हिंसा की बातें मुस्लिम धर्म ग्रंथों में लिखी हैं, वैसी बातें तो कई हिन्दू या अन्य धर्मग्रंथों में भी लिखी हैं, लेकिन हिन्दू शांत स्वभाव के होने के कारण ऐसी बातों को महत्व नहीं देता, जबकि मुसलमान ऐसी बातों को बहुत महत्व देता है।

6546. पूरी दुनिया के लिए संगठित इस्लाम हिंसा और आतंक का पर्याय बन गया है, चाहे पश्चिम के देश हों अथवा साम्यवादी रूस और चीन।

6547. यदि वर्तमान स्थिति का ठीक-ठीक आकलन किया जाये, तो संगठित और हिंसक इस्लाम भारत की सबसे बड़ी समस्या है।

इसे आपातकाल मानकर सारी शक्ति इस समस्या के समाधान में लगानी चाहिए। यह खतरा इसलिए और भी अधिक गंभीर हो जाता है कि भारत के मजबूत पड़ोसी देशों की भारत को अस्थिर करने में गंभीर रूचि है और भारत का संगठित इस्लाम उनके लिए सहायक हो सकता है।

655 इस्लाम में संख्या विस्तार

6550. इस्लाम में हिन्दू लड़की को मुसलमान बना लेना सामाजिक दृष्टि से कोई बुराई नहीं मानी जाती बल्कि कुछ-न-कुछ उसे अच्छा ही माना जाता है, जबकि हिन्दुओं में इस कार्य को पारिवारिक बुराई भी माना जाता है और सामाजिक बुराई भी। इसीलिए मैं बहुत पहले से अपने साथियों को यह सलाह देता रहा कि अपने घर के आसपास किसी मुसलमान को बसाने से बचना चाहिए।

6551. मुसलमानों को यह विश्वास है कि “फर्स्ट अटैक इज वेल डिफेंस” की कहावत उन्हें दुनिया में हर जगह सफलता दिलाती है। भारत में भी दिलाएगी ही और वे नहीं समझ पा रहे हैं कि सारी दुनिया में वे अलग-थलग पड़ रहे हैं। भारत भी उनमें से एक है।

6552. दुनिया के किसी भी धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र में इस्लाम की संख्या वृद्धि समाज को अधिक क्षति पहुंचाती है और राष्ट्र को कम। मुसलमानों के साथ सामाजिक संघर्ष की अपेक्षा संवैधानिक संघर्ष अधिक प्रभावकारी होगा।

6553. सारी दुनिया को विश्वास हो गया है कि मुसलमानों को न्याय-अन्याय से कुछ भी लेना-देना नहीं है। धर्म का उनका अर्थ ही होता है "संख्या विस्तार"।

6554. वास्तविक समस्या इस्लामिक विस्तारवाद से जुड़ी है। सारी दुनिया में जिस तरह दारुल इस्लाम के संगठित प्रयास हो रहे हैं, उन प्रयासों में भारत का कश्मीर एक ऐसा क्षेत्र है, जो वर्तमान में उस प्रयास को रोकने का युद्ध क्षेत्र है। यदि भारत कश्मीर को आधार बनाकर किसी तरह भारत में मुस्लिम संगठनों का घमंड चूर-चूर करने में सफल रहा, तो यह दुनिया के लिए एक अच्छी पहल होगी।

6555. मूल समस्या यह है कि इस्लाम ने पूरी दुनिया को मुसलमान बनाना अपना लक्ष्य बनाया है और उसके लिए बल प्रयोग सहित किसी भी मार्ग का उपयोग किया जा सकता है। ईसाइयत ने पूरी दुनिया को ईसाई बनाने का संकल्प किया है और उसके लिए बल प्रयोग छोड़कर अन्य सभी मार्ग अपनाये जा सकते हैं जिसमें धन शामिल है। लेकिन हिन्दू विचार-प्रचार के माध्यम से ही दुनिया को आर्य बनाना चाहता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अधिकतम स्वतंत्रता की गारंटी दी गयी है।

6556. दुनिया भर के साम्प्रदायिक मुसलमान संगठित होकर भारत की हिन्दू बाहुल आबादी को मुस्लिम बाहुल बनाने की कोशिश में लगे हैं। उनका एक ही घोषित लक्ष्य है कि भारत को दारूल इस्लाम में बदलने के लिए हिन्दू का अल्पमत होना आवश्यक है।

6557. दुनिया में मुसलमान यदि एक गंभीर समस्या के रूप में स्थापित हो रहा है तो उसका कारण धर्म ग्रंथ कुरान है और उसके प्रमुख धर्म गुरू कुरान के उस खतरनाक अंश को मुसलमानों तक ज्यादा प्रयास करके पहुंचाते हैं।

6558. इस्लाम और ईसाइयत अपनी संख्यात्मक वृद्धि के लिए सभी प्रकार उचित-अनुचित साधनों का प्रयोग करते हैं।

6559. चौदह सौ वर्षों तक इस्लाम अपनी संगठन शक्ति के बल पर ही अपना विस्तार करता रहा। अब ऐसे लक्षण दिखने लगे हैं कि इस्लाम को या तो अपनी संगठनात्मक विचारधारा छोड़नी होगी अथवा अपने समापन की प्रतिक्षा करनी होगी।

656 इस्लाम और संगठन

6560. धर्म या तो व्यक्तिगत होता है या संस्था के स्वरूप में। धर्म कभी संगठन का रूप नहीं लेता, क्योंकि संगठन की आवश्यकता कर्तव्य के साथ कभी नहीं जुड़ती। इस्लाम पूरी तरह संगठन है और हिन्दुत्व पूरी तरह धर्म। इस्लाम सिर्फ मुसलमानों को समाज मानता है, अन्य सम्प्रदायों को नहीं किन्तु हिन्दुत्व सम्पूर्ण विश्व के मनुष्यों को मिलाकर समाज मानता है।

6561. संगठन के आधार पर शक्ति सम्पन्न होकर इस्लाम ने सफलता पाई है यह सच है, किन्तु हिन्दू हार मानकर हिन्दुत्व की धारा संगठन की दिशा में मोड़ दे, ऐसी परिस्थितियां अब नहीं है। अब तो इस्लाम पूरी दुनिया में अविश्वसनीय हो गया है।

6562. इस्लाम पूरी दुनिया में एक संगठन है, जो शत-प्रतिशत साम्प्रदायिक है। इस्लाम को विचारों के आधार पर चुनौती देने की अपेक्षा साम्प्रदायिक आधार पर चुनौती देने का बीड़ा संघ परिवार ने उठाया और इस तरह हिन्दुत्व ही अपने विचारों से हटकर साम्प्रदायिकता की ओर बढ़ने लगा। अब नरेन्द्र मोदी, मोहन भगवत की जोड़ी ने सारा वातावरण बदल दिया है। अब हिन्दुस्तान के लिए उचित होगा कि वह साम्प्रदायिकता को छोड़कर वैचारिक हिन्दुत्व की दिशा में आगे बढ़े।

6563. इस्लाम की व्यवस्था पूरी तरह गलत है, क्योंकि उस व्यवस्था में स्वतंत्रता और समानता को पूरी तरह एक पक्षीय तरीके से बाधित

किया गया है। इन चौदह सौ वर्षों में संगठित इस्लाम ने धार्मिक इस्लाम को भी लगभग समाप्त-सा कर दिया।

6564. दुनिया में जहां भी संगठित मुसलमान हैं, वे किसी अन्य को कभी भी शान्ति से नहीं रहने देते, क्योंकि शान्त रहना उन्होंने बचपन से सीखा ही नहीं है। ये कभी सहजीवन में विश्वास नहीं करते। इनका सहजीवन अपने संगठन तक सीमित है। इनका व्यक्तिगत जीवन संगठन प्रधान होता है। यही कारण है कि इनमें से कुछ अतिवादी लोग आतंकवाद की दिशा में चले जाते हैं। दुनिया में जहां भी संगठित मुसलमान हैं, वे न स्वयं शान्ति से रहेंगे न दूसरो को रहने देंगे।

6565. दुनिया में दो प्रवृत्तियां घातक हैं - (1) बल, (2) छल। साम्यवाद दुनिया की सबसे अधिक खतरनाक विचारधारा है, जो छल को अधिक महत्व देती है और इस्लाम दुनिया का सर्वाधिक खतरनाक संगठन है, जो बल को अधिक महत्व देता है। दुनिया में इस्लाम और साम्यवाद में कहीं एकता नहीं है, किन्तु भारत में दोनों खतरनाक समूह एक साथ मिलकर काम करते हैं।

6566. संगठन में शक्ति होती है। इस्लाम धर्म के नाम पर एक संगठन है। संगठन शक्ति के बल पर इस्लाम ने चौदह सौ वर्षों में ही बहुत ज्यादा उन्नति कर ली। हिन्दुत्व विचारों के आधार पर आगे बढ़ता है, तो ईसाइयत प्रेम, सेवा, सद्भाव, लोभ, लालच के आधार पर। दोनों ही इस्लाम की संगठन शक्ति के समक्ष नहीं टिक सके। पिछले 10-11 वर्षों में नरेन्द्र मोदी के आने के बाद पूरी दुनिया इस्लाम से सतर्क हो रही है। चीन इस सतर्कता में सबसे सफल रहा है। चीन के प्रयत्न सबसे अच्छे हैं। भारत भी ठीक दिशा में है।

6567. इस्लाम की संगठन शक्ति पूरी दुनिया के लिए चुनौती है। भारत को भी इसे समझना चाहिए, किन्तु सावरकरवाद इसमें बड़ी बाधा है। सावरकरवाद समस्या के समाधान की अपेक्षा अपना लाभ

उठाना चाहता है। सावरकरवादियों की कार्यप्रणाली पूरी तरह संगठनात्मक है, धार्मिक नहीं। सावरकरवाद पहले समान नागरिक संहिता की बात करता था, तो अब हिन्दू राष्ट्र की करने लगा।

6568. इस्लाम दुनिया का सबसे अधिक खतरनाक संगठन है, क्योंकि इस संगठन ने धर्म का नकाब भी लगा लिया है और स्वयं को सत्ता के साथ भी जोड़ लिया है।

6569. भारत का मुसलमान भी दुनिया के मुसलमानों की तरह ही राष्ट्र की तुलना में संगठन को अधिक महत्वपूर्ण मानता है। अब भारतीय मुसलमानों को धर्म और संगठन में से एक को चुनना होगा। अब न्यायपालिका से भी वामपंथी विचारों के लोग हटते जा रहे हैं, विधायिका में भी अब पहले की स्थिति नहीं बची है। कार्यपालिका भी निरंतर रूख बदल रही है। उचित है कि भारतीय मुसलमान अपनी 1400 वर्ष की जारी नीतियों पर फिर से विचार करें।

6570. धार्मिक इस्लाम समाज व्यवस्था में सहायक होता है और संगठित इस्लाम खतरनाक। यह स्थिति पूरी दुनिया की है। वर्तमान समय में पूरी दुनिया के समक्ष संगठित इस्लाम सबसे बड़ी समस्या है। भारत के लिए तो यह समस्या खतरनाक स्वरुप धारण कर चुकी है।

6571. अन्य सभी सम्प्रदायों की तुलना में मुसलमान सहजीवन, सर्व-धर्म समभाव की अपेक्षा संगठन और धार्मिक संख्याविस्तार को अधिक महत्व देता है।

6572. इस्लामिक धर्म तंत्र धार्मिक मामलों में तो ईसाइयों के साथ है, किन्तु लोकतंत्र के मामले में तानाशाह साम्यवादियों के साथ।

6573. वर्तमान समय में इस्लाम संगठन शक्ति के आधार पर जितनी तेज गति से आगे बढ़ा, उतनी ही तेज गति से बदनाम भी हुआ और उसका एकमात्र धर्म ग्रंथ कुरान प्रेरक है, तो मुसलमान प्रेरित। कुरान में ही गुण प्रधान मुसलमान आमतौर पर भावना प्रधान होता है,

प्रेरित होता है, धर्म भीरू होता है और ईमानदार होता है। मुसलमान संगठनात्मक विस्तार के लिए जो भी हिंसा और अपराध करता है, उसकी प्रेरणा भी उसे कुरान से ही प्राप्त होती है।

6574. यदि हम धर्म के संबंध में विचार करें, तो इस्लाम पूरे विश्व का सर्वाधिक सशक्त संगठन है। इस्लाम जितना ही अधिक सशक्त है, उतना ही अधिक साम्प्रदायिक भी है।

6575. मुसलमान चाहे जिस देश में रहे, वह संगठन बनायेगा ही और वर्ग विद्वेष बढ़ाकर विभाजन भी करायेगा ही, विभाजन उसका लक्ष्य होता है, मजबूरी नहीं।

660 पाकिस्तान और विदेश

6600. मुस्लिम देशों का तो कोई संविधान होता नहीं। वहां तो पन्द्रह सौ वर्ष पूर्व बने संविधान का राज्य से समझौता करके उसकी ताकत पर कयामत तक पालन कराना ही व्यवस्था है।

6601. इस्लाम और मुसलमान का अन्ध विरोध न करके कट्टरवाद का विरोध करना चाहिए, चाहे वह साम्यवादी वामपंथी कट्टरवाद हो या संघ परिवार का चाहे इस्लामिक।

6602. इस दारूल इस्लाम के संघर्ष में भले ही पाकिस्तान कश्मीरी मुसलमानों के साथ प्रत्यक्ष दिखता हो, किन्तु कश्मीरियों को दुनिया भर के साम्प्रदायिक मुसलमानों की सहानुभूति मिलती रही, सिर्फ मुस्लिम देशों की नहीं।

6603. जो भी मुसलमान भागकर आये हैं, उनमें शायद ही कोई ऐसा, होगा जो किसी भय के कारण भारत आया हो। आमतौर पर वह सुविधाओं के लालच में भारत आया है, लेकिन यह बात भी साफ है कि वह भारत में कुछ समय तक रह जाने के बाद भारत के संगठित मुसलमानों के साथ जुड़ जाता है, धार्मिक मुसलमानों

के साथ बिल्कुल नहीं जुड़ता। इस तरह यह बात लगभग निश्चित है कि वह भारत के लिए साम्प्रदायिक समस्याओं के विस्तार में सहयोगी बन जाता है, समाधान नहीं।

6604. इस्लामिक संस्कृति यह अच्छी तरह समझती है कि वह अपने प्रमुख प्रतिद्वंदी हिन्दू और ईसाई से अधिक संगठित भी है और उस शाक्ति का अधिकतम उपयोग भी करना जानती है। इस्लाम ने अब तक अपनी इस शाक्ति का अधिकतम लाभ उठाया भी है।

661 मुसलमान और कट्टरवादी हिन्दू

6610. इस्लाम की बढ़ती ताकत से आतंकित कुछ लोगों ने धर्म, राज्य और समाज को जोड़ने की जल्दबाजी करके भारतीय संस्कृति को कमजोर ही किया है, मजबूत नहीं। अब भारत में हिन्दुओं को अपनी मूल संस्कृति और विचारधारा तक सीमित हो जाना चाहिए।

6611. मुसलमानों और सावरकरवादियों ने न कभी लोकतंत्र को समझा, न ही उन्हें समझने की जरूरत थी। भारत के अधिकांश मुसलमान समझदारी में सावरकरवादियों के भाईबंधु ही रहे। भारत में अपना धार्मिक संगठन मजबूत करना है, अपनी संख्या बढ़ाना है, चाहे लोकतंत्र रहे या अन्य तंत्र। इससे अधिक इनको मतलब नहीं। सावरकरवादियों की अपेक्षा इस्लामिक परिवार के पास और भी कम समझदारी थी।

6612.`मानवता की आवाज उठाते ही मुस्लिम जगत या सावरकरवादियों का भारी विरोध सम्भव है। इसलिए हिन्दू चुप रहना ही बेहतर समझता है। उससे भी ज्यादा आश्चर्य तो हिन्दू विरोधी राजनैतिक दलों के रवैये पर है, जिसे न समाज की परवाह है न राष्ट्र की। उन्हें परवाह है सिर्फ एकजुट मुस्लिम वोट और जाति विभाजित हिन्दुओं की। यदि मुसलमान इकट्ठे होकर थोक में उसे

साथ दे दें, तो चाहे वे कितने भी अमानवीय कार्य क्यों न करें, ये पार्टियां उनकी वकालत करती रहेंगी।

6613. इस्लाम किसी भी आधार पर न धर्म है, न समाज व्यवस्था। इस्लाम अपने प्रारम्भ से ही संगठन रहा। यही कारण है कि उसमें संगठन के गुण-अवगुण सदा विद्यमान रहे हैं। हिन्दुओं में सावरकरवादियों को छोड़कर अन्य हिन्दू किसी संगठन से नहीं जुड़े हैं। मुसलमानों में संगठित मुसलमानों की संख्या 90 प्रतिशत मानी जाती है तो हिन्दुओं में ऐसे लोगों की संख्या 20 प्रतिशत है।

6614. इस्लाम का उत्तर हिन्दू राष्ट्र न है, न हो सकता है। जो लोग संगठित हिन्दू की आवाज उठाते हैं, वे गलत हैं। क्योंकि हिन्दू पुरी दुनिया में सौ करोड़ है तो मुसलमान डेढ़ सौ करोड़। ताकत में भी हिन्दुओं की तुलना में मुसलमान मजबूत है। इसलिए हिन्दुओं को इस्लाम के विरूद्ध एकजुटता का नारा देना चाहिए। स्पष्ट कहिये कि मुसलमानों की संख्या डेढ़ सौ करोड़ है, तो हमारी संख्या 600 करोड़ है।

6615. जिस इस्लाम को भारत में छेड़ने से बड़े-बड़े लोग भय खाते थे, उस इस्लाम को गुजरात में मोदी ने सभी कानून, न्याय, मानवता, हिन्दुत्व आदि को किनारे रखते हुए सबक सिखा दिया और गुजरात का मुसलमान भी मोदी को वोट देने लगा है। उसी का आज परिणाम दिख रहा है कि मोदी सारी दुनिया में लोकप्रिय हैं।

6616. यह प्रश्न अवश्य विचारणीय है कि अधिकांश आतंकवादी मुसलमान ही क्यों होते हैं? भारत के आम मुसलमानों को यह साफ कहना होगा कि वे आतंकवाद विरोधी सरकारी गतिविधियों के समर्थक हैं, तटस्थ समीक्षक हैं, या विरोधी?

6617. मंदिर के मामले में काशी, मथुरा के लिए हिन्दुओं को मजबूत रहना उचित है। संगठित इस्लाम की इस मामले में कमर टूट जानी चाहिए।

6618. संघ परिवार चाहे जितना भी उत्तेजित करने का प्रयास करे, हमारे मुसलमान भाई किसी भी परिस्थिति में जरा भी उत्तेजित न हों। किसी भी परिस्थिति में भारत में हिन्दू-मुसलमान का ध्रुवीकरण मुसलमानों के लिए घातक होगा।

662 इस्लाम और हिन्दुत्व

6620. मुसलमान और हिन्दू के बीच एक खास फर्क होता है कि मुसलमान राष्ट्र और समाज से ऊपर धर्म को मानता है, जबकि हिन्दू धर्म और राष्ट्र से ऊपर समाज को मानता है। 80 प्रतिशत हिन्दू किसी धार्मिक संगठन का सदस्य नहीं होता। धार्मिक संस्थाओं से जुड़ा रहता है। दूसरी ओर 80 प्रतिशत मुसलमान संगठन से अधिक जुड़े रहे और संस्थाओं से कम। क्या यह उचित नहीं होता कि भारत में रहने का विकल्प चुनने के बाद ये मुसलमान धर्म की अपेक्षा समाज को ज्यादा महत्व देते। इन्होंने स्वतंत्रता के पूर्व की संगठित रहने की आदत को छोड़ा क्यों नहीं?

6621. रुढ़िवादी मुसलमानों ने मूर्तिपूजा के नाम पर रुढ़िवादी हिन्दुओं के साथ कितना अन्याय और अत्याचार किया, वह भी इतिहास में दर्ज है। दुनिया का इतिहास रुढ़िवादियों और आधुनिकता के अंधसमर्थकों के अत्याचारों से काला हो चुका है।

6622. मैं जानता हूं कि दुनिया में मुसलमान कभी किसी भी परिस्थिति में सहजीवन को स्वीकार नहीं करता। यदि वह कमजोर होता है तो दबकर मजबूत होने की प्रतिक्षा करता है और मजबूत होता है, तो दबाकर दूसरे के समाप्त होने का प्रयत्न करता है। वह हर समय मरने-मारने के लिए तैयार रहता है। वह अनंतकाल तक लड़ने में विश्वास करता है, क्योंकि वह इसे धर्म युद्ध समझता है। इस

तरह यह सोचना ही व्यर्थ है कि कश्मीर के मुस्लिम बहुमत को कभी समझाया जा सकता है। क्योंकि वह समाज से और राष्ट्र से भी ऊपर धर्म को मानता है। जो लोग कश्मीर में मुसलमानों को समझाने की बात करते हैं, उनकी नीयत खराब है।

6623. मुसलमान संगठनात्मक चर्चा में शामिल होने को धर्म का ही एक भाग मानता है, किन्तु हिन्दू पूजा पद्धति के साथ किसी संगठनात्मक चर्चा को धर्म का भाग नहीं मानता। हिन्दू ही एकमात्र ऐसी जमात है, जो न कभी संगठन का सहारा लेती है, न किसी उग्रवाद का। आतंकवाद का तो प्रश्न ही नहीं है।

6624. हमारा उद्देश्य इस्लाम से टकराना या निपटाना नहीं होना चाहिए बल्कि हमारा उद्देश्य 70 वर्षों में मुसलमानों का जो मनोबल ज्यादा बढ़ा था, उसे घटाने तक ही सीमित होना चाहिए।

6625. इस्लाम हिन्दुत्व को निगल जाना चाहता है, जबकि संघ अपने राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हिन्दुत्व को बचाना चाहता है। संघ किसी भी रूप में इस्लाम को निगल लेने की नहीं सोचता। यदि मुसलमानों में संगठन की अपेक्षा धार्मिक सोच को विकसित किया जाये, तो वे बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

6626. मुसलमान धर्म को ही मानवता मानता है और हिन्दुत्व मानवता को ही धर्म।

663 इस्लाम और वर्तमान दुनिया की स्थिति

6630. इस्लाम तथा मुसलमानों का मामला अभी अस्पष्ट है। अब मुसलमानों को यह बात अन्तिम रूप से स्वीकार कर लेनी चाहिए कि दुनिया शान्ति पूर्ण सह अस्तित्व की ओर बढ़ रही है। अब तक उन्होंने संगठन के बल पर आगे बढ़ने का जो लाभ उठाया है, उसमें

अब आगे कठिनाई भी हो सकती है। अब मुसलमानों के लिए दो टूक निर्णय का समय आ गया है कि या तो वे धर्म और राज्य को बिल्कुल अलग-अलग करें या विश्व अविश्वास के परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहें।

6631. अन्य देशों के लोगों ने इस्लाम को मानवता के विरूद्ध शत्रु नम्बर एक मानना शुरू कर दिया है और वहां की राजनीति का स्तर भारत सरीखा नीचे नहीं गिरा है। इसलिए वहां जनहित राष्ट्रहित से ऊपर है और राष्ट्रहित दलहित से। वहां राजनीति में सत्ता पक्ष को विपक्ष माना जाता है, शत्रु पक्ष नहीं।

6632. विस्तारवादी चरित्र के कारण आज इस्लाम पूरी दुनिया के लिए समस्या बन गया है। अब इस्लाम को या तो अपनी ताकत पर लड़ना होगा या अपनी विश्व इस्लामीकरण की धारणा से पीछे हटना होगा। क्योंकि अब दुनिया में संगठित इस्लाम की पोल खुल चुकी है।

6633. भारत का मुसलमान विश्व इस्लामीकरण की अवधारणा से पीछे हटे तो ठीक है अन्यथा उसका मनोबल उस सीमा तक तोड़ दिया जाय कि वह गुजरात सरीखा सीधी राह चलने लगे। मैं अपने मुसलमान भाइयों को सलाह देता हूं कि वे देश-काल परिस्थिति के अनुसार अपनी धारणाएं बदलें। वे धर्म को धर्म तक ही सीमित करें। राष्ट्र, धर्म और समाज को एक साथ न जोड़ें। वे चाहे मजबूत हों या कमजोर, न्याय की ओर झुकें और संगठन की ओर से हटें।

6634. मुसलमानों को चाहिए कि वे कोई अपनी ऐसी पहचान बनायें जिससे उनकी शान्तिप्रियता के प्रति प्रतिबद्धता को आसानी से पहचाना जा सके। अथवा वे अपना पूजा स्थान अलग कर लें अथवा नाम के साथ कोई शब्द जोड़ लें या दाढ़ी मूंछ में फेर करें,

लेकिन कोई ना कोई एक सार्वजनिक पहचान तो होनी ही चाहिए कि यह मुसलमान कट्टरवादी मुसलमानों के समूह के साथ नहीं है।

6635. किसी कट्टर इस्लामिक देश में नरेन्द्र मोदी के हाथों हिन्दू मंदिर की आधारशिला एक बदलते इस्लाम का शुभ संकेत है।

6636. मुसलमान पूरी दुनिया का एक ऐसा विचित्र समुदाय है, जो सारी दुनिया में जहां बहुसंख्यक है, वहां विशेष अधिकार लेता है और अल्पसंख्यक है तब भी उसे विशेष अधिकार ही चाहिए।

6637. इस्लाम के अनुयायियों का जैसा आचरण विश्व में दिख रहा है, वह बहुत ही खतरनाक है। अब तक इस्लाम इसी खतरनाक मार्ग पर चलकर इतना आगे बढ़ने में सफल रहा है, किन्तु लगता है कि यह खतरनाक मार्ग इस्लाम की समाप्ति का भी आधार बन सकता है। सारी दुनिया में मुसलमान संदेह के घेरे में है। अब मुसलमानों को बहुत तेज गति से साम्प्रदायिक गतिविधियों से बाहर निकलना होगा।

6638. जब तक संगठित मुसलमानों को धार्मिक मुसलमान की दिशा में प्रेरित या मजबूर नहीं किया जायेगा, तब तक न भारत शांत रहेगा, न दुनिया। साम्यवाद और संगठित इस्लाम से मुकाबला करने के लिए सारी दुनिया को एकजुट होना चाहिए और उस क्रम में कम-से-कम इस्लामिक संगठनों के अतिरिक्त अन्य सबको तो एकजुट होना ही होगा। इस एकजुटता में धार्मिक मुसलमानों को भी साथ हो जाना चाहिए।

6639. दुनिया में मुसलमान अकेला ऐसा समुदाय है, जो अन्य समुदायों की तुलना में सामाजिक-धार्मिक षड्यंत्रों के आधार पर दूसरे देश में अधिक पलायन करता है।

6640. चौदह सौ वर्षों के बाद दुनिया को यह महसूस हुआ है कि संगठित

इस्लाम दुनिया के लिए सबसे बड़ा खतरा है। इस खतरे से निपटने में भारत का अपना भी हित निहित है और विश्व का भी। इस संकट काल में किसी भावना में बहकर मानवता के नाम पर अथवा राजनीतिक स्वार्थ में की गई उनकी कोई भूल देश व संपूर्ण विश्व-समाज को निर्णायक नुकसान पहुंचाएगी, इसलिए मेरा सुझाव है कि इसके प्रति सावधान होकर निर्णय करना चाहिए।

6641. मुसलमान यदि बहुमत में होगा तो अल्पमत को समान अधिकार भी नहीं देगा, किन्तु अल्पमत में होगा तो बहुमत से विशेषाधिकार मांगेगा।

6642. मुसलमान न कश्मीर को शान्त रहने देगा, न चिचेन्या को और न ही लेबनान को। मजबूत होगा तो न्याय की बात नहीं करेगा, किन्तु कमजोर होगा तो सम्पूर्ण विश्व में न्याय और मानवता की भीख मांगता फिरेगा। सारी दुनिया में कोई ऐसा देश नहीं, जहां मुसलमान दूसरों को शान्ति से रहने देता हो। इन्होंने कभी सहजीवन सीखा ही नहीं।

6643. मुसलमान व्यक्तिगत मामले में बहुत विश्वसनीय होते हैं तथा संगठनात्मक स्वरूप में बहुत अविश्वसनीय। संगठनात्मक मामला सामने आने पर वे अपनी व्यक्तिगत विश्वसनीयता का भी दुरूप्रयोग करते हैं।

664 भारतीय मुसलमान

6644. भारतीय मुसलमान, पाकिस्तान की अपेक्षा इस्लामिक कट्टरवाद से ज्यादा प्रभावित होता है, क्योंकि मुसलमान बचपन से ही कट्टर हो जाता है।

6645. यदि भारत के हिन्दू वर्तमान भारत में ईश निन्दा कानून बनाना

चाहें, जैसा पाकिस्तान या अफगानिस्तान में है, तो क्या यहां के मुसलमान चुप रहेंगे? इसलिए सबसे अच्छा यही होगा कि भारत का मुसलमान, पाकिस्तान या अफगानिस्तान के ईश निन्दा कानूनों का खुलकर विरोध करें।

6646. इस्लाम किसी भी आधार पर न धर्म है न समाज व्यवस्था। इस्लाम अपने प्रारम्भ से ही संगठन रहा। यही कारण है कि उसमें संगठन के गुण-अवगुण विद्यमान रहे और हैं। हिन्दुओं में सावरकरवादियों को छोड़कर अन्य हिन्दू किसी संगठन से नहीं जुड़े हैं। मुसलमानों में संगठित मुसलमानों की संख्या 90 प्रतिशत मानी जाती है तो हिन्दुओं में ऐसे लोगों की संख्या 20 प्रतिशत है।

6647. मैं पूरी तरह आश्वस्त हूं कि साम्यवाद की तरह ही दुनिया संगठित इस्लाम के ऊंट को भी पहाड़ के नीचे ले आयेगी और भारत इस कार्य में सफलतापूर्वक पहल कर सकेगा।

6648. मेरी अपने मुसलमान भाइयों से तीन अपेक्षाएं है – (1) वे कश्मीर का भारत में पूर्ण विलय मान लें और कश्मीर में टकरा रही उग्रवादी विचारधारा को बल पूर्वक कुचले जाने का आंख मूंदकर समर्थन करें। 2. वे रोहिंग्या मुसलमानों का किसी भी आधार पर समर्थन करके अपने विश्वास को खतम न होने दें। 3. वे कुरान को अंतिम सत्य मानने की धारणा को स्वयं तक सीमित रखें। उस आधार पर किसी तरह की क्रिया में संलग्न न हों कुरान के धार्मिक अंश का अनुकरण करें तथा संगठनात्मक अंश को छोड़ दें। अल्पकाल के लिए शुक्रवार की नमाज में नमाज के बाद होने वाली तकरीर से अपने को दूर कर लें।

6649. भारत का अधिकांश मुसलमान स्वयं को शेर समझता है और दूसरों को गाय। उसके अन्दर यह भावना भरी हुई है कि वे भारत के शासक थे और अंग्रेजों ने मुसलमानों से भारत की सत्ता ली

थी। इसलिए सत्ता पर उनका पहला अधिकार बनता है। धीरे-धीरे दुनिया में जिस तरह का वातावरण बन रहा है, उसमें मुसलमानों को या तो धर्म की दिशा में जाना होगा या समापन की प्रतीक्षा करें। इस टकराव की शुरूआत भारत से सम्भव है और इस टकराव के पहले सावरकरवादियों को भी अपनी नीतियों पर फिर से विचार करना चाहिए।

6650. भारत में धार्मिक मुसलमानों की संख्या लगातार घट रही है। सूफी मुसलमान आमतौर पर धार्मिक होते हैं, किन्तु उनकी संख्या भी घट रही है। संघ परिवार किसी मुसलमान को धार्मिक नहीं मानता, जो कि गलत है।

6651. स्पष्ट है कि भारत का भी बहुसंख्यक मुसलमान स्वयं को शेर और दूसरों को गाय मानता है। दूसरी ओर भारत का बहुसंख्यक हिन्दू स्वयं को गाय और संगठित मुसलमानों को शेर मानते हैं। यदि गाय शेर से दूरी बढ़ाने की सतर्कता रखे, तो इसमें शेर को शिकायत क्यों?

665 भारतीय परिस्थिति

6652. कहावत है कि एक कम्बल पर पांच साधु आराम से सो सकते हैं, किन्तु एक राज्य में दो राजा बिना मरे-मारे एक साथ शान्ति से नहीं रह सकते।

6653. यदि पाकिस्तान में कानून बनाकर अहमदिया को मुसलमान के बाहर कर दिया गया, तो क्यों नहीं इस्लाम ने आज तक ईराक के अबू बकर अल बगदादी तथा उसके समर्थकों को इस्लाम के बाहर कर दिया? क्या अहमदिया मुसलमानों का आचरण बगदादी की अपेक्षा ज्यादा खराब था?

6654. जिस तरह इस्लाम विश्व व्यवस्था के लिए एक चुनौती बना हुआ

है, उससे भी कई गुना अधिक वह भारत के लिए एक बड़ी समस्या बना हुआ है।

6655. जिस गति से दुनिया में मुसलमानों की जनसंख्या बढ़ी, उससे भी ज्यादा तेज गति से भारत में इनकी आबादी बढ़ी, क्योंकि नेहरु, अम्बेडकर ने हिन्दुओं पर एक हिन्दू कोड बिल थोपकर मुसलमानों को इस कानून से मुक्त कर दिया।

6656. मन में एक सवाल उठता है कि एक ओर तो बंगलादेश अथवा पाकिस्तान निवासी मुसलमान भारत में चोरी-छिपे घुसने के लिए लगातार कोशिश करते रहते हैं और कश्मीर के अतिरिक्त शेष भारत का मुसलमान धक्का देने के बाद भी भारत से पाकिस्तान जाना नहीं चाहता तो कश्मीर के मुसलमान को पाकिस्तान के प्रति इतना प्रेम क्यों है? स्पष्ट है कि न उन्हें पाकिस्तान से मतलब है, न भारत से। उन्हें तो मतलब है भारत को दारुल हरब से हटाकर दारुल इस्लाम बनाने जैसा पुण्य कार्य में अपनी आहुति देकर जन्नत का रास्ता साफ करने मात्र से।

6657. इस्लाम की मूल संस्कृति में धर्म सबसे ऊपर है और राज्य धर्म के अंतर्गत। मुस्लिम शासन में व्यक्ति के मौलिक अधिकार नहीं होते, जबकि अंग्रेजी शासन में होते हैं। यही कारण रहा कि संघ परिवार ने मुस्लिम संस्कृति को भारत में अपना शत्रु माना और अंग्रेजी गुलामी को वैसा शत्रु नहीं माना। यही कारण है कि संघ परिवार ने स्वतंत्रता संघर्ष से दूरी बनाकर रखी तथा गांधी के हिन्दू मुस्लिम एकता के नारे का भी विरोध किया।

6658. स्वतंत्रता के छः-सात दशक बीतने के बाद भी भारत के मुसलमान न समाज को सर्वोच्च मानने को तैयार हुए न राष्ट्र को। मैं तो पूरी

दुनिया में और विशेषकर भारत में मुसलमानों के बहुमत का जो आचरण दूसरो के प्रति देख रहा हूं, वह चिन्ता जनक है।

6659. आम मुसलमान भी समझता है कि वे जिसे चाहेंगे, वही सत्ता में आयेगा और इसलिए भारत के मुसलमानों ने एकजुटता के बल पर अन्य धर्मावलंबियों को राजनीतिक अधिकारों के मामले में दूसरे दर्जे का नागरिक बना दिया।

6660. इस्लाम के वर्तमान स्वरूप के समापन की शुरूआत भारत से ही सम्भव है, क्योंकि भारत अकेला ऐसा देश है, जहां का मुसलमान अब भी दुविधा में हैं।

670 धर्म और संस्कृति

6700. वर्तमान भारत में धर्म हमेशा विज्ञान, विचार, मस्तिष्क नियंत्रित होता है तथा संस्कृति परम्परा, भावना और हृदय प्रधान होती है।

6701. जब कोई संस्कृति किसी विचारधारा के रूप में लंबे समय तक बढ़ती रहती है, तब वह पंथ बन जाती है। कोई पंथ कई सौ वर्षों तक टिक जाता है, तो वह सम्प्रदाय बन जाता है और जब ऐसा सम्प्रदाय हजारों वर्षों तक सफलतापूर्वक बढ़ता जाता है, तब वह अपने को धर्म कहना शुरु कर देता है।

6702. जब कोई व्यक्ति बिना विचारे बार-बार किसी काम को करता है, तो यह उसकी आदत मानी जाती है। यह आदत लंबे समय तक चलती रहे, तो उस व्यक्ति का संस्कार बन जाती है। यह संस्कार उस समुदाय के अधिकांश लोगों का हो जाये, तो यह उसकी संस्कृति बन जाती है।

6703. प्राचीन समय में दुनिया में दो संस्कृति मानी जाती थी, दैवी और

आसुरी। दोनों संस्कृतियां प्रवृत्ति तक विभाजित थी। बाद में दैवी संस्कृति में विभाजन हुआ, इनमें से एक सनातन संस्कृति बनी और दूसरी यहूदी। सनातन संस्कृति में से बौद्ध, जैन, सिख बने तो यहूदी से ईसाई और मुसलमान। सनातन और यहूदी संस्कृति से निकलने वाली संस्कृतियों ने धर्म का स्वरूप विकृत किया और धर्म को संगठनात्मक स्वरूप दिया। इन सबने स्वयं को धर्म कहना शुरू कर दिया, जिससे धर्म का अर्थ भी विकृत हुआ। धर्म में भी विभाजन हुआ – (1) गुण प्रधान, (2) पहचान प्रधान। हिन्दू आमतौर पर गुण प्रधान धर्म तक सीमित रहा। यहूदी भी गुण प्रधान धर्म को महत्व देते रहे। बौद्ध और सिख पहचान प्रधान बन गये। ईसाई आंशिक रूप से गुण प्रधान रहे और मुसलमान पूरी तरह पहचान प्रधान बन गये। हिन्दू संस्कृति को मानने वाला व्यक्ति गुण प्रधान धर्म के प्रति बहुत कट्टर होता है और पहचान प्रधान धर्म के प्रति सहिष्णु होता है। कालान्तर में सनातन संस्कृति को ही नाम बदलकर हिन्दू कहा जाने लगा। हिन्दू संस्कृति का मूल वर्णाश्रम व्यवस्था है। पूरी दुनिया में इतनी अच्छी व्यवस्था न कभी बनी न ही सोची गई।

671 धर्म और विज्ञान

6710. जो कुछ प्राचीन है वही सत्य है, ऐसा अंधविश्वास ठीक नहीं। जो कुछ प्राचीन है वह पूरी तरह असत्य है, ऐसी आधुनिकता भी ठीक नहीं। सत्य और असत्य का निर्णय विद्वानों को विचार-मंथन के द्वारा करना चाहिए।

6711. धर्म और विज्ञान को एक-दूसरे के निकट होना चाहिए। विज्ञान निष्कर्ष निकालता है और धर्म उस पर आचरण हेतु समाज को

प्रेरणा देता है। धर्म और विज्ञान की बढ़ती दूरी ही रूढ़िवाद का आधार है, वर्तमान में यह दूरी बढ़ रही है।

6712. धर्म और विज्ञान एक-दूसरे के पूरक हैं। "विज्ञान का आधार होता है तर्क और अनुसंधान, जबकि धर्म का आधार होता है श्रद्धा और विश्वास"। विज्ञान निष्कर्ष निकालता है और धर्म समाज तक पहुंचाता है। विज्ञान बुद्धि प्रधान कार्य है और धर्म भावना प्रधान आचरण। विज्ञान लंगड़ा है और धर्म अंधा। इसीलिए दोनों को एक-दूसरे का पूरक तथा सहयोगी माना जाता है। वर्तमान समय में इन दोनों के बीच संतुलन बिगड़ गया है।

6713. वर्तमान विश्व में विज्ञान आवश्यकता से अधिक भौतिकवाद की दिशा में जाता दिख रहा है और धर्म आवश्यकता से अधिक रूढ़िवादी अंधविश्वास की राह पर। धार्मिक संगठन तर्क को अनावश्यक सिद्ध करने में जी जान से जुटे हैं और वैज्ञानिक धार्मिक आस्थाओं पर चोट करने में शक्ति लगा रहे हैं। दोनों की राह गलत है।

6714. धर्म और विज्ञान के बीच बढ़ती दूरी सम्पूर्ण समाज में भ्रम पैदा कर रही है। ऐसा भ्रम बहुत नुकसान कर रहा है। प्रकृति के अनसुलझे रहस्यों को असत्य सिद्ध करना कोई बुद्धिमानी का काम नहीं। किन्तु विज्ञान ऐसा कर रहा है। दूसरी ओर आस्था पर टिकी जो अवैज्ञानिक धारणाएं असत्य या अनावश्यक प्रमाणित हो चुकी हैं, उन्हें जबरदस्ती भावनात्मक प्रचार द्वारा सत्य सिद्ध करना घातक ही है। धर्म लगातार ऐसा कर रहा है।

672 संस्कृति

6720. कोई व्यक्ति बिना विचार किये बार-बार किसी कार्य को करना शुरू

कर दे, तो लम्बे समय बाद वह कार्य उस व्यक्ति का संस्कार कहा जाता है और किसी समूह विशेष का बहुमत ऐसे संस्कार वालों का बन जाये, तो वह उस समूह विशेष की संस्कृति मान ली जाती है। संस्कृति के दो भाग होते है - (1) वाह्य, (2) परोक्ष या आन्तरिक। वाह्य संस्कृति में मुख्य रूप से खान-पान, भोजन, पहनावा, भाषा आदि का समावेश होता है, जबकि परोक्ष में स्वभाव, व्यवहार आदि अनेक बातें शामिल होती है। वाह्य संस्कृति का प्रभाव कम असर डालता है और आन्तरिक का गंभीर या दूरगामी।

6721. व्यक्ति को व्यक्तिगत, परिवार को पारिवारिक, गांव को गांव संबंधी, जिले को जिले संबंधी, प्रदेश को प्रदेश संबंधी और देश को राष्ट्रीय स्तर की समस्याओं के सामधान के निर्णय में अधिकतम स्वतंत्रता होनी चाहिए। यही लोकस्वराज्य है।

6722. पश्चिम दो मूल इकाई मानता है – (1) व्यक्ति, (2) समाज। भारत मानता है कि व्यक्ति और समाज के बीच परिवार भी एक स्वतंत्र इकाई के रूप में होनी चाहिए।

6723. व्यवस्था तथा संस्कृति एक-दूसरे के पूरक होते हैं। व्यवस्था का प्रभाव संस्कृति पर पड़ता है तथा संस्कृति का व्यवस्था पर। संस्कृति देश-काल परिस्थिति अनुसार बदलती रहती है, किन्तु यह बदलाव बहुत धीरे-धीरे स्पष्ट होता है।

6724. हिन्दू संस्कृति दुनिया की एकमात्र ऐसी संस्कृति है, जो बहुत पुराने समय से तथा लम्बे समय से अपनी व्यवस्था को बचाये हुए है।

6725. यह कहना गलत है कि आदिवासी क्षेत्रों का तीव्र विकास तो आवश्यक है, किन्तु उनकी मूल संस्कृति बिल्कुल कमजोर न हो। आज तक ऐसा कोई मार्ग निकला ही नहीं, जिसमें विकास तो हो किन्तु मूल संस्कृति में बदलाव न हो।

6726. भारत विभिन्न संस्कृतियों की नकल करने की अपेक्षा स्वतंत्र विचार-मंथन शुरु करे और दुनिया को दिखा दे कि भारत फिर से विचारों का निर्यात करने की स्थिति में है।

6727. दुनिया में मुख्य रुप से चार संस्कृतियों के लोग रहते हैं – (1) पाश्चात्य या इसाई, (2) इस्लाम, (3) साम्यवादी या अनीश्वरवादी, (4) भारतीय या हिन्दू। पाश्चात्य में व्यक्ति सर्वोच्च होता है, परिवार धर्म समाज, राष्ट्र गौण। इस्लामिक संस्कृति में धर्म सर्वोच्च होता है तथा परिवार, समाज, व्यक्ति, राष्ट्र गौण। साम्यवादी संस्कृति में राज्य मुख्य ईकाई होता है। परिवार, समाज, धर्म का अस्तित्व नहीं होता। भारतीय संस्कृति में सबका संतुलन होता है।

6728. दुनिया में मुख्य रुप से चार संस्कृतियों के अनुकरण में व्यवस्थाएं चलती हैं – (1) भारतीय संस्कृति, (2) पाश्चात्य संस्कृति, (3) इस्लामिक संस्कृति, (4) साम्यवादी संस्कृति। भारतीय संस्कृति में विचार-मंथन को विस्तार का माध्यम माना जाता है। इस्लामिक संस्कृति में संगठन शक्ति को, पाश्चात्य संस्कृति में धन को तथा साम्यवादी संस्कृति में वर्ग विद्वेष को।

6729. कुछ हजार वर्ष पूर्व दुनिया में दो संस्कृतियां प्रमुख थी – (1) भारतीय संस्कृति, (2) यहूदी संस्कृति। भारतीय संस्कृति में चार वर्ण और चार आश्रम को मुख्य आधार बनाया गया था, तो यहूदी संस्कृति में धन-सम्पत्ति मुख्य आधार थे।

6730. किसी भी संस्कृति की सुरक्षा और विस्तार के लिए चाणक्य नीति के अनुसार चार सूत्र महत्वपूर्ण माने जाते हैं – (1) साम, (2) दाम, (3) दण्ड, (4) भेद। साम का अर्थ सामंजस्य अथवा विचार-मंथन तथा दाम का अर्थ लोभ-लालच से माना जाता है। दण्ड और भेद का अर्थ स्वतः स्पष्ट है।

6731. वर्तमान में चार संस्कृतियां आपस में प्रतिस्पर्धित हैं – (1) भारतीय संस्कृति, (2) इस्लामिक संस्कृति, (3) पाश्चात्य संस्कृति, (4) साम्यवादी संस्कृति। भारतीय संस्कृति ब्राह्मण प्रधान संस्कृति मानी जाती है, क्योंकि इस संस्कृति में विचार-मंथन को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। इस्लामिक संस्कृति क्षत्रिय संस्कृति मानी जाती है। पाश्चात्य संस्कृति वैश्य तथा साम्यवादी संस्कृति का स्वभाव असामाजिक माना जाता है। इन चारों संस्कृतियों के अच्छे लोग क्रमशः तर्क, सुरक्षा, दान और सेवा का मार्ग अपनाते है और बुरे लोक कुतर्क, हिंसा, लोभ-लालच और वर्ग विद्वेष का सहारा लेते है।

6732. संस्कृतियों को अपनी-अपनी योग्यता और क्षमता के अनुसार आपस में सामंजस्य और प्रतिस्पर्धा करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। इसीलिए संस्कृतियों के बीच स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा में राज्य को कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

6733. दुनिया में प्रतिस्पर्धित चार संस्कृतियों में से हिन्दू संस्कृति के लोग विचार-मंथन को अधिक महत्व देते हैं, तो मुस्लिम या संघ संस्कृति के लोग शक्ति प्रयोग को। ईसाई या पाश्चात्य संस्कृति के लोग धन तथा वामपंथ साम्यवादी संस्कृति के लोग सिद्धांत रुप से वर्ग संघर्ष को ही मुख्य आधार बनाकर चलते हैं।

6734. वर्तमान पाश्चात्य संस्कृति अन्य संस्कृतियों की अपेक्षा अधिक यथार्थवादी है। देश-काल परिस्थिति अनुसार अपनी नीतियों में संशोधन करने में कभी सिद्धान्त आड़े नहीं आता। पूरी दुनिया में व्यक्ति के जो चार मूल अधिकार - "(1) जीने का, (2) अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का, (3) सम्पत्ति का, (4) स्व निर्णय का" हैं उनके प्रति इन देशों में कुछ अच्छी समझ है। ये व्यक्ति, परिवार और समाज के बीच संतुलन बनाने में परिवार और समाज की अपेक्षा

व्यक्तिवाद की ओर अधिक झुके हुए होते हैं। दूसरी संस्कृति के लोगों को अपनी बात समझाने में ये तर्क या हिंसा का सहारा न लेकर सेवा और प्रेम का सहारा लेना अधिक पसन्द करते हैं। इनकी जीवन-पद्धति में लोकतंत्र स्पष्ट दिखाई देता है। पाश्चात्य संस्कृति में कुछ कमजोरियां भी हैं। ये संख्या विस्तार के लिए धन का प्रयोग बुरा नहीं मानते। ये दूसरों को अपने पक्ष में करने के लिए धन का भरपूर प्रयोग करते हैं। ये परिवार प्रणाली को कमजोर करते जा रहे हैं। ये भौतिक प्रगति को मानसिक, आध्यात्मिक उन्नति की अपेक्षा बहुत अधिक महत्व देते हैं। इनमें अन्य देश या समाज की अपेक्षा कूटनीति बहुत अधिक पायी जाती है।

673 भारत की संस्कृति

6735. भारतीय संस्कृति में तीन प्रकार के भारतीयों की कल्पना की गई है– (1) धार्मिक, (2) सामाजिक, (3) राजनैतिक। तीनों के कार्य क्षेत्र और कार्य प्रणाली भिन्न-भिन्न होती है। धार्मिक हिन्दू आम लोगों को कर्तव्य की प्रेरणा देता है। सामाजिक हिन्दू आम लोगों को न करने योग्य कार्यों से दूर रहने हेतु प्रेरित करता है तथा राजनैतिक हिन्दू आम लोगों को न करने योग्य कार्य न करने हेतु मजबूर करता है।

6736. हिन्दू या भारतीय संस्कृति में सिर्फ शब्दों का फर्क है, अर्थ का नहीं। यह संस्कृति एक पूर्ण जीवन-पद्धति है, सिर्फ पूजा-पद्धति, शासन-पद्धति या संगठन नहीं। अन्य कोई भी संस्कृति सम्पूर्ण जीवन-पद्धति नहीं।

6737. व्यक्ति, परिवार और समाज को मिलाकर जो त्रिस्तरीय व्यवस्था है, उसमें अन्य संस्कृतियों की अपेक्षा विपरीत परिस्थितियों में भी अपने संरक्षण की विशेष शक्ति है। यही कारण है कि सैकड़ो

वर्षों की गुलामी के बाद भी तथा स्वतंत्रता के बाद अनेक विपरीत परिस्थितियों में होते हुए भी भारतीय संस्कृति अभी बची हुई है।

6738. पश्चिम की धारा का भारतीय संस्कृति की धारा से मेल नहीं बैठता, जिससे राष्ट्रीय जीवन में असंतुलन निर्मित होता है। पश्चिम की धारा यहां के जीवन-दर्शन, जीवन के मूल पर ही घातक प्रहार कर रही है।

6739. समाज में अहिंसा कायरता का पर्याय बन गई है। दो बातें भारतीय संस्कृति का आधार मानी जाने लगी हैं - (1) मजबूत से दबा जाये और कमजोर को दबाया जाये, (2) न्यूनतम सक्रियता और अधिकतम लाभ का मार्ग खोजा जाये। भारत दोनों दिशाओं में लगातार बढ़ रहा है।

6740. भारतीय संस्कृति में महत्वपूर्ण अंश तो हिन्दू संस्कृति का ही है, किन्तु धर्म निरपेक्ष शासन व्यवस्था होने से, इसमें इस्लाम और ईसाइयत का भी प्रभाव शामिल है, जो भले ही कम हो किन्तु है तो अवश्य ही।

6741. भारतीय जीवन-पद्धति में अपनी आस्था को किसी दूसरे पर बल पूर्वक नहीं थोपा जा सकता।

6742. धर्म और संस्कृति कुछ मामलों में एक-दूसरे के पूरक भी होते हैं और कुछ मामलों में अलग-अलग भी। धर्म दूसरे के प्रति किये जाने वाले हमारे कर्तव्य तक सीमित होता है, जबकि संस्कृति का प्रभाव दूसरों के प्रति किये जाने वाले कार्य पर निर्भर होता है, चाहे वह कार्य अच्छा हो या बुरा। इसका अर्थ है कि धार्मिक कार्य किसी प्रकार से बुरा नहीं होता है, लेकिन सांस्कृतिक कार्य अच्छा भी हो सकता है, बुरा भी।

6743. दुनिया में हिन्दू संस्कृति आज तक ऐसा कीर्तिमान बनाये हुए है कि वह किसी अन्य संस्कृति के व्यक्ति को किसी तरह अपने साथ शामिल करने का प्रयत्न नहीं करती।

6744. हिन्दू संस्कृति में वसुधैव कुटुम्बकम तथा सर्वधर्म समभाव का महत्व था। उस समय धर्म और राष्ट्र की तुलना में समाज को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता था। वर्तमान भारतीय संस्कृति एक मुख्य पहचान बना चुकी है कि मजबूत से दबो और कमजोर को दबाओ। इसका प्रमुख कारण है कि प्राचीन हिन्दू संस्कृति में संगठन का कोई महत्व नहीं था, जबकि वर्तमान भारतीय संस्कृति में सगठन को ही सबसे अधिक सफलता का मापदंड मान लिया गया है।

6745. हमारी प्राचीन हिन्दू संस्कृति में प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षा और न्याय की गारंटी थी, प्रत्येक व्यक्ति को मौलिक अधिकार प्राप्त थे। समाज किसी को भी अनुशासित तो कर सकता था, किन्तु दंडित नहीं कर सकता था। प्राचीन हिन्दू संस्कृति और वर्तमान भारतीय संस्कृति के सैद्धान्तिक गुण-दोषों की विवेचना करके उन्हें व्यावहारिक धरातल की कसौटी पर कसा जाना चाहिए।

6746. हिन्दू संस्कृति में वर्ण व्यवस्था का निर्धारण गुण कर्म स्वभाव के अनुसार होता है। चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र में से सिर्फ एक क्षत्रिय को ही हिंसा की सामाजिक स्वीकृति प्राप्त है। अन्य तीन के लिए हिंसा प्रतिबंधित है।

6747. सम्मान वापसी में साहित्य का प्रश्न गौण था और नई राजनैतिक व्यवस्था में बढ़ते साम्प्रदायिक हिन्दुत्व के सशक्तिकरण के विरोध में अधिक था। मैं स्पष्ट हूं कि भारत में तीन खतरनाक शक्तियों का

सशक्तिकरण घातक है – (1) वामपंथी संगठन, (2) साम्प्रदायिक इस्लामिक विचारधारा, (3) संगठित सावरकरवादी। भारतीय संस्कृति को छोड़कर किसी भी अन्य संस्कृति में चारों गुणों का सामांजस्य नहीं दिखता।

6748. दुनिया में भारतीय संस्कृति को सर्वश्रेष्ठ माने जाने का प्रमुख आधार-बिन्दु योग है। किसी अन्य संस्कृति को योग की न जानकारी है, न ही विश्वास।

6749. भारतीय संस्कृति संतुलित हिंसा की पक्षधर रही है। बुद्ध, महावीर और ईशु मसीह ने अतिवादी अहिंसा का पक्ष लेकर व्यवस्था को असंतुलित किया। हजरत मुहम्मद ने अतिवादी हिंसा का समर्थन करके उसे पलटने का प्रयास किया। दोनों ही गलत थे। भारतीय संस्कृति ही सही सिद्ध हुई है।

6750. भारतीय संस्कृति समाज और राज्य के सामंजस्य की पक्षधर है। समाज हृदय परिवर्तन पर जोर देता है तो राज्य कठोर दण्ड व्यवस्था पर। इस्लामिक संस्कृति इसके ठीक विपरीत समाज को भी हिंसा की छूट देती है और राज्य को भी। भारतीय संस्कृति नुकसान सह सकती है, कर नहीं सकती है। भारतीय संस्कृति मुख्य रुप से गुण प्रधान थी। लोग जिस तरह का धार्मिक आचरण करते थे, वैसी ही शिक्षा प्रारम्भ से ही बच्चों को दी जाती थी।

6751. भारतीय संस्कृति व्यक्ति, परिवार, समाज को स्वतंत्र अधिकार प्राप्त इकाई मानती है, तो पाश्चात्य संस्कृति व्यक्ति और समाज तक ही सीमित है।

6752. भारतीय संस्कृति विचार प्रधान, इस्लामिक संस्कृति संगठन प्रधान, पाश्चात्य संस्कृति धन प्रधान और साम्यवादी संस्कृति

उच्छृंखलता प्रधान मानी जाती है। संगठन में शक्ति होती है और धन में आकर्षण होता है।

6753. भारतीय संस्कृति में विचार प्रधान लोगों का बहुत अधिक सम्मान और आंख बंद करके अनुकरण था। कालान्तर में विचार प्रधान लोगों की कमी हुई और कुछ लोगों की नीयत खराब हुई। इसके परिणाम स्वरूप भारतीय संस्कृति का पतन शुरू हुआ, जो अब तक जारी है।

676 हिन्दू संस्कृति

6760. भारतीय संस्कृति विचार-मंथन के आधार पर निष्कर्ष निकालती है, इस्लामिक संस्कृति विचार-मंथन के स्थान पर बल प्रयोग का सहारा लेती है और पाश्चात्य संस्कृति विचार-प्रचार का।

6761. स्वदेशी का अर्थ स्वदेशी स्वशासन व्यवस्था और स्वदेशी संविधान से होना चाहिए न कि स्वदेशी वस्त्र, भाषा या पेय पदार्थ से। भारतीय संस्कृति स्वदेशी का अर्थ स्थानीय मानती है, राष्ट्रीय नहीं।

6762. भारतीय संस्कृति समाज और राज्य को बिल्कुल पृथक करके देखती है। इसने कभी संख्या बल को महत्व नहीं दिया। यहां तक कि पूरी दुनिया में यह अकेली ऐसी संस्कृति है, जिसने संख्या विस्तार में अपने प्रयत्न के दरवाजे एक तरफ बन्द कर रखे हैं, दूसरों के मामलो में हिन्दू संस्कृति ने आज तक उदारता का ही परिचय दिया है।

6763. हम हिन्दू संस्कृति के सिद्धान्तवाद को पश्चिमी संस्कृति के कठिन यथार्थवाद से जोड़कर अपनी राह बनायें। हिन्दुत्व को चाहिए कि धर्म को विज्ञान के साथ तालमेल करके भारतीय संस्कृति को आगे

बढ़ाने का काम करें। इसके लिए उचित होगा कि हम अनावश्यक कानूनों को समाप्त करके परिवार, गांव, जिले को अधिकतम अधिकार सौंप दें, तब सम्भव है कि हमारी भारतीय संस्कृति अपने कलंक से भी मुक्त हो जाये और कोई सम्मानजनक मार्ग निकाल ले।

6764. हिन्दू संस्कृति सदैव अपनी तर्क शक्ति के बल पर जीवित रही है, कानून या राज्य के सहारे नहीं।

6765. यदि वर्तमान भारतीय संस्कृति ने अपने में कोई बदलाव नहीं किया, तो हिन्दू संस्कृति अपना प्राचीन गौरवशाली इतिहास खो देगी और इस्लामिक संस्कृति को अपनी वास्तविक शक्ति का परिचय करा देगी। परिणाम अच्छा होगा या बुरा, यह तो अभी नहीं कहा जा सकता, किन्तु ऐसा होता हुआ स्पष्ट दिख रहा है।

6766. संस्कार और संस्कृति एक ही अर्थ में होते हैं। संस्कार व्यक्ति का होता है और संस्कृति समूह की।

6767. संस्कृति और संस्कार का अपना महत्व है, किन्तु संस्कृति और संस्कार विचारों से ऊपर स्थान नहीं रखते।

677 धर्म और अच्छे लोग

6770. कार्य तीन प्रकार के होते हैं - पहला वे जिन्हें मनुष्य को करना चाहिए, दूसरे वे जिन्हें मनुष्य को नहीं करना चाहिए, तीसरे वे जिन्हें मनुष्य को करने नहीं दिया जाएगा। पहले प्रकार के कार्य सामाजिक कार्य के रूप में माना जाता है। दूसरे प्रकार के कार्य असामाजिक की श्रेणी में आते हैं। तीसरे प्रकार के कार्य समाज विरोधी माने जाते हैं। पहले प्रकार के कार्य को उत्तम कहा जाता है। दूसरे प्रकार के कार्य अनैतिक कहे जाते हैं तथा तीसरे प्रकार

के कार्यों को अपराध कहा जाता है। धर्म का कार्य है पहले प्रकार के कार्य को प्रोत्साहित करना। समाज का काम है दूसरे प्रकार के कार्य को निरूत्साहित करना तथा राज्य का काम है तीसरे प्रकार के कार्य को कुचल देना।

6771. अच्छे-अच्छे लोग भी असामाजिक और समाज विरोधी या अनैतिक और अपराध या गैर कानूनी और अपराध का अन्तर नहीं समझ पाते और यह नासमझी ही उन्हें भ्रमित करती रहती है, जिस भ्रम का दुष्प्रभाव सम्पूर्ण समाज पर पड़ता है।

6772. क्या यह अच्छा नहीं होगा कि हम दो प्रतिशत अच्छे लोग 96 प्रतिशत बीच वालों को मिलाकर बहुसंख्यक बन जायें तथा दो प्रतिशत अपराधियों को बदलाव हेतु मजबूर कर दें। इस धारणा में आपको क्या कठिनाई है? जो लोग धर्म के आधार पर कानून बनाकर बहुसंख्यक सिद्ध होना चाहते हैं, वह मुस्लिम परंपरा है जो पाकिस्तान सहित कुछ देशों में आज भी कायम है।

678 गाय, गंगा और मंदिर

6780. गाय, गंगा, मन्दिर हिन्दुओं की आस्था के केन्द्र हैं। इनका राजनैतिक उपयोग ठीक नहीं। यदि हिन्दुत्व और हिन्दू रहेगा तो गाय, गंगा, मन्दिर का अस्तित्व सुरक्षित रहेगा। यदि हिन्दुत्व और हिन्दू ही कमजोर पड़ा तो गाय, गंगा, मन्दिर का अस्तित्व खतरे में है। गाय, गंगा, मन्दिर की अपेक्षा हिन्दू और हिन्दुत्व की चिन्ता करनी चाहिए। यदि गाय, गंगा, मंदिर बच गये और हिन्दुत्व नहीं बचा तो ये गाय, गंगा, मंदिर हिन्दू विरोधियों के काम आयेंगे।

6781. जो मित्र गाय, गंगा, मंदिर के नाम पर कट्टरपंथी इस्लाम से टकराने के पक्षधर हैं, वे भूल रहे हैं कि भावनात्मक मुद्दों पर टकराव

टिकाऊ नहीं हो सकता। गाय, गंगा और मंदिर आंदोलन कुछ लोगों के अहम की तुष्टि भले ही कर दे, लेकिन दुनिया में भारतीय जीवन-पद्धति अथवा हिन्दू धर्म का सिर ऊंचा नहीं हो सकेगा।

6782. मंदिर एक बहुउद्देश्यीय सार्वजनिक स्थान है। भावना प्रधान लोगों के लिए वह आस्था का केन्द्र होता है और विचार प्रधान लोगों के लिए चिन्तन का। मेरे विचार में मंदिर संबंधी व्यवस्था में अंतिम निर्णय करने का अधिकर न तो सम्पूर्ण समाज का है, न ही सरकार का। यह तो ट्रस्ट निर्णय कर सकती है या स्थानीय हिन्दू समाज।

6783. हिन्दुत्व की वास्तविक शक्ति "विचार-मंथन" का स्थान गाय, गंगा ने ले लिया, जो उचित नहीं। विचार-मंथन ही हिन्दुत्व के विस्तार का महत्वपूर्ण आधार है।

6784. भारतीय संस्कृति में निरंतर गिरावट आ रही है। गुण प्रधान हिन्दुओं की संख्या लगातार घट रही है और गाय, गंगा, मंदिर विरोधियों की संख्या बढ़ रही है। यदि हिन्दुओं की संख्या घटती गई तो गाय, गंगा, मंदिर भी नहीं बचेगा। किन्तु यदि हिन्दू और हिन्दुत्व बच गया तो गाय, गंगा, मंदिर खत्म होने के बाद भी फिर से विस्तार पा सकते हैं।

6785. परम्पराएं जब रुढ़िवाद में बदल जाती हैं, तब घातक होती हैं। ऐसी रुढ़ियों के आधार पर जब कोई संगठन बन जाते हैं, तो ऐसे संगठन समाज के समक्ष समस्या बन जाते हैं।

6786. गाय यदि हमारी माता है तो हम गाय की खरीद बिक्री कैसे करते हैं? इसलिए यथार्थ को भावनाओं के साथ जोड़कर कोई कानून बनाना इस्लामिक परंपरा है, हिन्दुत्व की नहीं।

679 आस्तिक-नास्तिक, ईश्वर

6790. जो लोग ईश्वर के अस्तित्व को मानते हैं, वे आस्तिक और जो नहीं मानते वे नास्तिक कहे जाते हैं।

6791. ईश्वर है या नहीं, यह अब तक प्रमाणित नहीं है। तर्क प्रधान लोग ईश्वर पर कम विश्वास करते हैं और आस्था प्रधान अधिक। तर्क प्रधान लोग ईश्वर के अस्तित्व को न मानते हुए भी सबको ईश्वर पर विश्वास कराते हैं, क्योंकि समाज के सुचारू संचालन के लिए ईश्वर पर विश्वास आवश्यक है। ये धर्मगुरू दर्शनशास्त्र का अधिक अध्ययन करते हैं और उपनिषद तथा पुराणों के माध्यम से लोगों को ईश्वर पर विश्वास कराते हैं।

6792. ईश्वर का अस्तित्व है, किन्तु यदि न भी हो तो समाज के सुव्यवस्थित संचालन के उद्देश्य से ईश्वर का अस्तित्व स्वीकार करना उचित है। ईश्वर है या नहीं, इस बात पर तर्क नहीं करना चाहिए।

6793. मेरे विचार में जब प्रकृति की अधिकतम और न्यूनतम शक्ति मनुष्य की कल्पना से भी ऊपर हो जाये, तो ईश्वर का अस्तित्व मान लिया जाता है, चाहे हो या न हो।

679 आध्यात्म

6794. आध्यात्म व्यक्ति को गंभीर चिन्तक, सूक्ष्म अन्वेषण में सक्षम, एकान्त प्रिय, निष्क्रिय, अव्यावहारिक, उच्च सिद्धान्तवादी दिशा देता है। आध्यात्म व्यक्ति को भोग से दूर त्याग की दिशा में बढ़ता है। आध्यात्म की लाईन भौतिक रुप में बहुत कठोर परीक्षा खोजती है।

680 ज्ञान यज्ञ, ज्ञान तत्व

6800. ज्ञानहीन सक्रिय लोग ज्ञानवानों से ही मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं, यही

हमारी परम्परा रही है। भारतीय लोकतंत्र में संविधान का शासन न होकर शासन का संविधान हो गया, जिसमें शासक एक व्यक्ति न होकर एक व्यवस्था का हुआ अर्थात् जनता शासक को चुन सकती है, किन्तु चुने जाने के बाद वह सर्वाधिकार सम्पन्न होगा और उस पर जनता का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। मेरे विचार से भारतीय संविधान में जब तक संविधान संशोधन के अधिकार में लोक और तंत्र की मिली-जुली भूमिका का कोई प्रावधान नहीं होता, तब तक यह संविधान हमारे समाज के लिए घातक है। यह बात ज्ञानवानों द्वारा सक्रिय लोगों के माध्यम से ज्ञानहीनों तक पहुंचाने की आवश्यकता है।

6801. राज्य और समाज के बीच शक्ति संतुलन मालिक और गुलाम सरीखा हो गया है। सब प्रकार के धूर्त राज्य के साथ निरंतर जुड़ने का प्रयास कर रहे हैं तो सभी शरीफ समाज के साथ इकट्ठे हो रहे हैं। राज्य सुरक्षा और न्याय न देकर भौतिक उन्नति को अधिक महत्व दे रहा है। सुरक्षा और न्याय की परिभाषाएं बदली जा रही हैं। मानवाधिकार के नाम पर अपराधियों को विशेष सुरक्षा दी जा रही है तो न्याय के नाम पर कमजोरों और मजबूतों के बीच टकराव बढ़ाया जा रहा है। यह सारी स्थिति बहुत खतरनाक है, लेकिन तंत्र इस बात को समझने के लिए तैयार नहीं है, इसलिए हम सब का कर्तव्य है कि इस संबंध में आम नागरिकों तक यह बात पहुचायें। ज्ञान यज्ञ इसका उचित माध्यम हो सकता है।

6802. राज्य पूरी शक्ति से वर्ग समन्वय को समाप्त करके वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष और वर्ग संघर्ष को प्रोत्साहित कर रहा है। धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रियता, उम्र, लिंग, गरीब, अमीर, किसान, मजदूर, शहरी,

ग्रामीण आदि के नाम पर समाज में अलग-अलग संगठन बनाकर राज्य उनमें वर्ग विद्वेष का कार्य योजनाबद्ध तरीके से कर रहा है। शिक्षा को योग्यता का विस्तार न मानकर रोजगार के अवसर के रूप में बदलने का लगातार प्रयास हो रहा है। परिणाम हो रहा है कि शिक्षा और श्रम के बीच असंतुलन बढ़ता जा रहा है। वर्तमान समय में इसके समाधान की शुरुआत ज्ञान यज्ञ और विचार-मंथन के द्वारा हो सकती है।

6803. प्राचीन समय में ज्ञान और त्याग को अधिक सम्मान प्राप्त था। मध्यकाल में राजशक्ति और धनशक्ति ने ज्ञान और त्याग को प्रतिस्पर्धा से बाहर कर दिया। दस वर्ष पूर्व तक भारत में गुण्डा शक्ति सर्वोच्च स्थान पर थी, जो अब कमजोर हो रही है। मुझे तो पूरा विश्वास है कि ज्ञान यज्ञ के माध्यम से हम समाज सशक्तिकरण की दिशा में तेजी से कदम बढ़ा सकेंगे और समाज सशक्तिकरण अनेक समस्याओं का समाधान करने में सफल होगा।

6804. ज्ञानतत्व का उद्देश्य ‘‘सोशियो पॉलिटिकल’’ अर्थात् समाज और राजनीति को मिलाकर विचार-मंथन को प्रोत्साहन करना है। ज्ञानतत्व चाहता है कि समाज और राज्य के बीच इस समय जो असन्तुलन है, वह असन्तुलन दूर हो।

6805. धूर्तता, हिंसा, स्वार्थ जैसे अवगुण सम्पूर्ण भारत में एक समान ही बढ़ रहे हैं। यह अलग बात है कि वर्तमान में गांवों की अपेक्षा शहरों में यह बीमारी अधिक दिख रही है, किन्तु यह भी सच है कि आज से 50-60 वर्ष पूर्व भी यह बीमारी गांवों की अपेक्षा शहरों में ज्यादा थी।

6806. हमारा उद्देश्य समाज सुधार नहीं है, बल्कि भारत की राजनीति ने समाज को गुलाम बनाकर रखा है, उससे समाज को मुक्ति दिलाना है। हमें दोनों दिशाओं में एक साथ काम करना होगा। एक लोकस्वराज, दूसरा समाज सशक्तिकरण। इसीलिए हम समाज सशक्तिकरण की ही बात नहीं कर रहे, बल्कि राज्य कमजोरीकरण की भी बात कर रहे हैं।

6807. सच्चाई यह है कि जितनी तेज गति से राजनीति समाज का चरित्र पतन कर रही है, उसकी अपेक्षा चरित्र निर्माण की गति बहुत कम है। भारत का संविधान चरित्रहीन राजनेताओं की ढाल बना हुआ है। जब तक भारतीय संविधान पर राजनेताओं की अपेक्षा समाज का नियंत्रण नहीं बढ़ेगा, तब तक यह श्रमजीवियों की ढाल बनी ही रहेगी।

6808. ज्ञान यज्ञ सिर्फ एक ही दिशा में सक्रिय रहता है कि पूरी दुनिया में जो असत्य सत्य के समान प्रचलित और स्थापित है, उसे विचार-मंथन के द्वारा चुनौती दी जाये। जब तक दुनिया में आ रहे सत्य को तर्क और विचार मंथन के द्वारा सत्य सिद्ध नहीं किया जायेगा, तब तक समाज की समस्याएं कम नहीं होंगी ज्ञान यज्ञ इस कार्य को लगातार कर रहा है। ज्ञान यज्ञ बुद्धि और भावना के समिश्रण का व्यायाम मात्र है। ज्ञान यज्ञ श्रद्धा, तर्क और आत्मविश्वास को मिलाकर अपने साथ जुड़ने वाले लोगों को इतना बौद्धिक स्तर पर मजबूत कर देता है कि वह जीवन में आसानी से ठगे ना जायें।

6809. ज्ञान यज्ञ का उद्देश्य अपने स्वयं के ज्ञान के तत्व का विस्तार और आधार है, मानसिक व्यायाम जिसका मतलब है विभिन्न विषयों पर स्वयं विचार-मंथन करके निष्कर्ष निकालने की आदत डालना।

681 ज्ञान यज्ञ परिवार

6810. याद रखिये कि वर्तमान में बुद्धिजीवी निर्माण के सिर्फ दो ही केन्द्र भारत में हैं – (1) जेएनयू, (2) ज्ञान यज्ञ परिवार। जेएनयू आतंकवादी, उग्रवादी, तानाशाह तैयार करता है, तो ज्ञान यज्ञ परिवार आप जैसे लोकस्वराज्य समर्थक बुद्धिजीवी। जेएनयू एक तूफान के समान स्थापित है तो ज्ञान यज्ञ परिवार दीपक के समान टिमटिमाता हुआ। जेएनयू को विश्व व्यापी समर्थन है, तो ज्ञान यज्ञ परिवार को मात्र एक ज्ञान तत्व पाक्षिक पत्रिका का। फिर भी इतना संतोष है कि विभिन्न कारणों से ज्ञान यज्ञ परिवार एक से दो तीन की दिशा में बढ़ रहा है, तो जेएनयू निन्यान्नवे से अट्ठान्नवे संतान्नवे की ओर।

❒